एक

माँ भागीरथी के किनारे-किनारे चौर में झाऊ और घास के जंगल। उन्हीं जंगलों में देवदारु के बड़े-बड़े पेड़। सरपत, कगाल और भंग के पौधों की घनी झुरमुटें। आदमी की ऊँचाई से भी ऊँची। उन्हीं में गंगा की धारा से अलग नाना आकार धारण करते हुए आँका-बाँका हिजल बिल निकल गया है। कोसों लंबा। बरसात में यह हिजल बिल चौड़ा और गहरा फैल जाता है। जाड़ों में उसका पानी घट जाता है, गंगा के खिंचाव से पानी खिंच जाता है, धूप से सूख जाता है। उस वक्त बिल टुकड़ों में बँट जाता है। हिजल बिल से मानो हार जाकर गंगा में मिल गया है, बरसात के बाद से बिल के उन अलग-अलग टुकड़ों को देखकर लगता है, उस हार में गुँथे दाने मणियों की दमक है। उस समय बिल के पानी का रंग काजल-काला हो जाता है, उस पानी पर नीला आसमान स्थिर हो जाता है, गोया सो रहा हो। चारों ओर के घासवन में उस समय सफेद फूल फूल उठते हैं। सफेद पंखों जैसे कगाल और सरपत के फूल, ढेरों, बेशुमार। दूर से लगता है शरत् के सादे मेघों का समूह मानो हिजल बिल के किनारे उतर आया है—उसके उस घने काले रंग को, बरसात में जो गल-गलकर घुल-घुलकर वहाँ जमा हो गया है, फिर से लौटा ले जाने के लिए बिल के किनारे इंतजार कर रहा है बैठा-बैठा। बीच-बीच में हिजल बिल की बयार अनोखी सुगंध से महमहा उठती है। पास ही गंगा में नावें चलती रहती हैं, उन नावों के माझी-मल्लाह पीढ़ियों से जानते हैं कि वह सुगंध कहाँ से आ रही है। उनके जी में कोई सवाल ही नहीं उठता। कुछ बोलते भी नहीं वे—नाक में सुगंध के घुसते ही वे सिर्फ हिजल बिल के घासवन की तरफ ताककर एक बार ताक लेते हैं। नाव पर मुसाफिर होते हैं तो वही पूछ बैठते हैं—यह कैसी

खुशबू कहाँ से आ रही है, जी ? आः।

माझी फिर बिल के घासवन की ओर एक बार निहार लेता है। कहता है—हिजल बिल के घासवन से, बाबू। घासवन के अंदर कहीं जंगली लता या झाड़ी-झुरमुटों में फूल खिले होंगे।

हिजल बिल की पुकार सिर्फ गंध की ही नहीं, शब्द की भी है। बिल में अजीब-अजीब कल-कल शब्द उठते हैं।

नाव के मुसाफिर सोए होते हैं तो उस आवाज से टूट जाती है उनकी नींद। वह आवाज जैसी तीखी होती है, वैसी ही अजीब भी होती है। उस ऊँची आवाज को कभी-कभी और ऊँची करके आकाश में मानो भेरियाँ बज उठती हैं—कर् कर् कर् कर् कर्। भेरियों जैसी वह आवाज हिजल बिल के आकाश में दिशा-दिशा में फैल जाती है। मुसाफिर जगकर हैरान-से ताकने लगते हैं, क्या हो गया ? यह भेरी कौन बजाने लगा, कहाँ ? सचमुच हाँ क्या भेरी बज रही है ? कौन बजा रहा है ? मुसाफिर के अचरज का अंदाज करके हँसते हुए रात के आकाश की ओर ताककर माझी कहता है—पंछी है बाबूजी, 'गगन-भेरी' पंछी। वह देखिए, वह। वहाँ उड़ा जा रहा है। वह, बहुत बड़ा-सा पंछी अपने विशाल डैने फैलाकर आसमान में उड़ा जा रहा है। आवाज उसकी भेरी जैसी है, इसीलिए उसे 'गगन-भेरी' पंछी कहते हैं। गरुड़ के वंशज है ये। गरुड़ 'लछमीनरायन' को पीठ पर लिए आसमान में उड़ते हैं और उनके ये वंशज कंठ से भेरी बजाते हुए आगे-आगे चलते हैं। यह सब माझी ही मुसाफिरों को बताते हैं। यह दिव्य संवाद उन्हीं लोगों को मालूम है। नीचे और-और चिड़ियाँ भी बोल उठती हैं। देवता के आविर्भाव से वे भी पुलकित हो उठती हैं।

कातिक आते न आते बिल में बतखों का मेला लग जाता है, हजार-हजार की तादाद में, नाना रंग, नाना आकार की बतखें झुंड के झुंड आ जुटती हैं, पानी पर तैरती हैं, डुबकी लगाती हैं, फिर ऊपर आ जाती हैं। बिल के चारों तरफ पानी में उगे लता-पौधों की शाखा को चोंच से तोड़-तोड़कर खाती हैं, डुबकी लगाकर सीपी-घोंघे चुनती हैं, फिर किचकिच करती हैं; रह-रहकर उड़ते हुए चक्कर लगाती हैं, फिर झप से पानी पर उतर आती हैं, तैरने लगती हैं। बहुत जात की बतखों की एक

साथ मिली-जुली आवाज—कल-कल-कल-कल, कॅंक-कॅंक, क्याउ-क्याउ। उसी के साथ करं-कर् की भेरी-ध्वनि।

नाव के मुसाफिर आश्चर्य से आसमान की ओर ताकने लगते हैं और उस विचित्र संगीतमय शब्द को सुनकर देखते हैं कि आसमान को ढापकर पक्षियों का झुंड उड़ रहा है।

—उफ्, इतनी चिड़ियाँ!

—यह हिजल बिल है, बाबू। । वह रहा, झाऊ और घास के जंगल के उस पार। ये सारे नाले देख रहे हैं न, सब वहीं से आते हैं, उसी बिल से। जो शिकारी होते हैं, सुना जाते हैं। फूलों के प्रेमी डोंगे उठते हैं।

—शिकार को जाया जा सकता है!

—उस फूल का पौधा नहीं मिल सकता, माँझी?

माँझी सिहर उठते। कपाल से हाथ लगाकर प्रणाम करते।

—ऐसी बात जबान पर भी न लाएँ, बाबूजी। यम का दक्खिन दरवाजा, यही हिजल बिल है।

बात बिलकुल सही है। इसमें नमक-मिर्च जरा भी नहीं। हिजल के घासवन और पानी के नीचे मौत की बस्ती ही है।

रात को यह बात समझाकर कहने की जरूरत नहीं होती। रात को जब नाव उस घास के जंगल के किनारे-किनारे चलती है, तो मुसाफिर खुद ही इस सत्य का अनुभव करते हैं। चाँदनी रात है। समझिए, बिल के माथे पर आसमान में चाँद, नीचे पानी की गहराई में चाँद। सरपत और कसान का जंगल सादे फूलों से झलमला रहा है, झाऊ के पेड़ की चोटी और देवदारु के पत्ते झिलमिल कर रहे हैं। निशाचर पक्षियों की पुकार की प्रतिध्वनि समवेत संगीत-सी आकाश में गूँज रही है, हवा फूलों की खुशबू से महमह कि सब कुछ को चौंका कर एक आवाज उठी—फे-उ। सारा बदन सिहर उठा।

पल के विराम के बाद फिर—फेउ, फेउ!

फिर—फेउ, फेउ।

और सन्नाटे में पड़े घासवन का कोई हिस्सा जोरों से हिल उठा। पानी में जब मगर घूमता है, पूंछ का झटका मारता है, तो पानी में जैसी घुमड़ उठती है, उथल-पुथल मच जाती है, हिजल के घासवन में वैसी ही उथल-पुथल-सी हो जाती है और उस आलोड़न के साथ ही एक दबे क्रोध की गरज सुनाई पड़ती है—गर्र, गर्र ! फेंस ! गर्र-गों···ों !

चालाक और खतरनाक चीतों का आवास है यहाँ का घास-वन, भंग की झाड़ियां और देवदारु की पाद-भूमि ! रात को चीते निकलते हैं। उनके पीछे चलती है यह फेउ की आवाज, उस आवाज से चिढ़ा हुआ चीता पूंछ पटककर धीमा गरज उठता है, डाँटता है—गर्र-गर्र ! कभी-कभी जोर से भी गरज उठता है—आं···क ! आं ! और गरज के साथ ही एक छलांग ! चाँदनी में औचक ही उसकी धब्बेदार पीली पीठ दिख जाती है।

बिल के पानी के किनारे काला-सा कुछ मुंह उठाए, कान खड़े किए चौकन्ना-सा साधा खड़ा हो जाता है। गरजता है—गों-गों-गों। कभी-कभी घुटते गुस्से से अधीर होकर उस आवाज की ओर दौड़ पड़ता है, कभी-कभी भाग भी जाता है। ये हैं बनैले सूअर। पानी के किनारे जलज उद्भिद के कंद खोद-खोदकर खाते हैं। बाघ की गरज से वे भी चंचल हो उठते हैं।

डर लेकिन इनसे नहीं है। चीते और बनैले सूअर भाले-बरछे से मारे जा सकते हैं। इस तरफ के ग्वाले, खेतिहर जवान झुंड बनाकर खूंखार चीतों और बनैले सूअर को खोज-खोजकर मार डालते हैं। लेकिन बाघ-सूअर से भी डरावना कुछ और है। ये बाघ-सूअर भी उनके डर से संत्रस्त रहते हैं। घास के जंगल में पतली लकीर-से रास्ते पर जब वे चलते होते हैं, तो उनकी नजरों में सहसा ही साक्षात मृत्यु के हमले का खौफ नाच उठता है। हलकी-सी आवाज पर ही वे ठिठक जाते हैं, कान खड़े करके सुनते हैं, धीमे-धीमे गरजते हैं। जाने कहाँ से—शायद हो कि झाड़ की किसी डाल पर से, या कि देवदारु के पत्तों की भीड़ से या घने घासवन के ऊपर फैले लता-जाल से सिसकारते हुए चाबुक की तरह एक लंबी डोरी उनके बदन पर आ गिरती है—आंखों के सामने लपलप करती उसकी चीरी हुई जीभ डोल उठेगी, लमहे में आग में तपी सूई-सी कोई पतली-सी

चीज चुभ जाएगी; चुभते ही सिर से पाँव तक शरीर की शिरा-स्नायु में बिजली खेल जाने की अनुभूति दौड़ जाएगी, धरती डोलने लगेगी, सारा शरीर झिम-झिम करने लगेगा। उसके बाद कुछ सोच नहीं सकता, मारे डर के कुछ कदम पीछे हट जाएगा।

हिजल बिल में मनसा मैया[1] का आसन है। हिजल बिल के पदुम वन में उन्होंने बसेरा बाँधा है। उन्होंने चाँद सौदागर के सात जहाजों को समुद्री तूफान में डुबाकर यहीं लाकर छिपा करके रखा था। वृन्दावन के कालीदह का नाग कन्हैया के दिए दंड को सिर-आँखों उठाए यहीं आकर रह गया है। नाग ने कन्हैया से कहा था—प्रभो, आपने तो मुझे इस दह से निर्वासित किया, मगर मैं जाऊँ कहाँ? कन्हैया ने कहा—देखो, भागीरथी के किनारे हिजल बिल है। वहाँ न आदमी है, न आदमजाद। वहीं जाकर रहो। यकीन न आए, तो बरसात की बाढ़ से जब हिजल और गंगा एकाकार हो जाते हैं, तो नाव पर सवार होकर हिजल के चारों ओर घूमकर एक बार देख लीजिए। पानी और पानी, पानी और पानी! उत्तर-दक्खिन, पूरब-पच्छिम, किसी भी ओर पानी के सिवा और कुछ नजर नहीं आता। पानी के ऊपर उभकती होती हैं झाऊ और देवदारु की चोटियाँ। आसमान में उड़ते पंछियों का झुंड। उड़ रहे हैं तो उड़ ही रहे हैं। डैने थककर भारी हो आए हैं पर पानी से ऊपर झाँकती पेड़-पौधों की उन फुनगियों पर नहीं बैठते। कभी-कभी खूब थककर वे उन फुनगियों के पास चक्कर काटकर निराशा में मातमी रोना रो उठते हैं। फिर उड़ चलना चाहते हैं। क्यों, मालूम है? आप जरा पौधों की उन चोटियों की ओर पैनी निगाह से देखिए। आपका सारा बदन सिहर उठेगा। शायद हो कि डर से आप ढुलक पड़ें। मनसा मैया की व्रत-कथा में बनिया की बेटी ने माता की जो दक्षिणमुखी मूर्ति देखी थी, वही मूर्ति याद हो आएगी। बनिया की बेटी से देवी ने कहा था, 'देखो, हर तरफ देखना, मगर दक्खिन की तरफ हरगिज मत ताकना! मगर नागलोक से धरती पर आने समय वह दक्खिन की ओर ताके बिना न रह सकी। ताका कि लुढ़क पड़ी। मनसा मैया देवी विषहरी की

---

१. साँपों की देवी।

भयावनी मूर्ति धारण किए मौत की नगरी के अँधेरे तोरण के सामने अजगर की कुंडली के पद्मासन पर बैठी हैं—पहनावे में रक्तांबर, माथे पर पिंगल जटाजूट, पिंगल नाग उनके माथे पर जटा बने डोल रहे थे—सर्वांग में साँपों के गहने। माथे पर गेहुँअन ने अपने फन का छाता फैला रखा है, मणिबंध में चित्ती साँप का वलय, शंख साँप का बना शंख, बाहों में मणि-नाग के बाजूबंद; गले में हरे पन्ने की कंठी-सा लिपटा मुगिया साँप, गले में काल नागिन की अपराजिता की माला, कानों में तक्षक के बाले, कमर में चन्द्रबोड़ा का चन्द्रहार, पाँवों में सुनहले पतले एक प्रकार के साँप की बिछिया; साँपों के ही चँवर, उन्हीं चँवरों को भलती हुई विष-बयार दे रही हैं नाग-कन्याएँ। उस जहरीली हवा से मैया की आँखें ढुल-ढुलकर रही हैं। उनके कंधे पर है विषघट; उस विषघट से शंख में ढाल-ढालकर विष पी रही हैं और उसी विष को फिर गल-गलाकर उगलती हुई विषकुंभ को भर रही हैं। उनकी पीठ के पीछे मृत्युपुरी का गहरा अँधेरा थम-थम कर रहा है।

उन पेड़-पौधों की ओर ताकने से आप इसी रूप को देखेंगे। देखेंगे, पेड़ की सबसे ऊँची डाल पर लिपटा फन फैलाए विशाल कोई दूधिया गेहुँअन फुफकार रहा है। गिद्धों के झपट्टे से जूझने के लिए वह हर पल तैयार है। उसके बाद दूसरी डालों पर नजर डालिए। देखिएगा, गाँठ-गाँठ से लिपटे क्या सब तो हिल रहे हैं, डोल रहे हैं—कभी-कभी सिर उठा रहे हैं। साँप—सब साँप ! हिजल का वासवन बाढ़ में डूब गया है और साँप पानी के ऊपर उठी डालों पर जा चढ़े हैं। जाने कितने काले नाग—कहाँ-कहाँ से गंगा के पानी में बहकर जाते-जाते हिजल के झाऊ और देवदारु की डाल पर धीरे-धीरे चढ़ गए हैं। खूब होशियार ! पानी में चारों ओर चौकन्नी नजर रखिए, हो सकता है बहते जाते हुए साँप छप् से नाव के किनारे चढ़ जाएँ। पेड़ों के किनारे से बचकर चलिए, शायद हो कि टप् से ऊपर से नाव पर आ रहे साँप ! हो सकता है, माथे पर ही गिरे। और माथे पर साँप काट ले, तो फिर धागा कहाँ बाँधोगे ?

हिजल बिल में मनसा मैया का आसन है, यह जनश्रुति झूठ नहीं। पुरनिए कविराज शिवराम सेन हिजल की कहानी कहते हैं।

उस जमाने में जिनकी धनवंतरि के वंश में पैदा होने की शोहरत थी, उन धूर्जटी कविराज के शिष्य थे शिवराम सेन। धूर्जटी को लोग साक्षात धूर्जटी यानी आयुर्वेद में शिव के समान पारगत कहा करते थे लोग। उनका 'सूचिकाभरण' मरे हुए के शरीर में भी गरमाहट ला देता था। लोग कहते, मौत ने आकर अपना हाथ बढ़ाया है—ऐसे वक्त भी धूर्जटी कविराज के 'सूचिकाभरण' का उपयोग किया जाता तो मौत कई कदम पीछे हट जाती, कुछ क्षण या कई दिनों के लिए अपने बढ़े हाथ समेट लेती। नियति को नहीं मेटा जा सकता, कविराज कभी उसकी चेष्टा भी नहीं करते, लेकिन खास स्थिति में अपने 'सूचिकाभरण' का प्रयोग करके मौत से कहते—रुको, कुछ समय इंतजार करो।

'भेंट करने के लिए इसकी स्त्री आ रही है, उसकी आखिरी भेंट तक का इंतजार करो।' ऐसे ही मौकों पर वे सूचिकाभरण का प्रयोग करते थे, और वह प्रयोग कभी निष्फल नहीं गया। 'सूचिकाभरण' साँप के विष से तैयार होने वाली दवा है और सूई की नोक पर जितनी आ जाय, वही उसकी मात्रा है। आयुर्वेद-विद्या से मौत की शक्ति का शोधन करके उसे मृत्युजयी सुधा बना देते थे। कोशिश सभी कविराज करते हैं, लेकिन उनका सूचिकाभरण अनोखा था। धूर्जटी में साँप की पहचान थी, साँप को देखकर वे उसके विष की शक्ति समझ सकते थे।

हिजल की ही नाग-नागिन के विष से वे सूचिकाभरण बनाते थे। शिवराम सेन सुनाते—उस समय मेरी उम्र सत्रह-अठारह की थी। तर्क पंचानन की संस्कृत पाठशाला से व्याकरण समाप्त करके आयुर्वेद-शिक्षा के लिए मैं धूर्जटी कविराज के चरणों में पहुँचा था। हठात् एक दिन आचार्य ने कहा, 'हिजल जाना है। सूचिकाभरण जिसमें था, वह पात्र हाथ से गिरकर टूट गया। नाव से जाना है।' मुझे भी साथ चलने का सौभाग्य हुआ।

हिजल के किनारे, गंगा के चौर पर नाव बाँधी गई। गंगा के पश्चिमी तट पर दूर तक फैली समतल भूमि, छाती तक ऊँची हरी-हरी घास। जहाँ तक नजर जाती, घास ही घास। घास के उस वन में देवदारु और झाऊ के पेड़। शिवराम ही सुनाते—उन घनी घासों में होकर ही अनगिनती नहर-नाले गंगा में आकर गिरते हैं। घनी हरियाली वाली घासों का

जंगल। इन हरी घासों पर हवा से लहरें उठ रही थीं। सर्-सर् की आवाज से लगता, जैसे कोई अनोखा बाजा बज रहा हो। झाऊ के पेड़ों से उठती हुई सन्-सन्। आसमान में उड़ती बतखों का झुंड। जन-मानव का कहीं नाम नहीं। इतने में मल्लाह ने कहा—उस नाले से क्या तो बहता आ रहा है, मालिक।

आचार्य को यह सुनकर कोई कौतूहल नहीं हुआ। नौजवान शिवराम को उत्सुकता हुई। वह नाव की छत पर खड़ा हो गया था। देखकर ताज्जुब में पड़ गया। एक चीते की लाश थी। बच्चा चीता। लाश बहती आ रही थी, साथ-साथ कौवे उड़ते जा रहे थे। कभी-कभी लाश पर कौवे बैठते भी थे, लेकिन आश्चर्य, चोंच नहीं मारते थे!

आचार्य ने कहा—जहर है। चीता साँप काटे से मरा है। उसका मांस जहरीला हो गया है। हिजल के वन में बाघ ज्यादातर साँप के जहर से ही मरते हैं।

अचानक चिड़ियों की चहक को दबाते हुए किसी पंछी की करुण चीख-सी उठी। वह चीख उठी तो उठी, थमने का नाम नहीं। जैसे कोई तिल-तिल करके उसकी हत्या कर रहा हो। शिवराम को उसका मतलब बताना नहीं पड़ा। वे समझ गए थे, उस चिड़िया को किसी साँप ने दबोच लिया है।

शिवराम तथा आचार्य के और भी दो शिष्य चौर पर उतरे थे। आचार्य ने कहा—सावधान! खूब देख-सुनकर चलना। जनश्रुति है, हिजल के बिल में मनसा मैया का आसन है।

खाना-पीना कर चुकने के बाद नाव एक चौड़े नाले में घुसी। दोनों ओर हिलता हुआ धानवन; आदमी की ऊँचाई से भी ऊँचा।

शिवराम कहते, सबसे बड़ा आश्चर्य मानो उसी घासवन में छिपा था। बगल के जंगल से एक मोटी डोरी-सी आ गिरी। साँप! काला—अमावस्या की रात के मेघ जैसा काला उसका रंग। और वैसी ही छटा उस काले रंग की। पानी में भप् से गिरा और पानी काटता हुआ तीर के वेग से उस पार की तरफ दौड़ा। बीच में मुँह डुबा दिया, निश्वास से पानी का फुहारा-सा उठा। नाव रुक गई। शिवराम ने विह्वल होकर देखा, पीछे का

घासवन बड़े जोरों से हिलने लगा है। जैसे, साँप से भी कोई भयंकर चीज पीछे से तीर की गति से आ रही हो। आयी भी, शिवराम अवाक् हो गए—भयंकर तो नहीं। घासवन से एक स्त्री निकल आयी। उस साँप जैसा ही काला रंग। घुटने से ऊपर उठा मोटा कपड़ा, कमर में फेंटा बँधा। ठीक से देखने का समय नहीं मिला। साँप के पीछे-पीछे वह काली औरत भी पानी में कूद पड़ी। लेकिन अचानक ही नाक में एक अजीब और तीखी गंध आ घुसी और कान में वैसी ही तीखी आक्रोशभरी आवाज के कुछ शब्द आ समाए—अजीब भाषा, उच्चारण का ढंग भी अजीब! लेकिन उन सब में भी अजीब उन शब्दों का भावार्थ। बोली—भागेगा! भागकर जी जायेगा तू? मैं तेरे लिए यम हूँ। भागकर मुझसे बच जायेगा तू?

यह सब उसने उस साँप से कहा। कूदकर पानी में वह भी साँप के पीछे-पीछे तैर चली। साँप का पीछा किया। कौन है यह?

अजीब टेढ़े-मेढ़े नाले। एक मोड़ में वह आँखों से ओझल हो गई। आचार्य नाव की टप्पर से बाहर आ खड़े हुए। उनके होठों पर हँसी की चमकती रेखा। बोले—भैया माझी, चलो। यात्रा अच्छी है आज। हिजल में घुसते ही देवाधिदेव की दया हुई। एक काला साँप पकड़ाया। खास काली जात का साँप।

नाव की चाल बढ़ने न बढ़ते पास के मोड़ से घासवन में से वही तीखी आवाज फिर गूँजी। अब की उस कंठ-स्वर में विजय की हँसी की तृप्ति का सुर था। डाँट के साथ दुलार—'अब? अब कैसा हुआ? दूँ? गरदन मरोड़ दूँ?' और फिर हँसी गूँज उठी। काले साँप की टेढ़ी-मेढ़ी गति से जिस तरह असंख्य तरंग-रेखाओं में नाले का पानी चचल हो उठा था, ठीक वैसी ही चचल हो उठीं हिजल की वायु-लहरें। खिलखिलाकर हँसती हुई वह मानो किसी कौतुक से लोट-पोट हो रही हो। हँसी के अंत में उसके शब्द सुनाई पड़े—अरे बाप रे, अइ मेरी मैया! मैं कहाँ जाऊँ री! बिगड़ उठी। अरी, मेरी काली नागिन बिगड़ गई। बाप रे! जरा फुफकार तो देख ले! फिर खिल-खिल हँसी। लहराई लहरें हवा की लोगों की छाती पर आ लोटने लगी।

नाव मोड़ से घूमी।

शिवराम अवाक् होकर उस सँपेरिन को देख रहे थे। पहचानने में उन्हें देर नहीं लगी, यह तरुणी सँपेरों के यहाँ की है। सँपेरिन ! लेकिन यह उन सब सँपेरिनों से जुदा है, जिन्हें शिवराम ने पहले देखा था। जिन जातियों के सँपेरे उनकी ओर होते हैं, यह सँपेरिन उन जातियों की नहीं है। शकल से अलग, भाषा से अलग, साज-पोशाक से अलग। अपने जीवन में शिवराम ने ऐसी सँपेरिन को पहली बार देखा। सँपेरे अकसर काले ही होते हैं, पर ऐसा चिकना और चमकता काला रंग उन्होंने कभी नहीं देखा। और बनावट भी कैसी कँटीली। उम्र अवश्य कम है उसकी, लेकिन उम्र ज्यादा भी हो, तो भी दूर से वह किशोरी-सी लगती। छरहरा बदन, लंबी, माथे पर घने बाल—रूखे, काले और घुँघराले बाल, खोल देने पर पीठ के आधे हिस्से को ढँके चँवर जैसे फूलकर हवा में हिलते रहते हैं। उन घुघराले बालों को सीधा करके खींचिए तो घुटने तक आ जाते हैं। काले रंग में तीन अंगों में चकमक करती है हलकी-सी कूची से खींची हुई सादी रेखा। बालों के ठीक बीचोंबीच जनेऊ के धागे-सी लंबी मांग, नुकीली नाक के दोनों ओर नहरनी से चीरे हुए पतले लेकिन लंबे खिंचे कमल के एकबारगी भीतर की पंखडी-सी आँखों की सादी ज़मीन और होंठों की फाँक में छोटे और सफेद दाँतों की पाँत। पहनावे में करघे की लाल रंग की मोटी और उठी हुई साड़ी। गले में पद्मबीज की माला, उसके साथ लाल धागे में झूलती हुई तावीज, और भी बहुत कुछ। कलाई खाली; बाँह पर सख्त बँधा लाल धागा, मुलायम काले चमड़े को काटकर जैसे बैठ गया हो। उसमें भी तावीज, जड़ी-बूटी। फेंटा बाँधकर पहनी हुई घुटने से ऊँची साड़ी गीली होकर उसके बदन से चिपक गई है। खड़ी-खड़ी प्रतिमा-सी काँप रही है। नाव कुछ और आगे बढ़ी कि शिवराम की नाक में बड़ी तीखी-सी एक बू घुस गई। वह किशोरी जब घनी घासों को चीरती हुई निकलकर साँप के पीछे पानी में कूद पड़ी थी, उस समय भी एक क्षण के लिए यह गंध मिली थी। जो जंगली होते हैं, जो भूना हुआ मांस खाते हैं, उनके बदन में कुछ बू होती है। माझी, सँपेरों के बदन में भी बू होती है, लेकिन ऐसी तीखी नहीं। इसमें तो चिरायँध-सी है।

शिवराम ने अवाक् होकर देखा था। सँपेरिन, मगर ऐसी सँपेरिन

उन्होंने नही देखी।

—ही'''हूँरी कन्या'''ओ'''

एक कड़ी, रखड़ी और मोटी-सी आवाज। आदमी से भी ऊँची उन घासों में से कोई पुकार रहा था।

वह दाएँ हाथ मे साँप को पकड़े हुए थी। बाएँ हाथ की छोटी-सी हथेली को तालू के पास ले जाकर गंगा की खुली ओर को ओट करके ऊँची आवाज मे पुकार उठी—ही-मो। यहाँ। हूँगरमुखी बाँक पर। जल्दी आओ, जल्दी। देख जाओ। पाँव बढ़ाए आओ।

आवाज मे उमड़ी पड़ रही थी गोया उमग। घबराई-सी नजरों से घास-वन की ओर देखती हुई कौतुक की हँसी मे खिले हुए चेहरे मे बोली—ही'''दंग रह जाओगे बुड्ढे! कौतुक से आँखें मानो चिड़िया-सी नाच उठीं।

धूर्जटी कविराज के चेहरे पर मुसकान खिंच गई। उन्होंने भी घासवन की तरफ नजर घुमाई। घासवन काँप रहा था, दो ओर को झुक गया था—वनैले दतैल (सूअर) की तरह कोई तेजी से चला आ रहा था। शिवराम हैरान हो इंतजार करने लगे। कुछ ही क्षणों मे आदमी का सिर दिखाई पड़ा—पक्की दाढी-मूँछ और घने झोंटे-से भरा आदमी का मुह। रंग घोर काला और आँखों में जंगली निगाह। एकाएक वह ठिठक गया, आँखों की वह जंगली निगाह अचरज से अजीब हो गई। मुसकराकर विस्मय-पुलकित कंठ से बोल उठा—धन्वंतरि बाबा!—उसे मानो विश्वास नहीं हो रहा था।

कविराज ने कहा—अच्छे तो हो महादेव, बाल-बच्चे, टोले-मुहल्ले के सब मजे में तो हैं?

उनकी बात पूरी होने न होते महादेव घासवन मे बाहर निकलकर खड़ा हो गया। कमर मे घुटने तक मोटे कपड़े के एक टुकड़े का आवरण—उसके सिवा नंगा बदन एक बर्बर। गले मे, हाथ में काले धागे मे बँधा जंतर-मंतर, जड़ी-बूटी और गले मे रुद्राक्ष की एक माला। उसके बदन में भी वैसी ही तीखी बू। बूढा था, फिर भी तना खड़ा था। उसका शरीर काई लगी पुरानी दीवार-सा या पत्थर का, कालापन लिए हरी काई

…हो मानो, काई की एक पर दूसरी परत पड़ती गई है जाने कब
…कन अभी भी मजबूत और अटूट। तरुण शिवराम अवाक् अचरज
…ते रहे। हाँ, वह इसी बाप की बेटी है !
…यह लेकिन मामूली माल या माझी सँपेरा नहीं। संताली का विप-
…। संताली उनके गाँव का नाम है। यही, हिजल बिल के किनारे
…गीरथी के चौंर के बासवन, झाऊ और देवदारुओं की कतार की आड़
…, वह हंगरमुखी घाट से एक पतली-सी राह गई है, राह के दोनों ओर
…ची घासों का जंगल, बीच में चलते-चलते बन गई आँकी-बाँकी पगडंडी
…विप-सँपेरों के संताली गाँव के ठीक बीच में विपहरी माईथान तक
…चली गई है। बीच के उस माईथान के चारों ओर अजीब-सी बस्ती। देवी-
…थान के चारों ओर देवदारु की डालों के खूँटों के मचान पर घर। मचान के
…चारों तरफ झाऊ की दीवारों पर माटी का पतला-सा लेप लगाकर, घासों
…की छाजन करके वे अपना घर बनाते हैं। हर साल ये घर आँधी से उड़
…जाते हैं, बरसात में गल जाते हैं—सिर्फ नीचे वाला मचान साबित बच
…जाता है। गंगा में बाढ़ आती है, घासवन डूब जाता है। हिजल बिल और
…गंगा का पाट एक हो जाता है, संताली गाँव पानी में डूब जाता है, केवल
…वे मचान ऊपर झाँकते रह जाते हैं—ज्यादा बाढ़ आती है तो …
…मचान भी डूब जाते हैं। वैसे में जाइए तो आप देखेंगे, झाऊ के …
…बेड़ों पर, छोटी-छोटी नावों पर ये सँपेरे अथाह बाढ़ में बहते रहते हैं। …
…का पानी निकल जाता है, मिट्टी जग आती है, गीली माटी की परत
…जाती है तो ये सँपेरे बेड़ों और नावों से उतर पड़ते हैं, उन मचानों प…
…काँदो-कतवार साफ करते हैं, दीवार की गल पड़ी माटी को फिर से लेप…
…छोटे-छोटे बच्चे काँदो घाँटते हैं, मछली-केकड़ा मारते हैं। बड़े लोग…
…लगाकर देवदारु के पेड़ से सूखी लकड़ियाँ तोड़ लाते हैं, जाल …
…बिल से बतखें पकड़ लाते हैं, गुलेल से भी मार लाते हैं—संताली …
…घर में फिर से धुआँ उठता है, उनकी घर-गिरस्ती फिर से शुरू …
…है। उसके बाद एक बार नावों पर चढ़कर साँप पकड़ने की बारी …
…हिजल बिल के चारों ओर झाऊ और देवदारु की डालों पर, …
…बाढ़ से बहकर आए हुए नाना जाति और आकार के साँप पना…

उन साँपों को देख-देखकर, चुन-चुनकर वे अपने पिटारे भर लेते हैं। सृष्टि में ऐसा साँप नहीं जो उनकी नजर से बच जाय। देवदारु की फुनगी पर जो दूधिया गेहुँअन फन फैलाए आकाश के उड़ते गीध, चील या बाजों के चोंच-नाखून की तरफ से चौकन्ने रहते हैं, वे दूधिया गेहुँअन उनके पिटारे में सहज ही कैद हो जाते हैं। बिलकुल हरे रंग के जो सुगिया साँप पेड़ों के पत्तों में यों चिपटे होते हैं कि साधारण लोगों को दिखाई ही नहीं देते, वे साँप भी उन्हें दिख ही जाते हैं और उन्हें भी वे अपने पिटारे में दाखिल कर लेते हैं। सुबह जब सूरज पूरब आसमान में उगने-उगने को होता है, तो अपनी नावों पर खड़े वे उन पेड़ों की ओर पैनी निगाह से ताकते हैं। इस वक्त उदय नाग फन फैलाए डोलते हैं, दिन के देवता को प्रणाम करके फिर पेड़ के पत्तों की आड़ में अँधेरे में छिप जाते हैं। वे उदयनाग भी उनके हाथों पकड़ जाते हैं। *काले गेहुँअन की तो बात नहीं। काली नागिन तो उनके पास* वचनबद्ध हैं। काली नागिन ही उनके घर की लक्ष्मी हैं, वही उनका अन्न जुगाया करती हैं, विष-सँपेरों की बेटी होती हैं वे। इसी काली नागिन के जहर से महासंजीवन सूचिकाभरण तैयार होता है। वह भी विषहरी मैया का वरदान है। रात जैसी काली-काली नागिन। सुंदरी सुकेशी लड़की के तेल से चिकने हुए केशों की वेणी जैसी बनावट और वैसी ही उसके काले रंग की चमक। काले गेहुँअन बहुत तरह के होते हैं। जिसके काले बदन पर सरसों की तरह छींटे पड़े होते हैं, वे और होते हैं। जिस गेहुँअन के रंग से भी काले दो दागों का कंठा-सा पड़ा होता है बदन में, जानिए कि वह कालीदह के काले नाग का वंशज है। काली नागिन सिर्फ काली होती है। काली नागिन काले नाग की बेटी है। उसके वंश में लड़की के सिवा *लड़का नहीं होता। उसकी पूँछ कुछ मोटी होती है। बिहुला ने सरौता से* उसकी पूँछ का थोड़ा-सा भाग काट दिया था। काली नागिन के नाग की जात नहीं। वह दूसरे नागों के बच्चे जनती है—इसी से शायद नाना जाति के गेहुँअन हुए हैं। विषहरी माई की इच्छा से उनमें दो-चार मादा साँप बिलकुल माँ जैसी जनमती है—जनमती है, काली नागिन की परंपरा कायम रखने के लिए। ये विष-सँपेरे काली नागिन को पहचानते हैं। चूक नहीं होती उनसे। धूर्जटी कविराज को यह मालूम है। इसीलिए इ

व दूसरे सँपेरों से सूचिकाभरण का उपादान नहीं जुटाते। यही
कि उनका सूचिकाभरण संजीवनी है।
र भागीरथी के किनारे-किनारे हिजल विल के पास मनसा मैया
सन के अँगने के चारों ओर काली नागिनों का वास है। इसीलिए तो
रे घासवन में, बाढ़ के पानी से कीचड़ हुई माटी पर ही बड़ी खुशी
रहते हैं। घास सड़ती है, सीलन की गंध उठती है, चारों ओर मक्खी-
च्छर भनभनाते हैं घासवन में बाघ गरजते-गुर्राते हैं, हिजल विल के
अनगिनती नालों में मगर घूमा करते हैं, घड़ियाल आते हैं, कछुए आते हैं
और उर्मी में ये सदा रहते आए हैं। यहाँ को छोड़कर ये स्वर्ग भी नहीं
जाना चाहते। बाप रे बाप! यहाँ का रहना भी छोड़ा जा सकता है भला!
यह जमीन विपहरी मैया की सनद है, लगान नहीं लगता इसका। लोग
कहते हैं, फलां राजा का राज, उस गाँव के जमींदार का इलाका, लेकिन
इनसे लगान वसूलने के लिए किसी तहसीलदार की नाव कभी हंगरमुखी
घाट से नहीं लगी आज तक। माँ विपहरी का हुक्म नहीं, नहीं है हुक्म।
उन्हीं की सनद से हमने यहाँ बस्ती बसाई है। सृष्टि के आदिकाल से चंपा
नगर के पास संताली पहाड़ पर वास था, सौ पीढ़ियों का वास, जात वे
हम विष-वैद्य थे; वह वास गया, वह जात गई, माँ लक्ष्मी हमें छोड़ ग
उनके बदले विपहरी की सनद से कालनागिनी कन्या मिली है, माँ ग
की उपजाऊ माटी पर नए गाँव की ज़मीन, इसे छोड़कर कहाँ जाएँ?

दो

ते हैं—वह भी अजीब कहानी है :

जय-जय अरी विपहरी मैया!!
दंड दिया चाँदो बनिया ने
किरपा तेरी नैया!!
ऐ! ओ!

चंपा नगर, किनारे उसके

सताली का परवत !
ऐ ! ओ !
धन्वंतरि मंतर से मन्त्रित
सारी सीमा, सब पथ !
ऐ ! ओ !
बिरिछ-बिरिछ में मोर-मोरनी
गढ़े - गढ़े में नेवल !
ऐ ! ओ !
बिखत बैद बैठा है जमकर
रे, बाऊल-सा केवल !
ऐ ! ओ !

सताली पहाड के चौसीमाने को धन्वतरि ने मत्र पढकर बाँध रखा था। भूत-प्रेत, पिशाच-राक्षस, डाइन-डाकिनी, विषधर वहाँ घुस नही पाता। खासकर वहाँ विषैली नाग-नागिनें, बिच्छू, कीडा-मकोडा, वर्रे का घुमना मुश्किल था, घुसने से उनका मरना निश्चित था। मोर और नेवले उनके टुकड़े-टुकडे कर डालते। दुनिया के पेड-पौधों से, सात समंदर के नीचे से, स्वर्ग के धन्वतरि बाग मे धन्वतरि ने जो भी फल-मूल, जडी-बूटी का विषघ्न पाया, सब को लाकर उनके बीए सताली पहाड के माटी-पत्थर मे बिखेर दिया था। ईश के मूल से लेकर विशल्यकरणी तक ! उनकी गध से संताली पहाड की हवा भारी वहा करती, वहाँ के पत्थरो मे विष-पत्थर बिखरे पडे होते, जैसे समंदर के किनारे घोघा-सीप बिखरे होते है। विष-पत्थर विष को सोख लेता है, जैसे पानी सोखता हो। उन्ही विषघ्न ओष-धियो की गध से विषधरों के होश-हवाश गुम हो जाते और वे कटी लता की नाई लुढक पडते। विष-पत्थर के कर्षण से उनकी विष की थैली से विष बाहर निकल आता।

धन्वंतरि ने संताली पहाड का भार अपने शिष्यों पर दे रखा था। धन्वंतरि से चांद सौदागर की मिताई थी, चांद विषहरी का विरोधी था—उसने सताली पहाड़ पर बिना लगान के बसने-बसाने की छूट दे रखी थी। धन्वतरि के शिष्य, उन विष-बैदों को समाज में आसन मिलता था

नलता था। वे अछूत नहीं थे—उन्हें विषघ्न लता को जनेऊ की
हनने की छूट थी। फिर भी वे वैरागी वाऊल[1] थे। विष की
सा का मोल नहीं—अनमोल विद्या है। वे उस इलाज की कोई
ा नहीं लेते, क़ीमत नहीं लेते—मामूली दान लिया करते थे।

तुम सब पीना मधुर सुधा रस, हम सब जहर पिएँगे !
ऐ ! ओ !
काल सरप तुम सब के घर का, गले लगा जिएँगे !
ऐ ! ओ !
फटा-पुराना वस्तर देना, दो-दो मुट्ठी चाऊल !
ऐ ! ओ !
आज्ञा से अपने गुरु की हैं ये विष-वैद्य वाऊल !
ऐ ! ओ !

मर्त्य धाम का अधिकारी, सात जहाजों का मालिक चाँद सौदागर
शिव का भक्त था, फिर भी उसने शिव की बेटी विषहरी से दुश्मनी की।
'कानी, गरई मछली जैसा सिर, उस कानी विषहरी की मैं हरगिज पूजा नहीं
कर सकता। हो वह साँप की देवी !' बस, दोनों में ठन गई—देवता से
मर्त्य के सिरमौर की लड़ाई शुरू हो गई। महाज्ञान गया, धन्वंतरि गए
सारे विष-वैद हाय-हाय कर उठे, उनका गुरु गया। उन सब का जीव
अँधेरा हो गया, मंत्र की पंखड़ियाँ टूट गईं। चाँद सौदागर के छः-छः
गए। विष-वैदों का सिरमौर—उसकी भी इकलौती बेटी गई। अपरा
की कली-सी कुचकुच काली कोमल लड़की, पैरों में पैंजनी बाँधकर
की बाँसुरी की तालों पर नाच रही थी—कि लड़खड़ाने लगी। गिर
मुँह से फेन निकलने लगा। गिरी सो उठी नहीं। मंतर-तंतर, ज
सब बेकार हुईं। आसमान से मनसादेवी ने पुकारकर कहा—विष
अनुचर नागों, नागिनों का विष काटने के लिए, उनका जीव
लिए तुम लोगों ने जो विष संताली पहाड़ के चारों ओर बिछा
उसी विष से तुम्हारी बेटी की जान गई।

---

१. भजन गाकर मांगता-गाता फिरने वाला साधुओं का एक सं

सांप के जहर की दवा वह जड़ी-बूटी भी तो विष है। जो विष विष को काटता है, वह विष भी तो साक्षात मृत्यु ही है। किसी लता में कोई टुकटुक फल लगा था। नादान बच्ची ने वही फल तोड़कर खा लिया, उसी के जहर से जान गँवा बैठी।

तुमने रोपा विरिछ विक्ख का फल खाएगा कौन ?

वैदों का सिरमौर छाती पीटने लगा। सारा वैद-टोला हाय-हाय करने लगा। कहा—

मरे मरे वह चांदो वनिया, गिरे माथ पर गाज !
ऐ ! ओ !
इतने देवों के रहते मनसा से किया विवाद !
ऐ ! ओ !

छः-छः बेटे जाते रहे, *धन्वन्तरि गया, महाज्ञान गया, माल लदे सात-सात जहाज डूबे,* इस पर भी जिसे होश नहीं आया, उसे यह सब कहना बेकार है। फिर घर में चांद के टुकड़े-सा लखीदर जनमा। ज्योतिषियों ने बताया, इसे कोहबर में ही सांप डँसेगा। फिर भी कोई चिन्ता नहीं। चांद ने अपनी हिताल की लाठी से मनसा मैया के घट को फोड डाला। फिर भी उसने विहुला से लखीदर की शादी की तैयारी की। सताली पहाड़ में लोहे का किला बनवाया, किले के एकदम अन्दर लोहे का कोहबर तैयार कराया। उसी रात विष-वैद का भाग्य पलट गया। उफ, कैसी रात ! आसमान में घोर घटा, घटाओं की उस पुरी में विषहरी का दरबार लगा। थमथम अंधकार। उसी थमथम अँधेरे में विष-वैदों की सुर्ख आँखें अंगारे-सी जल रही थीं। बीच-बीच में वैदों का सिरमौर हांक मार उठता था— कौन ? कौन जा रहा है ? उस हांक से सताली पहाड़ के पेड़-पौधों की डालें डोल-डोल उठती थीं, डालों पर मोर डैने फड़फड़ा उठते थे, उस हांक के साथ गढ़ों से मुंह निकाले, रोएँ फुलाए, नहरनी से पैने दांत बाहर करके नेवले गरज उठते थे।

मनसा के नाग आकर दूर ही से देखकर ठिठक जाते, कुछ देर रुककर लौट जा रहे थे। आसमान में बादल और, और गाढ़े होते जा रहे थे— विषहरी की तनी भौंहों की छांह पड़ रही थी। रह-रहकर बिजली के

रही थी, माँ दिपहरी की आँखों से क्रोध की छटा छिटक-छिटक पड़ती थी।

ऐसे में संताली की सीमा पर करुण स्वर में रुलाई जागी। नारी का गला। नारी का नहीं, नन्ही बच्ची का कंठ-स्वर ! भय से वह मानो धरती को आकुल करती हुई रो रही थी।

—बचाओ ! मुझे बचाओ ! बचाओ मुझे !

सरदार बैठा ऊँघ रहा था। वह चौंका। कौन ? कौन रो रही है ऐसे ? नन्ही बच्ची ! कौन है रे ?

—मर गई मैं तो। मार डाला। अरे ओ—अन्त में ऐसा लगा कि उस चीख से आकाश की घनी घटा में भी दरार पड़ गई, धरती रो उठी।

सरदार ने पुकारकर कहा—डरो मत ! कोई डर नहीं।

अपने हाथ का चिमटा उठाकर वह दौड़ा। विष-वैदों का उस समय बड़ा-बड़ा चिमटा ही हथियार था। नोक पर शूल की धार, उस चिमटे से पकड़ ले तो नागराज की भी खैर नहीं। चिमटे के ऊपर कड़े होते—चलने के साथ वे कड़े चिमटे से लगकर बाजे की तरह बज-बज उठते—झन-झन-झनन।

संताली पहाड़ की सीमा के उस पार खड़ी आठ-दस साल की एक छोटी-सी बच्ची रो रही थी—सर्दियों के अन्त में उतरंगी बयार से पीपल के पत्ते जैसे थर-थर काँपते हैं, काँप रही थी। और उसके चेहरे पर, आँखों में डर की कुछ न पूछिए।

और डर भी क्या यों ही ! हिजल बिल के किनारे भागीरथी के चौर पर घासबन के भीतर—संताली गाँव का सिरमौर सँपेरा तब की कहानी कहते-कहते सम्हलकर बैठ गया, उसके दोनों कंधे की मोटी हड्डियाँ छाती के अंदर के आवेग से काँप उठीं। आँखें उनकी छोटी होतीं, नहरनी से चीरी हुई-सी पतली आँखें भी अचरज से बड़ी हो आयीं। कहा—संताली की सरहद के बराबर उस समय ऊपर-नीचे मानो गर्जन की आँधी उठ आयी। पेड़ों की डालों पर डैनों की फटाफट, मोरों के डैने फटकारने से जैसे तूफान उठ रहा हो—कैंड-कैंड की आवाज से सब चौंक-चौंक पड़ने लगे, नीचे जमीन पर रोंए फुलाए कतार से खड़े हो गए नेवले—फिस्-फिस् फुफकारने लगे। डालों पर के मोर बीच-बीच में दोनों पैरों के नाखून

फैलाए, चोच को लम्बी करके चक्कर लगाते हुए उडकर इस-उस डाल पर जाने-आने लगे। नेवलों के दाँतों की पाँत निपुर आयी, उन दाँतों में उस्तरे की धार; अँधेरे मे भी दाँतों की सफेद पाँत झलक पड़ने लगी। सबको चिढ़ मानो उसी छोटी-सी लडकी पर थी। कहीं कूदे तो लमहे मे फाडकर उसे टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। सिर्फ उस लडकी के कदम बढ़ाने का इतजार था।

सिरमौर सँपेरा आकर ठिठक गया। उफ, कैसी अनूठी रूपमती लडकी! किस गजब का रूप! नौ-दस साल की लड़की, बदन का रग कुछ-कुछ काला—अँधेरी रात में भी पानी के नीचे के रतन-सी झकमक! दो चमकती आँखें, छरहरा बदन। बनावट भी उतनी ही कोमल, जैसे नई लता, जैसे काले रग की रेशमी ओढनी—उसे यदि कोई कधे पर डाले, गले मे ओढ़े तो लिपट जायगी।

लडकी काँप रही थी। साथ ही साथ मानो अवश भी हुई आ रही थी। संताली के सिरमौर वैद को लगा, जड-कटी एक हरी लता जैसे लुढकी जा रही है। वह लडकी उसकी ओर अजीब एक निगाह से ताक-कर बोली—मुझे बचा लो, बाबा, बचा लो!

वैद काँप उठा। उसे अपनी मरी बेटी याद आ गई। वह भी इसी तरह जड-कटी लता जैसी लुढक पडी थी। आँखों मे देखते ही देखते मलिनता आ गई। कठस्वर क्षीण हो आया। क्षीण से क्षीणतर स्वर मे उसने पुकारा—बाबा...!

सिरमौर वैद से और न रहा गया। 'बेटी, बेटी' कहते हुए बाहे फैलाकर उसने कदम बढाया। कदम बढाना था कि माथे के ऊपर मोर चीखने लगे, नेवलों ने चीखकर उसकी राह रोक ली। समूचा संताली पहाड़ मानो सिहर उठा। हिंताल की लाठी लिए चाँद सौदागर घूम रहा था। वह चिल्ला उठा—कौन?

सिरमौर वैद सिहरकर ठिठका। उसकी सुध लौटी।

कौन? यह अनूठी काली लडकी कौन है? मारे मोर हाय-हाय क्यों कर उठे? नेवलों ने ना-ना करके राह क्यों रोकी? संताली पहाड़ की मंत्रपूत माटी सिहर क्यों उठी?

हाथों तेरी जान जायगी। यह मोहिनी कन्या का रूप धर कर नहीं आयी होती तो जान कब की जा चुकी होती।

तब तक तो वह लड़की धूल में लोट पड़ी थी। अँधेरे में काले मानिक की एक लड़ी पड़ी हो मानो—आकाश में चमकती हुई बिजली की चमक में चकमक करने लगी।

सिरमौर सँपेरा महादेव कहानी कहते-कहते यहीं रुक गया। उसके होठों पर हलकी मुसकान खेल गई। सिर हिलाकर बेबसी जताते हुए बोला—देवता की मददगार है नियति, नियति के हाथों आदमी कठपुतली होता है बाबा ! जैसे नचाती है, वैसे ही नाचते हैं।

चाँदो बनिया से विषहरी की लड़ाई में नियति विषहरी की मददगार थी। शिव का भक्त, महाज्ञान का अधिकारी चाँद कठपुतली-सा नाचा। लखींदर पैदा हुआ, नियति ने उसके कपाल पर उसका भाग्य लिख दिया। उस लिखावट को मेट दे, सिरमौर वैद को वह साध्य कहाँ ? साध्य शायद होता, यदि गुरु का बल होता, धन्वतरि जिंदा होते। इस छलना का सारा नक्शा नियति ने पहले ही बना रखा था। वैद को एक बेटी दी था, छुटपन में ही उसे छीन लिया, कलेजे में उसकी प्यास जगाए रखी, उसके बाद काल-नागिन को नन्हीं लड़की बनाकर इस काल-रात्रि में उसके सामने खड़ा कर दिया। फिर भी अपने गुरुबल, विद्याबल से वैद उसे पहचानकर दो कदम पीछे हट आया।

उसने एक और भी मूर्ति देखी। छाया-सी। वह मूर्ति उस लुटकी पड़ी लड़की के सिरहाने खड़ी थी। धन्वतरि बाबा, वह साक्षात् नियति थी, महामाया की माया ! सिरमौर वैद की हूबहू वही लड़की। अबकी सिर्फ सिरमौर वैद ही नहीं भूला, साक्षात् नियति का छल, सभी भूला। मोर भूले, नेवले भूले, सताली पहाड़ की मंत्रपूत माटी, वह भी भूली। सभी टक-से उस छाया-मूर्ति की ओर ताकने लगे। वही लड़की, वैद की दुलारी बेटी, जो मोरों के साथ नाचती थी, नेवले जिसके पैर में सिर रगड़ा करते थे, जिसके पायलों की झनकार से सताली पहाड़ की मंत्रपूत माटी ताल-ताल पर झूम उठती थी—वही लड़की। हूबहू। एक तिल का फर्क नहीं। वही, बिलकुल वही।

उस लड़की ने पुकारा—बाबा !

सिरमौर वैद जोरों से रो पड़ा। दोनों हाथ बढ़ाकर बोला—अयि मेरी खोयी हुई निधि, ओ मेरी बिटिया, आ, मेरे कलेजे से लग जा।

उस लड़की के रूप में नियति बोली—आऊँ कैसे, बाबा ! यह तो मेरी छाया-मूर्ति है। नए रूप में तुम्हारी छाती जुड़ाने के लिए आयी तो, किन्तु तुमने तो अपनाया नहीं।

वैद की आँखों से आँसू बह निकला। मोर विलाप करने लगे, नेवले फुफकारने के बदले रोने लगे, पेड़ों के पत्तों से टपटप करके ओस की बूँदें टपकने लगीं।

कन्या बोली—नए जन्म में मैंने नागकुल में जन्म लिया है बाबा ! यह रही मेरी नई काया, वह काया तो वह रही, संताली की सरहद पर काले रतन का हार-सी पड़ी है। तुम यदि अपनी गोदी में उठा लो, जभी मैं इस काया में रह सकती हूँ, नहीं तो फिर मुझे मरना पड़ेगा।

कहते-कहते वह छाया-मूर्ति गलकर मानो उस अचेत पड़ी लड़की की देह में मिल गई। आदमी का छल, आदमी की माया, इसे तो काटा जा सकता है; देवमाया भी समझ में आती है, लेकिन नियति की माया, उसे समझने की शक्ति अकेले शिव को है, और किसी को नहीं।

सिरमौर वैद बातों में आ गया। वह लपका। पागल की तरह उसने कन्या-रूपधारी काल-नागिन की देह को उठा लिया। लगा, जी जैसे जुड़ा गया। नागिनी का परस बड़ा शीतल जो होता है ! और वैद के बदन में वैसी ही दाह ! विष पीकर वह झीमा करता है, सारे बदन में विष हरने वाला रस मलता है; गले में, बाँहों में जड़ी-बूटी। तेल लगाना मना। देह आग-सी जलती हुई। नागिन के शीतल स्पर्श से तन जुड़ा गया; लगा, कलेजा भी जैसे ठंडा हो गया। उसने उस लड़की की मूर्ति को और भी जोर से कलेजे से लगाया। कहावत है, आदमी मरता है, ज्वाला जुड़ाती है। सो बाबा, नागिन को बदन में लपेट लेने से सोचना पड़ जाता है कि मौत ज्यादा ठंडी है कि नागिन !

फिर ?

प्रश्न को दुहराकर गंगा के चाँर का सिरमौर सँपेरा, गूढ़ रहस्य की

उपलब्धि के आनंद से निरासक्त की नाईं सिर हिलाकर बोला—फिर ? जो होना था, वही हुआ। उस लडकी के चेहरे पर, आँखों मे मंत्र पढे पानी का छींटा दिया, गंध सहने योग्य दवा भी दी दूब के साथ। मोरों से कहा, जा, यहाँ से जा। नेवलों से कहा, तुम सब भी जाओ। और सीटी बजाकर इशारा किया।

उस लडकी ने आँखें खोलीं। बोली—तुम मेरे बाप हो।

सिरमौर वैद ने कहा—हाँ, बिटिया, हाँ। फिर कहा—मगर मुझे एक वचन दे कि तू मुझे छोडकर कभी जाएगी नहीं।

—नहीं, नहीं, नहीं! —लडकी ने तीन सत्य किया। बोला—मैं तुम्हारे घर में सदा-सदा रहूँगी, तुम्हारे यहाँ नागिन बनकर पिटारे मे रहूँगी, कन्या होकर तुम्हारे वंश मे जन्म लूँगी। तुम बसरी बजाकर मुझे नचाओगे, मैं नाचूँगी।

सिरमौर वैद ने कहा—देख, ऊपर आसमान मे देवता साक्षी रहे, नीचे गवाह रहे ये मोर, नेवले और सताली के पेड-पौधे। यदि तू गई, तो मेरे बाण से तेरा मरण होगा।

—हाँ। वही होगा।

सिरमौर वैद ने आखिर उसे अपनी बेटी के सारे गहने पहना दिए। पैरों मे पायल, गले मे लाल पत्थर की माला, हाथो मे शख के कंगन। उसके बाद उठा ली उसने अपनी बीन और उसकी बेटी नाचने लगी—झूम-झूमकर। वह नाच सिरमौर वैद की बेटी और नागकन्या के सिवा कोई नहीं नाच सकती। नाचते-नाचते आकर वह वैद का गला पकडे डोलने लगी। उसके निश्वास वैद की नाक के पास गिरने लगे। नागिनी का निश्वास औरों के लिए जहर होता है, लेकिन विष-वैद के लिए दु ख और चिंता मिटाने वाला आसव। बाबा, हमें जो सुख साँप के विष के नशे से मिलता है, वह सुरा लाख कडी शराब क्यों न हो, नहीं मिलता। सिरमौर वैद जीभर निश्वास खीचने लगा। कुछ ही देर मे उसकी बीन का सुर लडखड़ाने लगा, आँखें झपने लगी, सारा बदन डगमगाने लगा। पाँवो के नीचे की जमीन डोलने लगी और आखिर हाथ से बीन गिर पडी।

नागिन गुनगुनाकर गाने लगी, लोरी जैसा विष बिखेरने वाला गीत—

वासुकी डुलाए सिर डोले चराचर रे—
तू भी ढुलक पड़ रे !
सागर मथन में डोले सात सागर रे—
तू भी ढुलक पड़ रे !
उगलें अनंत सुधा और हलाहल रे—
तू भी ढुलक पड़ रे !
वो सुधा उठा कर पिएँ भोला महेश्वर रे—
तू भी ढुलक पड़ रे !
ढुल-ढुल झीमें आँखें सारे अंग टलमल रे—
तू भी ढुलक पड़ रे !
अनंत शय्या पे लेटे सो रहे ईश्वर रे—
तू भी ढुलक पड़ रे !

नींद की वैसी और दवा नहीं बाबा। बाबा भोला महेश्वर हुए मृत्युंजय, मौत को जीतने से भला उनके पास नींद आ सकती है ? नहीं आती। मौत की छाँह है नींद। आपकी-मेरी देह की छाँह में जैसे देह का ही आकार-प्रकार होता है, वैसे ही मौत की छाँह में उसी की छूत होती है। वह बेबस किए देती है, सब भुला देती है। सो, मौत की छूत नींद मृत्युंजय की आँखों में कैसे आ सकती है ? नहीं आती। मौत भी नहीं, नींद भी नहीं। शिवसदा ही जगे हैं। लेकिन उस निश्वास के नशे में सदा निंदाए-से झीमते रहते हैं, कुछ ख्याल नहीं, भुलाए रहते हैं। और फिर देखिए धन्वंतरि बाबा, ईश्वर—ये क्षीर-सागर में नाग की सेज डालते हैं। अनंत नाग की सेज के बिना नींद नहीं आती। ईश्वर को बाबा, वही निश्वास सुलाता है। उसी निश्वास से सिरमौर वैद नींद से लुढ़क पड़ा। सिर्फ वही क्यों, सारा संताली पहाड़। मोरों के डैने बेबस हो आए, नेवलों की देह अवश हो आयी, संताली

लगा—कोयले का चूरा सुराख से गिर पड़ा। उसी चूरे से वह छेद छिपाया गया था।

—उसके बाद ?

—उसके बाद की तो सब जानते ही है आप लोग। सिर्फ जानते नही थे सिरमोर बैद वाली बातें। जानते भी कैसे ? गुजरी तो रात के अँधेरे मे ! कोई गवाह तो था नही। और, विश्वास भी कौन करे, कहिए ? सुबह बिहुला का रोना-धोना सुनकर डंडा खाए हाथी की तरह चाँद सौदागर दौड़ा आया। आकर देखा, लखीदर तो चल बसा। बिहुला रो रही है और पास ही नागिन की कटी पूंछ पड़ी है। चाँदो तुरत दौड़कर सिरमौर बैद के आँगन में आया। वह तब भी नींद मे अचेत पड़ा था।

चाँदो ने लात लगाई। हिंताल की अपनी लाठी से कोंचा। बैद जागा। चाँदो ने कहा—तू नमकहराम है। विश्वासघात का पापी। तू मदद नही करता, राह नही देता तो नागिन जा कैसे सकती थी ?

सिरमौर बैद सौदागर की ओर ताकता रहा। उसने सिर्फ एक बार अपने चारों ओर निगाह दौड़ाई कि वह काली लड़की कहाँ है ? परंतु कही कोई नही, सिर्फ बिखरे पड़े थे चारों ओर गहने।

माया ! छल ! नियति !

बैद ने दड पाने के लिए सिर झुका लिया।

चाँद सौदागर ने श्राप दिया—

तुमने वचन देकर उसे तोड़ा है। तुझ पर विश्वास किया था, तूने उस विश्वास को तोड़ा है। तू और तेरी जाति नमकहराम है, विश्वासघातक है। वचन देकर जो उसे रखता नहीं, उसकी जात नहीं रहती। विश्वास करने वाले को जो धोखा देता है, दगा देता है, उसकी सजा देश-निकाला है। मैंने संतानी पहाड़ मे बसने की जो बिना लगान वाली सनद दी थी, वह रद्द हो गई। इस पहाड़ मे, इस समाज से, इस इलाके से मैंने तुम लोगों के वास का अधिकार छीन लिया। शिव की आज्ञा मे राजा ने छीन लिया। तुम सब का वास गया, जात गई, मान गया, लक्ष्मी विदा हुई। यह शिव की आज्ञा है, मेरा श्राप है। तुम सब को कोई छुएगा नहीं, तुम्हारी छुई हुई चीज कोई नही लेगा, तुम्हे बस्ती मे कोई रहने नही देगा।

सौदागर चला गया। कलेजे में सात बेटों का शोक लिए वह पत्थर बन गया था। उसकी उस मूर्ति के सामने खड़े होकर सिरमौर बैद को यह कहने का साहस नहीं हुआ कि सौदागर, तुम्हारे सात बेटों के चले जाने से तुम्हारा कलेजा जैसा सूना हो गया है, मेरी एकमात्र बिटिया के जाने से मेरा कलेजा वैसा ही सूना हो गया है। यकीन न आए तो मेरी छाती पर हाथ रखकर अपनी छाती पर हाथ रखो—देखो कि ताप बराबर है या नहीं। मगर वह काठ का मारा-सा खड़ा रह गया।

उधर चम्पानगर में हाहाकार हो रहा था। घर-घर के दरवाजे पर भीड़। नदी के घाट पर केले के थंभों का बेड़ा बाँधा जा रहा था। लखींदर के शव को लेकर बिहुला पानी में बहती जाएगी। लखींदर जिएगा, वह तभी लौटेगी, नहीं तो उसका यह बहना मरणलोक की यात्रा।

पानी में सोने की कमला बहती चली जाय।
हाय-हाय रे !
निर्दयी नागिन तुझे तनिक भी दया न आई, हाय !
हाय-हाय रे !

विष-बैद के जाति थी, कुल था, मान था, खातिर थी, मगर लक्ष्मी नहीं थी। सदा बैरागी-सा डाँवाडोल। दवा का दाम नहीं, मंत्रगुण की दक्षिणा नहीं। भगवान की सृष्टि और गुरु के दान का भी दाम लेना चाहिए भला ? या कि चाँदी-सोने में इन दो चीजों की कीमत ही हो सकती है ? नियम तो यह है कि यदि कौवे के मुँह से भी सुनो कि विष से किसी की जान जा रही है, तो कौवे से तुरत पूछो—कहाँ ? किस की ? और सुनते ही पल्ले घर की साग-रोटी बाँधकर वहाँ चल दो—उसकी जान बचाकर घर वापस आओ। खाली हाथों जाओ, खाली हाथों लौटो। ऐसों के घर लक्ष्मी कहाँ से हो ? ये सदा गरीब होते हैं। सिर्फ जात-कुल-मान था—समाज के शिरोमणि चाँद सौदागर के श्राप से वह भी जाता रहा। ब्रह्मा की सृष्टि के आरंभ से ही संताली पहाड़ पर बसने की सनद थी; दैवी चक्र से, नियति की चाल से वह भी रद्द हो गई। विष-बैदों का रूप साधु-संन्यासियों जैसा था, उनके अंगों की जड़ी-बूटी, ओषधि की गंध विषधर भी बर्दाश्त नहीं कर सकते थे, पर मनुष्यों को वह गंध दिव्य लगती। उनके

उस रूप पर स्याही पुत गई, चाँदो राजा के शाप से वह गंध हो गई दुर्गंध। शर्म से सिर नवाए जड़ी-बूटी का बोझा, साँपों के पिटारे और माटी के बर्तन लिए वे सब निकल पड़े। संताली गाँव की सीमा के बाहर, जहाँ काली कन्या के रूप में उसने काल-नागिन को देखा था, सिरमौर वैद ठिठक गया। सारी बातें याद आ गईं। वह खीझकर चीख उठा—उफ, मायाविनी! तेरे छल में सारा कुछ गँवाया और तुझे भी? वचन देकर तूने उसे भंग किया ही सर्वनाशी!

कंधे की बहँगी के पिटारे से सिसकारी देकर कोई बोल उठी—नहीं, नहीं, बाबा, मैं हूँ। तुम्हारे साथ ही हूँ।

और पिटारे का ढक्कन उठाते ही फन उठाए काले माणिक के हार जैसी चमकती छटा लिए काली नागिन डोल उठी। झपट्टा मारने की तरह वह सिरमौर वैद की छाती की ओर कूदी। वैद ने उसे गले से लगा लिया। वह वैद के कान के पास झूमने लगी। फुसकार में बोली—नाग के कहे और वैद-वाक्य में फर्क नहीं है बाबा। वचन देकर नाग उससे नहीं पलटते। चाँद के हुक्म से तुम लोगों की बसने की जगह छिन गई, माँ विषहरी की आज्ञा से तुम्हें वास का नया स्थान मिलेगा। गंगा की गोद में वह चलो—माँ गंगा स्वर्ग की बेटी है, वह धरती पर बहती तो हैं, पर धरती से परे की है। गंगा का पानी जहाँ तक माटी को ढँक लेता है, वहाँ तक गंगा की सरहद है। गंगा के किनारे उपजाऊ माटी पर जहाँ भी तुम चाहो, वहीं अपना बसेरा बाँधो। वहाँ चाँद का हुक्म नहीं चलेगा। चाँद ने तुम्हारा जात-कुल लिया, माँ विषहरी ने तुम्हें नया जात-कुल दिया। तुम किसी का अन्न नहीं खाओगे, तुम्हारा जल, तुम्हारा फूल माँ विषहरी अपने माथे पर लेंगी। तुम्हारी यह जात नहीं जाएगी। चाँद के आगे तुम्हारा रंग काला हो गया है, माँ की दया से उसी काले रंग में मेरे रंग की चमक आ जाएगी। माँ ने धन्वंतरि की विद्या से परे नया मंत्र दिया है, उस मंत्र से दुनिया के सारे जीव-जंतु वश मानेंगे। नाग का कैसा ही कठिन डँसना हो, वह डँसना अगर काल का न हो तो इस मंत्र से विष कपूर के समान उड़ जा[illegible]

और, माँ ने तुम्हें यह नया अधिकार दिया कि तुम गृहस्थों से पेट [illegible] अन्न, तन ढँकने के लिए वस्त्र ले सकते हो। और उन्होंने तुम्हें

का अधिकार दिया है, मेरा विष निकालकर तुम वैदों को बेचना, उस विष को वे शोध लेंगे, तो अमृत होगा। उस अमृत की सूई की नोकभर मात्रा से मरता हुआ आदमी जी उठेगा। बोली बंद हुए के बोल फूटेंगे, पंगु के शरीर में जान आएगी। और बाबा, मैं तुम्हारी काली बिटिया जो बना थी सो सदा बनी रहूँगी। तुम्हारे पिटारे में नागिन बनी रहूँगी, तुम मुझे नचाओगे, मैं नाचूंगी। मैं तुम लोगों के यहाँ बेटी बनकर भी जन्म लूंगी। तुम सिरमौर वैद हो, तुम लक्षण देखकर मुझे पहचान लोगे। मेरा प्रथम लक्षण होगा कि उस कन्या का पति नाग के विष से मरेगा, वह पाँच ही साल की उम्र में विधवा बनेगी। फिर सोलह की उम्र तक उस लड़की का व्याह मत करना। सोलह साल होते-होते उसमें नागिन के लक्षण प्रकट होंगे। तुमने कल रात मेरा जैसा रूप देखा, वैसा ही रूप। उसके कपाल पर चक्र का चिह्न दिखेगा। वही लड़की तुम सब की विषहरी पूजा का भार लेगी। तुम सबका कल्याण करेगी वह, तुम्हारी आज्ञा पर चलेगी, तुम्हें माँ विषहरी के मन का मतलब बताएगी।—चलो बाबा, नाव खोलो। मैं तुम्हें रास्ता दिखाती हूं।

गंगा की गोदी पर रात के अंधकार में नाव बह चली।

दिन में बिहुला का बेड़ा पानी में बह चुका था।

दिन भर जंगल में मुंह छिपाए रहकर रात में विषवैदों ने अपनी नावें खोल दीं। वे चंपानगर, संताली पहाड़ की सीमा से चल दिए। नाव पर फन फैलाए खड़ी काल-नागिन बताने लगी—हाँ, अब बाएँ मुड़ो! दाहिने। आसमान में बादल छाए, नागिन ने फन का छाता फैलाया। आँधी आयी, नागिन ने अपने विषैले निश्वास से उसे उड़ा दिया। सवेरा हुआ। अगुआ ने देखा, नावों की कतार में से आधी नावें नहीं हैं। नागिन ने कहा—उन सबने तुम्हारा साथ छोड़ दिया बाबा! वे पतित होकर यहीं रह गए, जमीन पर उनको जगह नहीं रही, वे यहाँ की नदी पर नावों में ही घूमते फिरेंगे।

दूसरे दिन सुबह, नावों का काफिला जब पद्मावती के बीचोंबीच पहुँचा, तो देखा गया, और भी आधी नावें नहीं हैं। रात के अंधकार में दिशाहीन बहते चलने के भय से उन्होंने चुपचाप किसी घाट पर नावें बाँध

ली। वे भी वहीं रह गए।

अंत में तीन नावें इस हिजल बिल के किनारे आ लगीं।

नागिन ने कहा—यहाँ माँ विषहरी का आसन है। यहीं पानी के नीचे मैया ने चांदो सौदागर के सात जहाजों को छिपा रखा था।

सिरमौर वैद ने कहा—तो यहीं घर बसाऊँ?

—गंगा मैया के चौर पर जहाँ जी चाहे, घर बसा सकते हो। बनाओ, यहीं बनाओ। हिजल बिल में नाले-नहरों की कमी नहीं। यहाँ घड़ियाल रहते हैं—इसका नाम है हंगरमुखी। इसके पास ही वह रहा मगर नाला, उसके पास बतखटाल।

नाले-नहरों का अंत नहीं है यहाँ। कर्कटी नाला, चित्तीनाला, काँदने गड़ानी[1]। यह हिजल का वह हिस्सा नहीं है, जिसे लोग-बाग जानते हैं। उस तरफ जाने और कितने नदी-नाले हैं।

हम यहीं नाव लिये घुस पड़े।

तीन नावें घाट पर बँध गईं। घासवन के अंदर हमने मचान बाँधे। तीन घरों से नए सताली गाँव की बुनियाद पड़ी।

सताली में तीन से तीस घर हो गए विष-वैदों के।

शरत की शुरुआत। आसमान साफ हो आया था। मेघों में धुनी हुई रुई का रंग और शोभा। अँधेरे पाख की पंचमी। रात के दस दंड पार करके कृष्णा पंचमी का चांद उगा। आसमान में पूरब से पश्चिम क्षितिज तक चाँदनी फैल गई—सादे मेघों की बड़ी-बड़ी चट्टानें आकाश में तैरने लगीं। हिजल के घासवन में सादे फूल फूलने लगे थे, अभी भी पूरी तरह खिलकर दूध जैसे सफेद नहीं हो पाए थे। उस पर पड़ रही थी चाँदनी।

हंगरमुखी के मोड़ों में घूमते हुए आज अगर कोई सताली के घाट पर जाए तो वहाँ तीस-चालीस नावें बँधी मिलेंगी। हर नाव पर रोशनी, दीए की रोशनी, पर किसी नाव पर आदमी नहीं। दूर कहीं बाजा बजता होगा—घाट पर पहुँचने से पहले से ही सुनाई देगा।

---

१. जहाँ रुलाई लोटती है।

बीन की न टूटने वाली स्वरलहरी के साथ नगाड़े की आवाज। उसके साथ झन-झन-झनन्—धातुओं की अजीब झनकार। उस बाजे को सुनकर तन-मन अजीब ढंग से सिहर उठेगा। साथ-ही साथ समवेत स्वर में संगीत—ऐ! ओ!

और जरा आगे बढ़े कि मोटे गले का गीत—

नाच अरी नाच, मेरी काली नागिन रे!
ऐ! ओ!
तेरे लिए दुःख मेरा सोना गया वन रे!
ऐ! ओ!
मुरली बाजे कदम की छैंया सूना राधा का मन
ऐ! ओ!
कालीदह के पानी में जग उट्ठी काली नागिन,
ऐ! ओ!
मोहन मुरलीधारी का मन मेरा डगमग डोले!
ऐ! ओ!
कूद पड़ा पानी में कान्हा राधा-राधा बोले!
ऐ! ओ!
काली काल नागिनी सोहे कान्हा चाँद बगल में!
ऐ! ओ!
दो-दो नील कमल फूले हैं कालीदह के जल में!
ऐ! ओ!

घाट पर अपनी नाव बाँध दीजिए। होशियारी से उतरिए। सामने मिलेगी पतली-सी पगडंडी। दोनों ओर ऊँची घास—बीच से चला गया है वह पतला रास्ता। खूब साफ-सुथरा। जैसे आज ही छील-छाल कर साफ किया हो। रास्ते के किनारे खड़े होते ही धूप की मीठी गंध मिलेगी। धूप के साथ ये देवदारु की गोंद और मोथे की जड़ की बुकनी मिला देते हैं। बाजे की आवाज अब ऊँची हो उठेगी। एक ही सुर में बजता चला जायगा—

झन-झन-झनन्, झन-झन-झनन्।

चिमटे के ऊपर के कड़े पीट रहे हैं। मजीरे की तरह ताल-ताल प

उस दिए वचन का आज भी इधर-उधर नहीं हुआ। पाँच साल की उमर से पहले जो लड़की विधवा होती है, उस पर सभी सँपेरों की निगाह सतर्क रहती है। सँपेरों की लड़की के ब्याह का समय अन्नप्राशन के बाद ही होता है। छः महीने से लेकर तीन साल के अंदर ब्याह हो जाता है। सँपेरों के लड़के साँपों से खेलते हैं। उनका सारा कारोबार साँप का। माँ मनसा की कथा में आता है, नर और नाग साथ नहीं बसते। लेकिन संताली गाँव में नर-नाग का साथ ही वास है। सेवा में त्रुटि होती है, नाग डँसता है। विषहरी के वरदान से वह विष मंतर से उतर जाता है। लेकिन जो डँसना नियति का लिखा होता है, उसका कोई उपाय नहीं। नाग के दाँतों में मौत आ बैठती है। मौत नाग के जहर में अपनी शक्ति घोल देती है। मल्लाह पानी में डूबकर मरते हैं, लकड़हारे पेड़ से गिरकर मरते हैं; लड़ाके हथियारों के वार से जान गँवाते हैं।

महादेव सँपेरे ने कहा—मौत बहुरूपिया है बाबा। मनुष्य की श्रेष्ठ कामना का धन है अन्न-जल। वह उसमें से भी आती है। तो सँपेरे की मौत साँप के मुंह से आएगी, इसमें आश्चर्य क्या है! लेकिन जो साँप के काटे मरते हैं, उन सबकी स्त्री नागिनी कन्या ही नहीं होती है, जो होती है धीरे-धीरे उसके अंगों में लक्षण फूट उठते हैं। सँपेरों में विधवा-विवाह होता है, और फिर छोड़ने का रिवाज भी होता है। लेकिन वैसी लड़कियों का दुबारा विवाह सोलह साल से पहले नहीं होता। सोलह साल तक वैसी लड़कियों पर निगाह लगी रहती है।

नई नागिनी कन्या के प्रकट होते ही पुरानी को हट जाना पड़ता है। वह गाँव के किनारे एक छोटे-से घर में दूसरे जनम के भाग्य के लिए माँ विषहरी को भजती रहती है।

एक सरदार सँपेरे के समय में दो-तीन नागिनी कन्याओं का आसन पार हो जाता है।

तीन

कितने सिरमौर सँपेरों का समय बीत गया, यह एक काल-पुरुष ही जानते हैं। इसे याद रखने का साध्य क्या मनुष्यों का है ? लेकिन मूल सरदार सँपेरा था विश्वंभर। सँपेरों को उसका नाम ही याद है। कहते हैं, आदि-पुरुष विश्वंभर। सँपेरों के कुल में स्वयं शिव ने जन्म लिया था।

विश्वंभर स्वयं जहर पीकर दुनिया को अमृत देते हैं। उनकी आँखें झीमती रहती हैं। सरदार सँपेरे विश्वंभर से हूबहू मेल है उनका। इसी विश्वंभर ने घर-द्वार, जात-कुल लेकर सताली गाँव की नींव डाली थी। बुढ़ापे में उसने फिर से शादी की थी। बच्चा हुआ काले बादल में ढँका चाँद-सा। लेकिन वह कहाँ आयी ? काल नागिनी ने तो कहा था कि वह सँपेरे कुल में बेटी होकर जन्म लेगी—वह कहाँ आयी ? यह तो बेटी के बदले बेटा पैदा हुआ! विश्वंभर ने लंबी उसाँस ली। सँपेरों के विधाता लेकिन हँसे। विश्वंभर का बेटा, बारह की उम्र होगी, देखने में लगता, सोलह साल का जवान हो। मछली की तरह साँपों को पकड़ता। पेड़ पर चढ़कर खदेड़कर बंदर को पकड़ लेता। जादू में भी हाथ की वैसी ही सफाई। उसे अपने बगल में बिठाए सरदार सँपेरा एक दिन यही सोच रहा था कि तीन साल की एक काली दुबली लड़की आयी—गमछा पहने, घूँघट काढ़े वह बहू बनी थी। आकर सामने खड़ी हो गई। विश्वंभर ने हँसकर कहा—कौन है री ! लड़की पड़ोसी की बेटी थी। नाम था दधिमुखी। उसने घूँघट खोलकर विश्वंभर को दिखाते हुए कहा—मैं उसकी बहू हूँ। मैं उससे ब्याह करूँगी। विश्वंभर की चिन्ता खुशी की लहर में बह गई। बोला—ठीक है, मेरे बेटे की बहू तू ही बनेगी। विश्वंभर ने जो कहा, वही किया। धूमधाम से बेटे का ब्याह किया। लेकिन सात दिन के अंदर ही साँप के डँसने से बेटा चल बसा। विश्वंभर चौंका। वह बेटे के लिए रोया नहीं—दधिमुखी पर ध्यान रखने लगा। जब उस लड़की की उमर सोलह साल की हो गई, उसके माँ-बाप उसके ब्याह का जतन करने लगे, तो एक दिन, विष-पूजा के दिन सरदार सँपेरा चिल्ला उठा—जय विषहरी !

अपनी झीमती हुई आँखों से उसने उस लड़की के कपाल पर नाग

देखा। उसने दोनों हाथों से उसके मुंह को पकड़कर गौर से देखा। देख-कर बोल उठा—हूँ-हूँ-हूँ।

—क्या है ?

—नागचक्र।

—कहाँ ?

—इस लड़की के कपाल पर।

बार-बार अपनी गरदन हिलाकर वह बोल उठा था, इसीलिए। इसी-लिए। इसे देने के लिए ही माँ ने मेरे बेटे की वलि ली।

और वह चीख उठा, वजा-वजा, नगाड़ा वजा, चिमटा वजा। धूप-गुग्गुल ले आ, दीया ला, दूव-केला ले आ। माँ विपहरी के थान पर घट रख। जिसने वचन दिया था, वह आयी है।

उस समय टोले में सँपेरों के तीन ही घर थे। यह संताली वसने के समय की वात है।

उसके वाद से कितने सरदार सँपेरों का समय गया, उन्हें इसकी याद नहीं। यही कहते हैं, इसे एक कालपुरुष ही जानते हैं।

तीन सरदार सँपेरों की याद है।

शिवराम कविराज ने कहा, महादेव सँपेरे को मैंने पहली वार अपने गुरु धूर्जटी कविराज के साथ संताली गाँव में देखा था। उसके वाद वे लोग गुरु के आयुर्वेद-भवन में आए। क्वार के शुरू में वे लोग वहाँ आया करते थे। सँपेरों की नावें गंगा के घाट पर लग जाती थीं। रूखे काले वाल, देह का रंग चिकना काला, गले में तावीज—तावीज के साथ पत्थर, जड़ी-बूटी। औरतों का अजीव वाना। उनके वदन की वू ही वता देती थी कि ये विप-सँपेरे हैं। उनकी नावों की वनावट, नावों पर लदे सांपों के पिटारे, एक ओर वँधी वकरी, नाव की टप्पर की एक तरफ वँधा वंदर—यह सव देखते ही गंगा किनारे के लोग ठिठक जाते। कहते—सँपेरों की नावें हैं।

धूर्जटी कविराज के आयुर्वेद-भवन में, जय विपहरी कहकर वे आ खड़े होते थे। सवके आगे महादेव होता।

जय विपहरी के वाद ही वे कहते—जय वावा धन्वंतरि। और फिर

ढोल से आवाज निकालते—धुन-धुन् ! बीन में फूंक मारते—पूँ ऊँ ऊँ। चिमटे के कड़े बज उठते—झन-झन-झनन् ।

सौम्यमूर्ति आचार्य मुसकराते हुए बाहर जा खड़े होते। होंठों पर मुसकान लिए आदर से कहते—आ गए !

हाथ बाँधकर महादेव कहता—यजमान का घर,अन्नदाता का आँगन, धन्वंतरि बाबा का आसन—यहाँ न आएँ तो कहाँ जाएँ ? दाना कौन देगा ? बाबा धन्वंतरि, आपकी खरल के सिवा हम यह गरल डालें भी कहाँ। इसे शोध कर सुधा कौन बनाएगा ? इसे पानी में डालें तो जीवों का हनन, माटी पर फेंकें तो नरलोक का सर्वनाश। आपके सिवा और गति कहाँ है, कहिए ?

महादेव सँपेरा घने जंगल के भीतर का अटूट कोई पत्थर का मंदिर हो मानो। किस पुराने युग में जाने किस साधक ने अपने इष्ट देवता का मंदिर बनाया था,बड़ी-बड़ी चट्टानों का मंदिर। उसमें कोई कारुकार्य नहीं, पलस्तर नहीं,ऊबड़-खाबड़ बनावट; जमाने से बरसात का पानी खा-खाकर काई लग गई है, तिस पर पेड़ों की फाँकों से धूप लग-लगकर काई की हरियाली में खड़िया-से सादे दाग पड़ गए हैं; पेड़ों से गिरे सूखे पत्तों का चूरा, सूखे फूलों की बुकनी। हवा में उड़ती हुई जंगल की धूल ने भी उसे धूल-धूसर कर दिया है। उसके गले और हाथ में जड़ी-बूटी की माला देखकर लगता, मंदिर पर जंगली लतरों का जाल-सा बिछा है। माथे के रूखे बाल देखकर लगता, मंदिर पर बरसात में जो घासें उगी थीं, सूखकर अब वे सफेद हो खड़ी हैं।

शिवराम ने उसे संताली गाँव में जाकर पहली बार देखा था। नाव पर अपने गुरु के साथ वहाँ विष खरीदने के लिए गए थे। वहाँ उनका गाँव, घर, माँ बिषहरी का आसन, हिजल बिल और उनकी नागिनी कन्या शबला को देख आए थे। उनका मनसा का गीत, बाजा सुन आए थे। नागिनी कन्या का ठुमक-ठुमककर नाचना, माथे पर घट लिए घूमना देख आए थे। देख आए थे जाने कितनी तरह के साँप। कैसी-कैसी चित्र-विचित्र देह, कैसा-कैसा मुंह, कैसा-कैसा रंग ! भूल नहीं सके। खास करके उस काले, लड़की और पत्थर के मंदिर-से तने खड़े उस बूढ़े को !

क्वार के अंतिम दिनों में अचानक फिर एक वार देखा।

इस कहानी के कहने वाले शिवराम कविराज ही हैं। वूढ़े, सौम्यदर्शन
शिवराम कहते गए यह कहानी। विप-वैदों की यह कहानी अमृत के समान
नहीं, विप की वेदना से वड़ी ही करुण है।

क्वार का अंत। शरत् की साफ धूप हेमंत के आगमन से कुछ पीली
हो आयी। शिवराम कविराज कहानी कहते गए।

शहर में गुरु के दवाखाने में रोगियों की भीड़। सव वैठे हुए हैं। रास्ते
पर वैलगाड़ी और डोली-पालकियों का जमाव। दूर-दूर से रोगी आए हैं।
कमरे में वैठे आँखे वंद किए गुरु एक-एक की नाड़ी देख रहे हैं, रोग के उप-
सर्ग की कथा सुन रहे हैं। मैं उनके पास ही खड़ा था कि वाहर झन-झन-
झनन् की आवाज हुई। आवाज के साथ ही किसी ने हाँक लगाई—जय
माँ विपहरी ! पाँयँ लागी, धन्वंतरि वावा ! उसकी वात खत्म होते न होते
ढाक वज उठा—गुम्गुड़ुम। और साथ ही वज उठा वीन—पूँ ऊँ ऊँ, पूँ
ऊँ ऊँ।

गुरु ने जरा देर के लिए आँखें खोलीं। कहा—महादेव की टोली आयी
है। उन सवको रुकने को कहो।

मैं निकला। देखा, कंधे पर साँपों के पिटारों की वहँगी लिए संताली
गाँव के सँपेरे खड़े हैं। उन सवके आगे खड़ा है सीधा तना सख्त पेशियों
वाला वूढ़ा सँपेरा महादेव। उसके पास वह अनोखी काली सँपेरिन—
शवला। नागिनी-कन्या। क्वार के सवेरे की धूप। वारहों महीने में सवसे
ज्यादा उज्ज्वल धूप। दो महीने वरसात में नहाकर किरणों के अंगों से
उस समय जोत निखरती है जैसे, उसी धूप की छटा उस काली लड़की पर
पड़ रही थी—उसके अंग से भी काली छटा छिटक रही थी। सिर्फ सिर के
वाल रूखे—सवेरे की हवा से विखरे-से उड़ रहे थे। पहनावे में टुकटुक लाल
साड़ी, कमर में फेंटा वँधा।

मैंने कहा—तुम लोग वैठो, कविराज जी आ रहे हैं।

महादेव ने कहा—तुम चीन्हे-चीन्हे से लग रहे हो, भैया। कहाँ देखा जानें तुम्हें।

शबला ने हँसकर कहा—तेरी नजर अब मंदी पड़ गई, बुड्ढे। आदमी को पहचानने में देर लगती है। यह वही जो उस बार बाबा के साथ हमारे गाँव गए थे। बाबा के चेला, छोटे धन्वतरि।

शिवराम ने कहा—सँपेरिन की जबान में जितना जहर, उतना ही शहद। उसने मेरा नाम रखा था, छोटे धन्वतरि।

खिलखिलाकर हँसते हुए शबला ने कहा—क्यों बुड्ढे, कैसा नाम रखा मैंने ? ऐं ?

महादेव ने रुष्ट-सा होकर कहा—हूँ !

भादों के अंत में आखिरी नागपंचमी को माँ विषहरी की पूजा खत्म करके उन लोगों की यात्रा शुरू होती है। वसंत में जैसे सखुआ में नए पत्ते निकलने के बाद संताल लोग शिकार को निकलते हैं, पिछले दिनों शरत-काल में दशहरा समाप्त करके राजा लोग दिग्विजय को निकलते थे, व्यापारी जैसे नावों के बेड़े खोलकर व्यापार को निकलते थे, आज भी छोटे दूकानदार जैसे बैलगाड़ियों पर सामान लादकर मेला-मेला घूमने के लिए बाहर निकल पड़ते हैं, वैसे ही इन सँपेरों का भी निकलना कुल-व्यवसाय, खानदानी पेशा है। हुगरमुखी, मगरखाली, हाँसखाली होकर इन सँपेरों की नाव की कतारें माँ गंगा के पानी में निकल पड़ती है। नाव में होते हैं साँपों के पिटारे, मिट्टी के बर्तन रसोई के, तमाशा दिखाने के लिए बंदर, बकरी और आदमी। ऐसे ये विष-वैद ही नहीं निकलते हैं, और-और जात के भी जो सँपेरे होते हैं, वे भी निकलते हैं। बहुतेरे नावों में, बहुतेरे कंधे पर पिटारों की बहँगी लिए। यह निकलना उनकी जाति का रिवाज है, जाति-धर्म। वर्षा बीती—जाने कितने जंगल-पहाड़ बहाकर कितना पानी समुंदर में जा गिरा, कितने इलाके बह गए, कितने इलाकों के गाँव कितने पेड़, बीज, जानवर, कितने लोग बह गए उसके साथ; उनमें से कितनों की जानें सागर ने बलि ली, कितने किसी तट में लग गए, जमीन पर [illegible]

बीज अगली बरसात के इंतजार में हैं, बरसात में अँकुरा कर वे सिर उठाए खड़े हो जाएँगे। सांपों ने गढ़ों में बसेरा लिया, वे इस इन्तजार में हैं कि कब किस साँपिन की कटहली चंपा जैसी खुशबू मिलेगी। और साँपिन इस आसरे है कि कब उसके शरीर से वह खुशबू निकलेगी और उससे खिंचकर उनके पास साँप आएगा! ये लोग उन्हीं साँप-साँपिनों को गढ़ों और नदी-नालों के किनारे खोजने के लिए निकलते हैं। इस-उस इलाके में घूमते हैं, अपने बँधे-बँधाए वैद-कविराजों के यहाँ जाते हैं। उनके सामने कालनागिन का जहर निचोड़कर बेचते हैं; गाँव-गाँव में गृहस्थों के यहाँ खेल-तमाशा दिखाते हैं—साँपों का नाच, बंदर-बकरी का खेल-तमाशा। एक से दूसरे जिले में—महीनों बीत जाते हैं और तब फिर एक दिन अपने घर लौट आते हैं। ये विष-वैद नावों से निकलते हैं, पानी ही पानी चलते हैं, गंगा से दूसरी नदी में। चले आते हैं कलकत्ता तक, जहाँ साहबों का नया शहर बन गया है, बड़े-बड़े अमीर लोग रहते हैं, बहुत-से कविराज भी हैं। वहाँ भी जहर बेचते हैं। उसके बाद जाड़ा बढ़ जाते ही लौट पड़ते हैं। गंगा का पानी घट गया होता है, बिल के किनारे-किनारे पानी सूखकर माटी जग आती है। इसके बाद हंगरमुखी, मगरखाली का पानी सूख जायगा, तो नाव लेकर संताली गाँव के घाट पर नहीं जाया जा सकेगा। और फिर सर्दी से नाग-नागिनें कातर हो उठती हैं, उनकी ठंडी देह जर्जर हो आती है, सिर उठाने की शक्ति नहीं, फुफकार कर खड़े होकर नाच नहीं सकतीं। ठोकर लगाइए तो जरा फोंस करके हिल-डुलकर यों ही रह जाती हैं। विष-वैदों का मन भी कातर हो उठता है—ये साँप विषहरी मैया की संतान हैं, इन्हें वे मार नहीं डालना चाहते; ये इन्हें नदी के सूने किनारे, खुली बैहार में या जंगल में छोड़ देते हैं। कहते हैं—जा, अपनी जगह जाओ। मैया तुम्हारी खैर करें। साँपों को छोड़ देने के बाद बाजार से सौदा-पाती करके पिटारे लिए संताली लौट आते हैं। नदी-नालों का सिर्फ पानी ही तो नहीं सूखता, गंगा के चौंर पर, बिल के चारों ओर कास-वन में घास पक जाती है। उन कास-घास को काटना होगा, सुखाना होगा, उनसे घर का छौनी-छप्पर करना होगा। इसके सिवा इतने दिनों में हिजल के चारों ओर खेतिहर लोग जुट जाते हैं। हल जोतकर वे गेहूँ, जौ, चना बो चुके होते हैं।

चारों ओर हरियाली छायी होती है। यों हिजल के चारों ओर बारहों महीने हरियाली होती है, पर यह हरियाली कुछ और ही होती है । इस हरियाली मे सिर्फ रग ही नही होता— रंग और रस एकाकार। फसल काटने के समय वे फसल बीनकर अपने घर ले जाते हैं । माघ महीने मे शादी-ब्याह की भीड । सताली मे छ: महीने पानी रहता है, छ: महीने सूखी जमीन। पानी मे से जमीन नही निकल आने से शादी-ब्याह कैसे हो ? और फिर हजारों-हजार की तादाद मे बतखें आ पड़ती हैं—वे आसमान मे उड़ती है और पेंक-पेंक, केंउ-केंउ, किच-किच करती रहती हैं।

वे उन्हे पुकारती हैं।

सर्दियों की शुरुआत में नाव के ऊपर जंगली बतखों के उड़ जाने से ही सरदार सँपेरे का हुक्म हो जाता है—नावों का मुह फेर दो ! चलो, सताली चलो ।

नागपंचमी मे सताली से निकलकर घूमते-घामते महादेव की टोली ने आकर शहर मे नावें बाँध दी । धन्वतरि बाबा को पहले विष बेचे बिना वे और कहीं नहीं बेचते । धन्वतरि बाबा से ज्यादा आदर उन्हे कोई नही देता । और साँप पहचानने मे बाबा जैसा उस्ताद उन्हे दूसरा देखने को नहीं मिला ।

नावों को शहर के एक किनारे बाँध दिया । गगा के किनारे थोडी-सी खुली जगह—खासी साफ-सुथरी । उसमें तीनेक बडे-बडे पेड । किनारों के कटाव से उन पेडों की जडे आँकी-बाँकी बाहर निकल आयी हैं। उन्हीं जडों में नावों की डोरियाँ बाँध दी हैं। पेड़ों के नीचे की जगह को और साफ-सुथरा करके उन सबने अपनी गिरस्ती बसा दी । डाल से छीके झुला दिए, उन छींकों म है उनकी रसोई के बर्तन । उनके पास ही दूसरे छींके पर साँपो के पिटारे । नीचे चूल्हा, चूल्हे के पास खजूर के पत्ते की चटाई । घास पर सूख रहे हैं गीले कपड़े ; जडों में बँधे बकरी-बदर । बच्चे नगे बदन धूल में घिसटते फिर रहे हैं, नाक से नेटा बह रहा है, माटी खा रहे हैं, नगा रहे हैं। उनमे कुछ बड़े बच्चे धूल लगाए घूम रहे हैं, उनमे कुछ जो बडे हैं, वे लकड़ी-काठी चुनने चल रहे हैं । कोई-कोई पेड की डाल पर चढकर झूल रहे हैं। हट्टे-कट्टे सँपेरे अपनी बिसात लेकर निकल पडे हैं । साथ मे युवती सँपेरि

धूर्जटी कविराज निकले। खिले चेहरे और प्रसन्न स्वर से समादर करते हुए कहा—आ गए, महादेव !

हाथ जोड़कर महादेव ने कहा—जी, आ गया। यजमान का घर, अन्नदाता का आंगन, धन्वंतरि का थान—यहाँ न आएँ तो जाएँ कहाँ ? विष-वैदों का सहारा नागों का विष है बाबा। मनुष्य के लहू को एक बूंद छू जाय, तो मौत : हलाहल, गरल ! इस चीज को एक तो भोले बाबा शिव ने धारण किया है और दूसरा कोई धारण कर सकता है, तो वह है बाबा धन्वंतरि की खरल ! उस खरल के सिवा इसे और कहाँ फेंकूँ ? पानी में डालूँ तो जीव मरते हैं, जमीन पर फेंकूँ तो नरलोक की तबाही। एक आप ही तो हैं, जो इसे अमृत बना सकते हैं।

ये बातें उनकी पीढ़ियों से बँधी-बँधाई हैं।

सबने धरती से माथा टेककर कविराज को प्रणाम किया—पांयँ लागी।

कविराज ने हँसकर सबसे कुशल पूछा। उसके बाद शबला से कहा—तू इतनी चुपचाप क्यों है, बिटिया ?

दांत निपोरकर तीखे स्वर में झट महादेव बोल उठा—हाँ बाबा, यही पूछिए इससे, यही पूछिए। मुझसे क्या कहती है, जानते हैं ? कहती है, तू बुड्ढा हो गया, तेरी नजर मंदी पड़ गई। कान का कमज़ोर हो गया, शोर न करो तो चुप बैठा सोचता रहता है, और ही भाव से देखता है। नागिनी अब केंचुल छोड़ेगी बाबा !

औचक ही कालनागिनी जैसे फन तान लेती है, वैसे ही शबला एक बार तन गई। लगा, झपट्टा मारने जैसा हमला करके बूढ़े से कुछ कहेगी। लेकिन दूसरे ही क्षण जरा हँसकर उसने माथा झुका लिया। बोली—बाबा, नागिन जब छोटी रहती है, तो किलबिलाती फिरती है। घास-वन में हवा भी चलती है तो वह फन फैला देती है। उमर बढ़ती है, दुनिया को समझती-बूझती है, तो वह सावधान हो जाती है। तब वह आदमी या जानवर को देखकर फुफकार नहीं उठती, चुपचाप भाग जाना चाहती है। निहायत जब लाचार हो जाती है, तब फन उठाती है। उसे अकल जो आ जाती है कि आदमी मामूली नहीं होता। उसके काटने से आदमी मरता है, पर

आदमी उसे छोड़ता नहीं, लाठी से पीटकर मार डालता है। नहीं मार पाता है, तो सँपेरे को बुलाता है। सँपेरा उसे पकड़ लेता है, पिटारे में भरता है, विष के दाँत तोड़कर नाच नचाता है। यह मौत से भी बदतर है। और फिर सँपेरे के हाथ की जलन बड़ी वाहियात होती है। मेरे शायद वही हुआ है बाबा, सँपेरे के पिटारे की नागिन, अपने अंग की ज्वाला में ही जल रही हूँ, यही मरण-ज्वाला है।

शबला हँसी। उसकी बातों में जैसा छिपा हुआ व्यंग्य था, वैसा ही और कुछ था। ठीक समझ नहीं पाया, महज आभास मिला। शिवराम बोले—मेरे गुरु जैसे रोगी को देखते हैं, वैसे ही कुछ क्षण शबला की ओर देखते रहे। बोले, शबला बिटिया साक्षात नागिनी-कन्या है।

महादेव बोल उठा—हाँ बाबा, गड्ढे में रहती है, खोंच लगने से फुफकारती नहीं, रास्ते के पास छिपी रहती है; आदमी तो आदमी, सँपेरे के बाप की भी मजाल नहीं कि अंदाजा लगा सके। ताक में रहती है, कब डँसे! क्षोभ, क्रोध दबाए मौके की ताक में रहती है।

उसकी सफेद दाढ़ियों के अंदर से फिर बड़े-बड़े दाँतों की दो पाँतें निकल पड़ीं। हँसने पर महादेव बड़ा भयंकर दीखता है, ज्यादा उम्र हो जाने से उसके बड़े-बड़े दाँत मसूड़ों को ठेलकर निकल-से आए हैं, इससे और भी बड़े लगते हैं। लाल और काले दागवाले बड़े-बड़े दाँत। उनमें से दो-तीन नहीं होने से खौफनाक लगते हैं।

—हाँ रे बुड्ढे, हाँ। सारा कसूर नागिन का। वह तो जनम की दोषी है। आदमी की आयु खत्म हो जाती है, नसीब का लिखा होता है, यम कहता है, तेरे जहर में मौत मिला दी है, जा, उसे काट खा। नागिन यम की खरीदी हुई दासी होती है, उसके हुक्म को टाल नहीं सकती—वह काटती है, आदमी मरता है और दोष नागिन का होता है। वह बेचारी राह-बाट में, जंगल-झाड़ी में घूमती-फिरती है, आदमी उसके माथे पर पाँव रखता है, पूँछ कुचल देता है और नागिन कभी गुस्से से, कभी अपनी जान की खातिर, कभी डर से काट खाती है। उसी बेचारी का कसूर होता है!

शबला हँसी; वही अजीब हँसी, जो हँसी वह इसके पहले भी एक

बार हँसी थी। उसके बाद बोली—ऐ बुड्ढे, बातों का दाँव-पेंच छोड़कर बाबा को साँप दिया। बाबा को काम बहुत है। तेरा-मेरा खेल, यह वह सदा देखें। तू मुझको चिढ़ायेगा तो मैं झपटूँगी, दाँत तोड़ देगा तो वे फिर निकलेंगे। कभी वे दाँत यदि तेरे चुभे, और भाग में अगर उसी विष से तेरा मरण लिखा हो, तो तू मरेगा। नहीं तो तेरे हाथ के पत्ते की जलन से मैं मरूँगी, मरूँगी तेरी लाठी की चोट से, तेरी जड़ी-बूटी की गंध से। ले, साँप दिया, निचोड़कर जहर निकालकर दे और चल।

धूर्जटी कविराज बोले—हाँ-हाँ, वही करो। तुम सरदार सँपेरे हो, उसके बाप हो। शबला नागिनी कन्या है, तुम्हारी बेटी है। बाप-बेटी का झगड़ा तुम आप मिटा लेना।

साँप का विष निचोड़ना देखा है?

विज्ञान के इस युग में उसके बहुत-से कौशल हो गए हैं। काँच की नली में विष निचोड़कर जमा कर लिया जाता है, वह कौशल बड़ा अनोखा है। लेकिन सँपेरों का कौशल शुरू से एक ही है। उसमें रद्दोबदल नहीं। उसकी चर्चा करने से वे हँसते हैं।

ताड़ का पत्ता और सितुही। वही सितुही, जो पोखरे में मिलती है। धनुष की प्रत्यंचा की तरह एक आदमी ताड़ के पत्ते को सितुही से लगाए रहता है और दूसरा आदमी साँप के जबड़े को दबाकर उसे 'हाँ' करा देता है। सितुही को साँप के मुँह में डाल देता है और साँप के जहर के दोनों दाँत उस ताड़ के पत्ते में चुभ जाते हैं। ताड़ के पत्ते के नुकीले किनारों के दबाव से विष की थैली दबती है और उधर विष के दाँतों के चुभे होने की स्वाभाविक क्रिया से दाँत की नली से विष सितुही में टप्-टप् टपकने लगता है। यह तरीका उनका ऐसा है कि जहर की आखिरी बूँद भी टपक जाती है। उसके बाद साँप तो सँपेरे के पिटारे में चला जाता है और विष चला जाता है कविराज के तेल भरे पात्र में। विष तेल पर वैसे ही तैरने लगता है जैसे पानी पर तेल। नहीं तो हवा से जम जाता है।

शिवराम कहानी कहते जाते—हमारे सामने ही हमारा विष लेने वाला पात्र रखा है। सँपेरों की टोली के आगे बैठ गया महादेव, उसके पास ही बायीं ओर शबला—सरदार सँपेरा और नागिनी कन्या—उसके पीछे और-

और सँपेरे। सँपेरे पिटारे बढाने लगे, महादेव पिटारे का ढक्कन खोलने लगा। मछेरे जैसे मछली पकडते हैं, यह पकड़ना भी वैसा ही भैया। एक हाथ में मुह और दूसरे से पूँछ पकड़कर पहले मेरे गुरु को दिखाता, गुरु लक्षण से साँप को पहचानते। सिर्फ काला रग होने से ही नही होता, काले साँप मे भी जातियाँ होती हैं। काले साँप की ओर देखिए तो देखेंगे कि उसमें सूई की नोक मे आँके हुए बिंदु-से बुदके हैं। फन के नीचे गले मे किसी के एक, तो किसी के दो या तीन माला जैसे घेरे पड़े होते हैं—सफेद-काले। किसी के बीच वाले निशान का रंग चपा फूल-सा होता है। फन पर चक्र बना होता है, वह भी जाने कितनी किस्म का। किसी का चक्र शख जैसा, किसी का कमल की कली जैसा और किसी के माथे पर एक चिह्न चरण का। किसी का काला रग जरा फीका, किसी के रग पर धूप की छटा पडने से और ही रग की चमक होती है।

गुरु ने कहा था, काल-नागिनी सिर्फ काली होती है। सुकेशी कन्या की तरह वेणी वाले उसके माथे पर चरण का चिह्न बना होता है। इसके सिवा जो साँप दीखते हैं, वे वर्णसकर हैं। काल-नागिनी के नाग नही होता। शंखनाग मे हुई सतति के माथे पर शंख का चिह्न होता है, पद्मनाग से पैदा हुए बच्चे के माथे पर पद्म का चिह्न—सब अपने-अपने कुल की छाप छोड जाते हैं। ऐसी छाप जहाँ देखने को मिले, समझो, उसके स्वभाव मे, उसके विष मे पितृकुल की परपरा है। खूब समझ लो, उनके विष मे ठीक काम नही होगा।

खैर, छोड़िए इन बातों को। यह हमारी जाति-विद्या की बात है। एक चुटकी सुघनी लेकर नाक पोंछ करके शिवराम ने कहा—महादेव धूर्जटी कविराज को नही जानता, सो नही। फिर भी वह अपनी जातिगत चालबाजी से बाज नही आया। एक-एक साँप निकालकर उन्हें दिखाने लगा।

—यह देखिए बाबा, इसकी बनावट और रग देखिए। चमकता काला रग। यह रहा चक्कर। पूँछ देख लीजिए।

—उँ हूँ। वह नही चलेगा। महादेव, उसे रखो।

—क्यों-क्यों? यह तो खास उसी जात का है।

—अरे भई, उसे रखो भी।

शबला ने कहा—रखो भी, बुड्ढे। यहाँ अपना जाति-स्वभाव छोड़। आखिर बता किसे रहा है तू ?

महादेव ने साँप रख दिया, लेकिन जलती हुई निगाह से शबला को देखकर बोला—तू चुप भी रह।

शबला हँसी।

देख-सुनकर धूर्जटी कविराज ने पाँच साँप चुन लिए। महादेव अब बैठ गया—वह साँप का मुँह पकड़ेगा और ताड़ के पत्ते से घिरे सिंगुही को पकड़ेगी नागिनी कन्या शबला।

जरा टेढ़े और सफेद दो दाँतों को देखकर शिवराम मानो मोहाच्छन्न हो गए थे। वह टेढ़ा, वह काँटे-सा इतना छोटा दाँत, उसके किनारे नन्हा-सा एक तरल बिंदु, उसमें कहाँ छिपी है मौत ? लेकिन है, उसी में वह है, इसमें संदेह नहीं। साँप की आँखों में पलकें नहीं होतीं, पलकहीन दृष्टि में उसकी सम्मोहन होता है। साँप की नजर से नजर मिला कर ताकते हुए आदमी के अवसन्न हो जाने की बात शिवराम ने सुनी है, लेकिन उस विष की बूँदें भरने वाले दाँतों की ओर देखकर अवसन्न होने की बात नहीं सुनी। वे मानो अवसन्न हो गए।

एक दीर्घनिश्वास छोड़ते हुए धूर्जटी कविराज ने कहा—उस बार जब तुम्हारी बस्ती में गया था महादेव, तो शबला बिटिया ने जो साँप दिया था, उस जात का साँप फिर नहीं मिला।

महादेव हँसा। बड़ी तीखी और सख्त थी वह हँसी। नाक की नोक फूल उठी; हँसी से उसके होंठ फैले नहीं, धनुष की नाईं टेढ़े हो गए। उसके बाद बोला—धन्वंतरि बाबा से तो कुछ अजाना नहीं। आपसे क्या कहूँ, कहिए।

उसने एक क्षण के लिए तीखी निगाहों से शबला की ओर ताका। ताककर बोला—इस जात के नसीब का नतीजा, रीत-चरित्र का दोष।

इसकी मति देखिए न ! —उसने उँगली से शबला को दिखाया।

उसी क्षण गुरु के शंकित और सतर्क गले से शिवराम चौंक उठे। सांप के दांत देखकर मोह में अवसन्न हो पड़े थे, वह मोह उनका टूट गया।

धूर्जटी कविराज शंका भरे स्वर में चीख उठे—शबला! शबला हँसी। हँसकर बोली—देखा है बाबा। हाथ मैंने ठीक मौके से हटा लिया है।

धूर्जटी कविराज ने कहा—होशियार, महादेव। क्या हो जाता अभी कहो तो ?

सच ही क्या हो जाता, यह सोचकर शिवराम सिहर उठे। आफत हो जाती। महादेव ने दो उँगलियों से सांप का जबड़ा दबाया था और शबला मिट्ठी पकड़े थी। उत्तेजित होकर महादेव ने आँखें फिराकर जिस वक्त दूसरे हाथ की उँगली से शबला को दिखाना चाहा, उसका वह हाथ, जिससे वह सांप को पकड़े हुए था, थोड़ा टेढ़ा हो गया, सांप का सिर कलट गया, ताड़ के पत्ते में चुभा उसका एक दांत पत्ते से निकल गया। महादेव की बात पर या उसके उँगली दिखाने पर प्रतिक्रिया से शबला यदि चंचल होकर पल के लिए भी नजर हटाती, महादेव की ओर ताकती, तो सांप का वह टेढ़ा और नुकीला दाँत तुरंत शबला के हाथ में गड़ जाता।

धूर्जटी कविराज ने तिरस्कार के स्वर में कहा—सावधान भैया, क्या होता अभी कहो तो ?

महादेव ने लापरवाही की हँसी हँसकर कहा—होता भी क्या बाबा ! उसके सुर में सुर मिलाकर शबला ने कहा—और क्या ! होता भी क्या ? नागिन अपने ही जहर से जल मरती। मानुष-तन की ज्वाला से बच जाती।

वह अजीब नँपेरिन लड़की खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसकी उस हँसी में सौ धारों में व्यंग्य मानो बिखर पड़ा।

महादेव का मुखड़ा थम-थम कर उठा। उसके बाद चुपचाप बड़ी सतर्कता से विष निचोड़ने का काम चलने लगा।

विष निकालना खतम हुआ। शबला ने कहा—तू धन्वंतरि बाबा के सामने ही सबका देना-पावना चुका दे। आप हिसाब कर दीजिए, बाबा।

महादेव ने आँखें तरेरकर उसे देखा, क्यों ?

—क्यों क्या ? बाबा एक कलम में हिसाब कर देंगे और जवानी

जोड़ते-जोड़ते तुम लोगों का सारा दिन वीत जायगा। क्यों भई, कहते क्यों नहीं हो सब ? जवान पर माटी लगा ली जो। एँ ?

एक सँपरे ने कहा—हाँ, ठीक तो है ! हाँ, क्यों भई ?—उसने सब की तरफ ताका।

हाँ-हाँ।—सबने कहा। किसी ने मुंह खोलकर कहा, किसी ने गरदन हिलाकर हामी भरी—हाँ-हाँ।

एक सुरीले मीठे गले की आवाज सुनकर शिवराम चौंक उठे—छोटे धन्वंतरि ! शिवराम ने खिड़की की तरफ देखा, वही सँपेरिन थी। तीसरा पहर वीत रहा था दिन का। छात्रों का प्रायः तीसरा पहर तक वैद-भवन के काम में वीतता है, उसके वाद जरा आराम। रोगी चले जाते हैं, वैद-भवन के किवाड़ वंद होते हैं, छात्र भोजन करते हैं। नहाना सवेरे ही हो चुका होता है। गुरु का विश्राम लेकिन उस वक्त भी नहीं होता, उन्हें संपन्न लोगों के यहाँ रोगी देखने के लिए जाना पड़ता है। वहुत वार ऐसे रोगियों के यहाँ भी जाना पड़ता है, जिन्हें हिलाया-डुलाया नहीं जा सकता। ऐसा ही समय था वह। आँगन सूना था, गुरु नहीं थे। उनके साथ दूसरे शिष्य गए थे, शिवराम का उस दिन विश्राम था। वे एक तरफ के छोटे-से कमरे में लेटे हुए थे—उनके सामने विष-शास्त्र की एक पोथी पड़ी थी। सँपेरों के जाने के वाद वे वही पोथी खोलकर वैठे थे। मगर पढ़ने में मन नहीं लग रहा था, कमरे की छत की ओर ताकते हुए सोच रहे थे—शायद सँपेरों की ही वात सोच रहे थे, उस अजीव सँपेरिन लड़की की वात, महादेव की भी। एक नशा-सा हो गया था मानो। सँपेरों के अनोखे कौशल, अनोखा साहस, द्रव्य गुण की उनकी अनोखी विद्या और सवसे ज्यादा उनकी रहस्यमय मंत्र-विद्या सीखने का आग्रह। उन पर नशा-सा छा गया था।

सँपेरों ने जव विष का अपना पावना चुका लिया, तो शिवराम महादेव से वातें कर रहे थे। वे उधर अपना हिसाव चुका रहे थे और इधर एक ओर महादेव निस्पृह-सा वैठा था। शिवराम ने उसे वुलाकर कहा—मुझे सिखाओगे ? अपनी थोड़ी-सी विद्या दोगे ? मैं दक्षिणा ूंगा उसकी।

महादेव ने कहा—दक्षिणा तो आप देंगे, समझा। लेकिन विद्या क्या एक-दो दिन में सीखी जा सकती है, आप ही कहिए ?

—सीखी तो नहीं जा सकती, पर कुछ चीजें तो एक-दो बार देखने से जानी जा सकती हैं। और फिर तुम लोग बताना, मैं लिख लूंगा। आखिर मैं सांप पकड़ना तो नहीं सीखना चाहता, सांप पहचानना जानना चाहता हूं। मैंने अपने शास्त्र में उनका लक्षण पढ़ा है, उन्हीं लक्षणों को मिलाकर सांप दिखाते हुए मुझे पहचान बता देना। जड़ी-बूटी चिन्हा देना, नाम बता देना। मैं लिख लूंगा।

—दक्षिणा क्या दीजिएगा, सो कहिए ?

—क्या चाहिए तुम्हें ?

—पाँच बीस रुपए। और एक रुपया बिषहरी मैया की प्रणामी। यानी एक सौ एक।

छात्र शिवराम एक सौ एक रुपया पाएं कहाँ से ? गुरु के यहाँ रहना, उन्हीं के अन्न पर गुजारा। लगभग प्राचीन काल की शिक्षा-व्यवस्था।

अन्त में बोले—भई, मैं पाँच रुपए दूंगा। विद्या मत सिखाना, सांप पहचानना सिखा देना।

महादेव राजी हो गया। बोला—शहर के वह दक्खिन सीधे नाक के सामने गंगा के किनारे चले आना। आधा कोस जाने पर एक आम का बगीचा मिलेगा, वहीं नदी किनारे मिलेंगे बरगद के तीन पेड़। देखिएगा, वहीं सँपेरों की नावें बँधी हैं। वहीं पर हम लोगों का अड्डा है।

शिवराम यही सब सोच रहे थे।

कि सुरीली और महीन आवाज कानों में आयी—छोटे धन्वतरि !

खिड़की के बाहर उसी अजीब सँपेरिन लड़की का मुखड़ा। होठों पर भरमुंह हँसी, आँखों की पुतलियों में मुसकान भरी पुकार। उन्हीं को पुकार रही थी वह। शिवराम ने कहा—मुझसे कह रही हो ?

—हाँ जी। तुम्हें छोड़कर और किससे ? तुम धन्वतरि भी हो और नन्हें भी। अभी तो मैंने छोटे धन्वतरि कहा ! सुनो।

—क्या ?

जोड़ते-जोड़ते तुम लोगों का सारा दिन बीत जायगा। क्यों भई, कहते क्यों नहीं हो सब ? जबान पर माटी लगा ली जो। ऐं ?

एक सँपरे ने कहा—हाँ, ठीक तो है ! हाँ, क्यों भई ?—उसने सब की तरफ ताका।

हाँ-हाँ।—सबने कहा। किसी ने मुंह खोलकर कहा, किसी ने गरदन हिलाकर हामी भरी—हाँ-हाँ।

एक सुरीले मीठे गले की आवाज सुनकर शिवराम चौंक उठे—छोटे धन्वंतरि ! शिवराम ने खिड़की की तरफ देखा, वही सँपेरिन थी। तीसरा पहर बीत रहा था दिन का। छात्रों का प्रायः तीसरा पहर तक वैद-भवन के काम में बीतता है, उसके बाद जरा आराम। रोगी चले जाते हैं, वैद-भवन के किवाड़ बंद होते हैं, छात्र भोजन करते हैं। नहाना सवेरे ही हो चुका होता है। गुरु का विश्राम लेकिन उस वक्त भी नहीं होता, उन्हें संपन्न लोगों के यहाँ रोगी देखने के लिए जाना पड़ता है। बहुत बार ऐसे रोगियों के यहाँ भी जाना पड़ता है, जिन्हें हिलाया-डुलाया नहीं जा सकता। ऐसा ही समय था वह। आँगन सूना था, गुरु नहीं थे। उनके साथ दूसरे शिष्य गए थे, शिवराम का उस दिन विश्राम था। वे एक तरफ के छोटे-से कमरे में लेटे हुए थे— उनके सामने विष-शास्त्र की एक पोथी पड़ी थी। सँपेरों के जाने के बाद वे वही पोथी खोलकर बैठे थे। मगर पढ़ने में मन नहीं लग रहा था, कमरे की छत की ओर ताकते हुए सोच रहे थे—शायद सँपेरों की ही बात सोच रहे थे, उस अजीब सँपेरिन लड़की की बात, महादेव की भी। एक नशा-सा हो गया था मानो। सँपेरों के अनोखे कौशल, अनोखा साहस, द्रव्य गुण की उनकी अनोखी विद्या और सबसे ज्यादा उनकी रहस्यमय मंत्र-विद्या सीखने का आग्रह। उन पर नशा-सा छा गया था।

सँपेरों ने जब विष का अपना पावना चुका लिया, तो शिवराम महादेव से बातें कर रहे थे। वे उधर अपना हिसाब चुका रहे थे और इधर एक ओर महादेव निस्पृह-सा बैठा था। शिवराम ने उसे बुलाकर कहा—मुझे सिखाओगे ? अपनी थोड़ी-सी विद्या दोगे ? मैं दक्षिणा दूँगा उसकी।

महादेव ने कहा—दक्षिणा तो आप देंगे, समझा। लेकिन विद्या क्या एक-दो दिन में सीखी जा सकती है, आप ही कहिए ?

—सीखी तो नहीं जा सकती, पर कुछ चीजें तो एक-दो बार देखने से जानी जा सकती हैं। और फिर तुम लोग बताना, मैं लिख लूंगा। आखिर मैं सांप पकड़ना तो नहीं सीखना चाहता, सांप पहचानना जानना चाहता हूं। मैंने अपने शास्त्र में उनका लक्षण पढ़ा है, उन्हीं लक्षणों को मिलाकर सांप दिखाते हुए मुझे पहचान बता देना। जड़ी-बूटी चिन्हा देना, नाम बता देना। मैं लिख लूंगा।

—दक्षिणा क्या दीजिएगा, सो कहिए ?

—क्या चाहिए तुम्हें ?

—पांच बीस रुपए। और एक रुपया विषहरी मैया की प्रणामी। यानी एक सौ एक।

छात्र शिवराम एक सौ एक रुपया पाए कहां से ? गुरु के यहां रहना, उन्हीं के अन्न पर गुजारा। लगभग प्राचीन काल की शिक्षा-व्यवस्था।

अन्त में बोले—भई, मैं पांच रुपए दूंगा। विद्या मत सिखाना, सांप पहचानना सिखा देना।

महादेव राजी हो गया। बोला—शहर के वह दक्खिन सीधे नाक के सामने गंगा के किनारे चले आना। आधा कोस जाने पर एक आम का बगीचा मिलेगा, वहीं नदी किनारे मिलेंगे बरगद के तीन पेड़। देखिएगा, वहां सँपेरों की नावें बँधी हैं। वहीं पर हम लोगों का अड्डा है।

शिवराम वही सब सोच रहे थे।

कि सुरीली और महीन आवाज कानों में आयी—छोटे धन्वतरि !

खिड़की के बाहर उसी अजीब सँपेरिन लड़की का मुखड़ा। होंठों पर भरमुंह हँसी, आंखों की पुतलियों में मुसकान भरी पुकार। उन्हीं को पुकार रही थी वह। शिवराम ने कहा—मुझसे कह रही हो ?

—हां जी। तुम्हें छोड़कर और किससे ? तुम धन्वतरि भी हो और नन्हे भी। जभी तो मैंने छोटे धन्वंतरि कहा ! सुनो।

—क्या ?

—अजी, वाहर तो आओ। मैं वाहर खड़ी हूँ ;और तुम अन्दर से ही कह रहे हो—क्या ? हुँ:, कैसे हो तुम ?

अप्रतिभ होकर शिवराम वाहर निकले।

—धन्वंतरि वावा कहाँ हैं ?—अव की उसकी आँखों में तीखी चमक फूटी।

—गुरु जी तो वुलावे पर गए हैं।

—घर में नहीं हैं ?

—नहीं।

वह कुछ देर गुमसुम-सी रह गई। उसके वाद उठ खड़ी हुई। कहा जा रही हूँ। चली गई। जरा ही देर में धूर्जटी कविराज की पालकी लौटी। पालकी के साथ शवला भी लौटी। रास्ते में भेंट हो गई।

पालकी से उतरकर कविराज ने कहा—क्यों री, महादेव से पट नही रही है ? उसी का निवटारा कर देना होगा ?

—नहीं वावा। जो देवता के लिए भी असम्भव है, मैं उस काम के लिए वावा के पास नहीं आयी।

—फिर ?

शवला चुप खड़ी रही। कुछ न वोली। मानो कोई वात है, जो वह कह नहीं पा रही है।

—वोल। मेरा अभी भोजन भी नहीं हुआ है।

शवला वोल उठी—हाय राम ! तो फिर अभी नहीं। अभी रहने दीजिए। आप पहले सेवा कर लीजिए जाकर ! हाय राम !

और वह प्राय: दौड़कर चली गई।

—शवला ! अरी ओ, वता जा, सुन।

—नहीं-नहीं।—उसकी आवाज उड़कर आयी। वह दौड़कर चली गई।

अजीव लड़की है ! आयी ही क्यों थी और दौड़कर ऐसे चली ही क्यों गई, शिवराम समझ नहीं सके। धूर्जटी कविराज जरा हँसे। उदास और स्नेह भरी हँसी। उसके वाद अन्दर चले गए। तीसरा पहर हो गया, अब जाकर वे नहाएँगे, उसके वाद भोजन।

दूसरे दिन लेकिन शबला धूर्जटी कविराज के पास नहीं आयी। न भी आयी, तो भी शिवराम से उसकी भेंट हो गई।

गुरु ने उन्हें एक मरीज के यहाँ भेजा था। धनी घर का रोगी। जवान मालिक की अभागिन दादी बीमार थी। अभागिन बुढ़िया पति-पुत्र को खोकर पोते के राज में बिलकुल उपेक्षित थी। बड़े कमरे में, बड़ी-सी खाट पर पड़ी है; नौकर पंखा भी खींचता है, लेकिन एक लड़की के सिवा कोई नहीं झाँकता। मृत्यु-रोग नहीं है, बड़ी तकलीफदेह बीमारी। गुरु ने शिवराम के हाथों उन्हीं के लिए दवा भेजी थी कि अन्दर जाकर दवा बुढ़िया की बेटी के हवाले कर दें और उसे खाने का तरीका समझा दें। नहीं तो हो सकता है, दवा बाहर ही पड़ी रह जाय, या कि एक नौकर दूसरे को देगा, वह किसी दाई को दे देगा और दाई कब जाने किस ताक पर रखकर चली आएगी। बता भी नहीं आएगी कि दवा यहाँ रखी है। सारी बातें सोचकर ही कविराज ने उसके अनुपान तक शिवराम के हाथ भेजे थे।

शिवराम ने उसी घर के आँगन में उस दिन शबला को देखा। शबला! लेकिन यह क्या वही शबला है! यह तो जैसे और ही कोई हो! उसके हाथ में रस्सी से बँधे दो बन्दर और एक बकरी थी। कंधे पर झोली में साँप का पिटारा। आँखों में चंचल निगाह। अंगों के हिल्लोल, बातों के सुर में कौतुक-रसिकता की लहर-सी।

उनका यह और एक पेशा है।

नदी किनारे नाव बाँधकर, ऊपर किनारे पर अपना अड्डा छोड़कर औरतें निकल पड़ती हैं। साँप, बन्दर, बकरी लिए डुगडुगी बजाते हुए घर-घर पुकारती चलती हैं—ओ मालकिन, राजा की रानी, सदा सुहागिन, सोना सुभागी, चाँद की माँ, सँपेरिन का खेल-तमाशा देखिए! काल-नागिन का नाच, हीरामन का खेल···

अजीब सुर में कहती, हर यति, हर मोड़ पर अजीब चढ़ाव-उतार। घर की औरतें वह सुर पहचानती हैं, झट घर से निकलकर दरवाजे पर आ खड़ी होती हैं। सँपेरिन आ गई। अद्भुत काली लड़की! अजीब बोल। अजीब बाना।

—आ गई सँपेरिन ? अरी ओ, आ जाओ सब । सँपेरिन आयी है ।
—हाँ, लछमिन, सँपेरिन आ गई । आ गई सँपेरिन, मुंहजली आ गई,
मारे द्वार की कंगालन आ गई; सरवनासी मायाविन तमाशा दिखाने
गई । भीख के लिए हाथ पसारे आ गई ।

औरतें काम-काज छोड़कर दौड़ी आतीं । आए बिना रहा नहीं जाता ।
काली औरतें बड़ी रहस्यमयी हैं, सच ही ये जादू-टोना जानती हैं शायद ।
इनकी बातों में जादू है, तमाशे में जादू है, हँसी में जादू है । कोई-कोई
घरनी कहती—बस, बहुत हुआ । आज अब जा । दईमारी काम बिगाड़ने
में माहिर । हम लोगों के काम-काज बाकी पड़े हैं । भाग जा, कहती हूँ ।

और ये खिलखिलाकर हँसती हैं । कहती हैं—सो माँ जी, सोनामुखी,
आपने ठीक ही कहा है । सँपेरिन ने दरवाजे पर हाँक लगाई कि हाथ का
काम गया ! सँपेरिन मायाविन जो होती हैं, हमारे पास मंतर जो हैं मा
जी ! विदा कीजिए इस बला को, हम जय-जयकार करती हुई अपनी रा
लगें । आपके टूटे काम फिर से जुटें, भंडार भर जाय; विषहरी मैया भ
करें; नीलकंठ की किरपा से तुम्हारे घर का सारा विष खतम हो जा
जय विषहरी मैया, जय बाबा नीलकंठ, जय मेरी मालकिन मैया की ।
झोली खोल दो, भीख देकर विदा करो ।

मगर उनकी माँग मामूली नहीं, बहुत-बहुत ।

बड़े से एक विषैले नाग को गले में लपेटे हाथ से उसका मुंह
सामने लाकर कहती हैं—माँजी, जल्दी से बनारसी साड़ी ला दीजि
रिन से उसके दुलहे की शुभदृष्टि होगी । ले आइए मालकिन, सिर
दीजिए—जल्दी कीजिए, मेरा दुलहा गले में घूम रहा है । कपड़
तो सँपेरिन साँप की लपेट से साँस रुँधने का मान करती है । इ
लोग जानते हैं, मगर यह मान ऐसा भयानक होता है कि सम
लोग उसे देख नहीं सकते ।

कभी पालतू बंदर से कहती है—हीरामन, माँ जी के पैर
उनसे कि माँ जी, वह पहनी हुई साड़ी उतार दीजिए, नहीं तो
नहीं छोड़ूंगा ।

कमबख्त बंदर बात इतनी समझता है कि कहा और

मालकिन के पैर पकड़कर बैठ गया। मालकिन सिहर उठती है—हट, छोड़। सँपेरिन हँस पड़ती है। कहती है—कुछ नहीं करेगा माँ जी, कुछ भी नहीं करेगा। लेकिन हाँ, कपड़ा लिए बिना नहीं छोड़ेगा। मैं क्या करूँ, कहिए ? यह तो उस्ताद का हुकुम है।

और दर्शक कहीं पुरुष हुआ, फिर तो बात ही नहीं।

बंदर नचाते-नचाते, साँप नचाते-नचाते ही अपनी माँग कहती जाती है :

जैसा चाँदी मुँह बाबू का
वैसी बख्शीश पाऊँगी;
साड़ी बनारसी पहने ही
नाच-नाचकर जाऊँगी।
मालिक झाड़ें हाथ अगर तो
मेरे लिए पहाड़ समान;
सोने का पहाड़ ले सिर पर
गाती जाऊँ जय के गान।

औरतों के मजमे में सँपेरिनों को सिर्फ बातों के मोह का सहारा होता है। पुरुषों में बातों के साथ उनकी नजर और अदाओं का भी योग रहता है। बंदर का नाच, साँपों का खेल दिखाकर अन्त में वह कहती है—अब हुजूर सँपेरिन का नाच देखिए। नागिन नाच चुकी, अब सँपेरिन नाचेगी। कहते ही कहते उसकी बात सुरीली हो उठी, खिंचते सुर में कहती चली—री मायाविन, नाच-नाच री; ठुमक-ठुमककर नाच-नाच री। वही नाच नाच, जो नाच सती बिहुला नाची थी, जिसे देखकर बूढ़े भोले बाबा भूल गए थे। फिर सुरीला स्वर बंद करके कहती—शिव की आज्ञा से विषहरी ने सती के मरे पति को जिला दिया था—वही नाच नाच। बाबुओं के रंगीन मन को भुलाकर भीख की झोली भर ले, गर्वीली बन। बाबू के हाथ की अँगूठी लेना, नहीं तो मुहर लेना। लेने के बाद उनके मन को लौटाना।

बात खत्म करके गीत और नाच। एक हाथ माथे पर, दूसरा कमर पर, दोनों पाँवों को सटाकर साँप जैसा घूमते हुए नाच, वह घूमना साँप जैसा ही पाँवों से शरीर के ऊपर को उठ जाना :

हाय-हाय, मरूँ लाज से

मैं मरती क्यों नहीं लाज से !
मौत साँप के विष से पति की
मेरी किसमें होगी !
मदन-दाह में दही चिता-सी
राख मले यह योगी ।
उसी राख से धीरज धारे आज रे !
हाय-हाय, मरूँ लाज से ।

यह गीत बिहुला-संगीत का है। उन सब का अपना—उन्हीं के किसी कवि यानी किसी सँपेरे ने बनाया है। वही लोग इसे गाते हैं। इस गीत को गाते समय बिहुला की तरह आँखों से सावन-भादों बहना चाहिए; देवताओं की सभा में बिहुला जब अपने मरे हुए पति लखींदर की याद करके नाची थी, तो उसके आँसू से उसकी छाती नहा गई थी। लेकिन मायाविनी सँपेरिन जब गाती हुई नाचती है, तो उसकी आँखों में आँसू की धारा नहीं बहती—उसकी पतली लेकिन लंबी भौंहें कटाक्ष में प्रत्यंचा खिंची धनुष जैसी बाँकी हो उठती हैं। लास्य के तरकस को खाली करके एक-एक करके सम्मोहन का तीर छोड़कर आकाश-वातास को ढँक देती है। दर्शक सच ही उस सम्मोहन से विभोर हो जाते हैं।

सती बिहुला के नाच से मोहित होकर बूढ़े शिव ने अपनी बेटी विषहरी को मरे हुए लखींदर को फिर से लौटा देने की आज्ञा दी थी और यह सँपेरिन बाबुओं को मोहकर विदाई माँगती है, मुट्ठी भर रुपए माँगती है।

धनी के यहाँ बरामदे पर घर के जवान मालिक अपने साथियों के साथ बैठे थे। सामने की बगिया में शबला नाच रही थी। अन्दर से निकलते हुए शिवराम ठिठक पड़े।

मकान मालिक ने देखकर भी उन्हें नहीं देखा। देखने की उस समय फुर्सत नहीं थी उन्हें। सँपेरिन ने भी पलटकर उनकी तरफ नहीं ताका। उसे ही फुर्सत कहाँ थी ? शिवराम को देव-सभा में अप्सरा के नृत्य की याद आ गई। देवता भी मोहग्रस्त और नृत्य-लास्य से उन्हें मोहती हुई अप्सरा भी मोहाच्छन्न ! शबला की आँखों में भी खुमार छा गया था। उसने जवान मकान मालिक के सामने हाथ पसारा था। कह रही थी—मैं सँपेरिन ठहरी,

काली नागन से भी काला रंग, मैं भला टुकटुक हाथ कहाँ पाऊँ ? मगर सँपेरिन को हया-शरम नही, शरम का सिर खाकर ही तो नाच दिखा सकी हूँ। मालिक मेरे सोने के लखीदर हैं, उनके सामने इसी से मैंने अपना काला अँधेरा हाथ फैलाया है।

हँसकर बाबू ने कहा—क्या चाहिए, बता ?

—दीजिए रंगीन साडी दीजिए। देखिए न, कैसी साड़ी पहने हूँ।

कहना था कि हुक्म हो गया। दुकान से तुरत रंगीन साडी ला दो। फौरन।

उसी वक्त आदमी दौड पडा।

—और, एक रुपया दो उसे।

सँपेरिन बोल उठी—उँहूँ-हूँ, रुपया क्या लेना! रुपया नहीं लेगी। सोना लूंगी। आपके सोने-सी दमकती देह मे कितना तो सोना है, दोनो हाथो मे उतनी अँगूठियाँ है, गले मे हार है, कलाई मे सोने की जंजीर—यह बंद-मुट्ठी, काली कालनागिन उसी का टुकडा लेगी।

दोनो आँखो मे पल-पल कटाक्ष कर रही थी वह।

बाबू ने झट एक अँगूठी खोलकर कहा—ले।

अब की सँपेरिन खिलखिलाकर हँसती हुई पीछे हट गई—अरे, बाप रे!

—क्यो, क्या हो गया ?

शबला ने हँसकर कहा—हाय मेरी मैया, वह मिली तो मेरी जान और आपका मान जाएगा। बुड्ढा सँपेरा देख लेगा तो मेरा गला घोट देगा, या छाती मे लोहे का सीखचा घुसा देगा। और कहीं माई जी ने देख लिया तो झाड़ू मारेंगी। आपकी उँगली को खाली देखकर या तो वे अन्दर मे [illegible] बंद कर लेंगी या मैके चली जायेंगी।

हँसकर जवान बाबू ने फिर से अँगूठी पहन ली। बोले—तो फिर [illegible] क्यों ?

—मैंने देखा कि मेरे सोने के लखींदर का [illegible]

प्यार है कि नहीं।

—क्या देखा ?

—असली ! असली !—हठात मुंह पर कपड़ा रखकर बोल उठी—सोने का लखींदर असली ही होता है बाबू ! जभी तो लखींदर नाग के नहीं, नागिन के विष से मरता है।

ठीक इसी वक्त साड़ी लेकर आदमी बाजार से लौटा। लाल रंग की चन्द्र कोना साड़ी। टुकटुक लाल रंग, उससे भी लाल साड़ी की कोर। सँपेरिन की आँखें चमक उठीं।

कपड़े को बदन में लपेटे और उसे सूंघकर बोली—आः।

—पसंद आयी ?

—पसंद नहीं आएगी ? चांद-सा बदन आपका, आपकी दी हुई चीज भला पसंद नहीं आएगी ? अब विदा दीजिए।

—और क्या चाहिए ? अँगूठी मांगी थी, देने लगा तो ली नहीं।

—दीजिए। जब देने का जी हुआ है, नसीब-जली सँपेरिन का नसीब फिरा है, तो दीजिए—अँगूठी की कीमत पाँच रुपए दिला दीजिए।

वह भी देने का हुक्म हो गया।

लिया और लेते ही उसने दौड़ना शुरू किया। चाल कितनी तेज ! बँहार में सांप के पीछे दौड़कर उसे आखिर पकड़ लेती है, सँपेरिनों की चाल, बोल और नजर तीखी ही होती है। और सँपेरिनों में शबला तो बेजोड़ है। अजीब औरतों में वह और भी अजीब है।

बाबू ने आवाज दी—अरी, रुक तो, ऐ सँपेरिन, रुक जरा।

शबला रुकी। इतने में ही वह काफी दूर जा चुकी थी। पलटकर खड़ी हुई और बड़ी मधुर, बड़ी चतुर हँसी हँसी। बोली—अब आज नहीं मेरे सोने के लखींदर, उधर पच्छिम अकास की ओर देखिए, बेला ढल गई, सूरज देवता लाल हो उठे, साँझ होने लगी। अभी जाना भी कितनी दूर है ! सियार बोलने से पहले घर न पहुँची, तो घर में जगह नहीं मिलेगी, जात से अलग कर देंगे। सुर में बोल उठी—

गीदड़ बोल चुकें तो मुझे निकालेंगे वो

है। सँपेरिन के हया-शरम नहीं होती, उसके धरम-करम नहीं, घर-द्वार का माया-मोह नहीं, वह सँपेरिन है, विश्वास करने योग्य नहीं। उसका रीत-रिवाज नाग-कन्या नागिन-सा होता है। रात हो जाने से, अँधेरा हो जाने से आँखों में नशा चढ़ता है, कलेजे में उथल-पुथल होती है, नागिन-सी सनसनाती चलती है, फन उठाकर नाचती है। उसका वह नाच जो देखता है, वह दीन-दुनिया भूल बैठता है।

उसकी आँखें एक बार झकमका उठीं।

बोली—वह नाच आपको दिखाने का उपाय नहीं है मेरे लखींदर।

कहकर वह फिर भागी। सचमुच ही दौड़ने लगी। उधर सूरज प्रायः क्षितिज पर उतर आया, लाल हो उठा। साँझ होने में देर नहीं थी। शबला ने झूठ नहीं कहा। शिवराम को पता है। सुना है उन्होंने। वहीं उस बार, जिस बार वे हिजल बिल के किनारे सतालो गाँव गए थे, उसी बार सुन आए थे। शाम को सियार बोलने के बाद सँपेरों के घर की जो स्त्री बाहर रह जाती है, उसे फिर घर में आने का अधिकार नहीं रह जाता। कम से कम उस रात के लिए तो नहीं ही। दूसरे दिन उसे गवाह-साखी के साथ सरदार सँपेरे के सामने पेश होना पड़ेगा, साबित करना होगा कि शाम तक कोशिश करने के बावजूद वह घर नहीं पहुँच सकी और शाम के बाद ही उसने किसी अच्छे गृहस्थ के यहाँ पनाह ली थी, उसने कोई दोष नहीं किया है। तब कहीं उसे घर में घुसने दिया जाता है। सबूत में कहीं कसर रह गई तो जुरमाना देना पड़ता है। ऊपर से मार पड़ती है।

शबला नागिनी कन्या है। पाँच साल पहले उसने अपने पति को खाया। तब से वह चिर कुमारी है। किन्तु अड्डे पर या घर में खुद सरदार सँपेरा उसका इन्तजार करता रहता है। नागिनी कन्या को यदि व्यभिचार का पाप छू जाए, तो सारे सँपेरे समाज के मुँह पर कालिख पुत जायगी। विषहरी मैया उसके हाथ की पूजा नहीं लेंगी। परकाल में पितरों की अधोगति होगी। शाम को सियार बोलते ही सरदार सँपेरा हाथ जोड़कर खड़ा हो जायगा और प्रणाम करते हुए कहेगा—जय विषहरी मैया, जय माँ मनसा।

और जुड़े हाथों को कपाल से लगाते ही पुकारेगा—कन्या!

—हाँ जी, साँझ की दीया-बाती दे रही हूँ।—नागिनी कन्या को यह --

देना पड़ेगा।

नी, शबला लपककर चलने लगी।

गंगा के किनारे की तरफ चली। वहाँ से किनारे-किनारे काफी दूर
ना है। उसके तेज चलने से बंदर और बकरी भी दौड़ रहे थे।

दर्शकों के साथ शिवरान भी उसकी ओर ताकते हुए खड़े रहे। उस
लड़की का दौड़ना भी अजीब ! सजग होकर ही दौड़ रही थी शायद। इस
दान को वह एक पल के लिए भी नहीं भूल रही थी कि लोग-बाग उसी की
ओर देख रहे हैं। दौड़ने में भी उसने अपनी तन्वी देह के हिल्लोल को बर-
करार रखा था—जैसे नाचती हुई ही जा रही हो।

शिवरान को लगा, उस लड़की के होंठों से हँसी लगी हुई है। वह
निश्चित जानती है कि दर्शक मोहग्रस्त-से अभी भी उसी की ओर देख
रहे हैं।

देखते ही देखते वह गंगा के किनारे आँखों से ओझल हो गई।

दूसरे ही दिन सवेरे महादेव धूर्जटी कविराज के आँगन में आ खड़ा हुआ
आँखों में भटकी-भटकी-सी निगाह, कंधे पर साँपों की बहँगी न
हाथ में डमरू जैसा वह बाजा नहीं, बीन भी नहीं। लोहे का डंड
था सिर्फ।

—बाबा !

भोर ही थी लगभग। धूर्जटी कविराज सदा ही रात के अंति
में उठकर नित्यक्रिया के बाद उदय-वेला में नहाते हैं। सूरज उगे बि
नहीं गिना जाता, इसीलिए इंतजार करते रहते, स्तव-पाठ करते
दिन के देवता के उदय के बाद ही गंगा नहाकर पूजा पर बैठते
पर वे घर में आए ही थे अभी, कि उधर से घबराया हुआ मह
पहुँचा।

—क्या बात है, महादेव ? इतना सवेरे ?

एड़ी-चोटी उसे निहारकर बोले—ऐसे ? बात क्या है ?

शहर में आने पर कभी-कभी वे हैजे के शिकार होते है
होते हैं, शहर की जो-सो चीजें उठाकर खा लेते हैं। तमाम

काटते फिरते हैं। प्यास लगती है। उस प्यास को मिटाने के लिए इन्हें जहाँ कहीं का भी पानी पी लेने में हिचक नहीं होती। लिहाजा हैजा हो तो आश्चर्य क्या?

महादेव ने कहा—मुसीबत आयी बाबा, दौड़ा आया। यहाँ आपके सिवा हमारा और कौन है?

—क्या हुआ?

—एक छोरा कल रात मर गया।

—मर गया? क्या हुआ था?

—होगा क्या! सँपेरे की मौत साँप से। साँप ने काट खाया।

—साँप ने काट खाया?

—हाँ बाबा। साक्षात् काल। दाँत न तोड़ा हुआ गेहुँअन था। कैसे जो पिटारे को खोला, पता नहीं। पिटारे से खुलते ही उस छोरे को सामने पाया। वह इधर को पीठ फेरकर बैठा था, बस, जमाया जबड़ा। माँस तक खींच लिया। किसी उपाय से कुछ नहीं हुआ, दो ही पल में अंत हो गया। अब यह शहर का मामला ठहरा, अब मृत्यु की नायद थाने से पड़ताल होगी। आप दरोगा को एक पुर्जा लिख दीजिए।

—बैठो।

हाथ जोड़कर महादेव ने कहा—आप भरोसा दें तो एक बात बताऊँ, बाबा धन्वतरि।

—बताओ।

—पुर्जा लिखकर इन छोटे बाबा को दीजिए और इन्हें मेरे साथ कर दीजिए। दरोगा से जाने क्या कहते क्या कह दूँ…

सुर से, ढग से महादेव की बात अधूरी रह गई। बोल नहीं सका। शायद हो कि कहने का ढग न जानता हो, या फिर अनुरोध को दुहराने का साहस न हुआ हो।

आचार्य सोच रहे थे। सोच रहे थे आयुर्वेद-भवन की सुविधा-असुविधा की बात। शिष्य की असुविधा का भी खयाल हो रहा था।

हाथ जोड़कर महादेव ने कहा—बाबा, काल से खेला करता हूँ, मरने-जीने से नहीं डरता, लेकिन यह थाना-पुलिस जम से भी बढ़कर है…

जन होते हैं। उन्हें देखते ही प्राणों का पंछी पिंजरे से निकल
है।

जंटी कविराज इस बात पर हँस पड़े। शिवराम की ओर देखकर
—तुम्हें हो सकता है कुछ कष्ट हो शिवराम, लेकिन इन लोगों के लिए
करने में पुण्य है। तुम जरा जाओ। मेरा नाम लेकर दरोगा से कहना,
नाहक ही परेशान न करे। तुम्हारे न जाने से हो सकता है, हैरानी
डर दिखाकर रुपये ऐंठने की कोशिश करे। समझ गए ?

शिवराम उठ खड़े हुए। कहा—जाता हूँ।

जवान सँपेरा। उसकी लाश देखकर लग रहा था, कसौटी पत्थर की
नी मूरत हो जैसे। सुंदर और सबल शरीर। सँपेरों के अड्डे के ठीक
बीच में लिटा दिया था। उसके सिरहाने बैठी माँ रो रही थी। चारों तरफ
अपने-अपने डेरे में सँपेरे मानो निढाल-से हो बैठे थे। सिर्फ छोटे-छोटे बच्चे
टोली बनाकर चंचल होना चाह रहे थे। मगर वे भी ठीक चंचल हो नहीं
पा रहे थे, बड़ों का यह स्तंभित भाव मानो उन्हें भी आच्छन्न किए दे
रहा था।

शबला एक पेड़ की डाल पकड़े खड़ी थी। गोया डाल का सहारा
लेकर ही खड़ी रह पायी है। उस चपल-चंचल लड़की की शकल अजीब हो
गई थी। उस मरे हुए आदमी की ओर अपलक आँखों से ताक रही थी, लेकिन
वह उसे नहीं देख रही, अंदर का मन मानो बाहर आकर उस मरे हु
आदमी के ऊपर शव के आनन पर बैठ गया था। आँखों के ऊपर दो
भौंहों के बीच दो रेखा साफ खिंच गई थीं।

दरोगा-सिपाही की पड़ताल थोड़े में ही खत्म हो गई। पड़ताल की
भी क्या ! साँप के ओझा की मौत आमतौर से साँप के काटे ही होती
काल से खेलो तो दस दिन खिलाड़ी का, एक दिन काल का। औ
मशहूर वैद धूर्जटी कविराज का अनुरोध लिए शिवराम जा पहुँचे थे
तो ऐसे मौकों पर पुलिस के लोग थोड़ा-बहुत अदा करा लेते हैं।

महादेव ने सब कुछ दिखाया। वह साँप दिखाया। बहुत
दूधिया गेहुँअन। सफेद गेहुँअन बहुत कम ही मिलते हैं। शायद ही
कहते हैं, राजा के खंडहर के सिवा दूधिया गेहुँअन और

मिलता। जब राजवश के भाग्य की प्रतिष्ठा होती है, कुल की लक्ष्मी जब राजलक्ष्मी की प्रतिष्ठा पाती हैं, उसका आविर्भाव तभी होता है। लक्ष्मी के माथे पर छत्र रखकर वही उन्हें वह गौरव देता है। उसके बाद राजवंश का भाग्य पलटा खाता है, वश मिट जाता है, राजपुरी टूट जाती है, लक्ष्मी चली जाती हैं अपनी जगह को, तो उसी को उस टूटे राजभवन के पहरे पर रख जाती है। टूटे भवन की हर दरार मे, हर सिलान मे वह दीर्घ श्वास छोड़ता हुआ घूमा करता है। कोई अनधिकारी यदि बुरी नीयत से उस खडहर मे आता है तो वह दड धारण करता है यानी फन खोलकर खड़ा हो जाता है। बुरी नीयत न हो और आप जाइए तो वह चूँ भी न करेगा, आप घूम-फिरकर देखेंगे, वह आपको देखेगा, अपने होने का सुराग भी न लगने देगा, कि कहीं आप डर न जाएँ। आपने कहाँ निश्वास फेंका, तो बहुत हुआ तो वह भी दीर्घ निश्वास छोड़ेगा। आपके घूमते वक्त इत्तफाक़ से वह बाहर ही हो, आपकी नजर पड जाय, तो वह फौरन तेजी से कहीं अँधेरे में चल देगा, छिप जाएगा। उसके मुह मे बोली नही। बोली होती, तो आप सुन पाते, वह कह रहा है, कोई डर नहीं, कोई खतरा नहीं, देखो।

मालदह मे मैंने देखा था भैया—महादेव ने कहा—उस समय मैं खासा जवान था। मेरा बाप शकर सरदार सँपेरा जिंदा था। जंगल-झाडी से भरा टूटा खडहर, घूम-घूमकर देख रहा था और विधाता से कह रहा था, हायरे विधाता, हाय! यह क्या खेल तेरा! यह गढ़ना भी क्यों, और अगर गढ़ा ही तो फिर तोड़ना क्यों? घूमते-घूमते जी में आया, इतना बड़ा यह राजभवन, इसका भडार कहाँ है? वहाँ सोना-दाना, हीरा-मोती का कुछ भी नहीं पडा है क्या? आप से कहूँ क्या भैया, माथे के ऊपर फुफकार उठी—फों-फो-फो। सुनकर आतमाराम तो कूच कर गया। बिलकुल माथे पर, उलटकर देखने का समय नहीं। माथे पर साँप काटे, तो धागा कहाँ बाँधिए? मगर आखिर सँपेरे का ही बेटा ठहरा, डरता तो नही था। अकल लगाकर फौरन बैठ पडा। उसके बाद सिर उठाकर ऊपर की ओर ताका। देखना क्या हूँ कि सिलान की दरार से कोई हाथ भर अपनी देह निकाले वह फन ताने गरज रहा है। सूप जैसा फन, सोने के रंग का चक्कर, दूध जैसा सफ़ेद बदन। आप से क्या बताऊँ, मन मेरा मोहित हो गया। [illegible]

के कुल में पैदा हुआ, हिजल बिल के किनारे संताली गाँव में वास, पाताल के नागलोक में जितना नाग, संताली के घासवन में, पेड़ों के खोड़रों में उतना ही नाग। मगर ऐसा नाग तो नहीं देखा। मन मेरा नाच उठा। सोचा, इसे अगर पकड़ न सकूँ तो मैं सँपेरा क्या? जरा पीछे हटा, दाँव लेकर खड़ा हुआ। आ जा, आ तू। मन ही मन विषहरी मैया का सुमरन किया, काल-नागिन को पुकारा। मंतर पढ़ने लगा। वह भी थिर और मैं भी थिर। कौन जीते, कौन हारे! सोचा, फँसरी बनाकर छोड़ूँगा उस पर। मगर पीछे से मेरे बाप ने टोका, खबरदार! मुँह फेरने का मौका नहीं था भैया, मैं मुँह फेरूँ तो वह मारे और वह मुँह फेरे तो मैं ले सकूँ। मुँह बिना फेरे ही मैंने बाप से कहा, तुम आगे बढ़ आओ, मैं ठीक हूँ। पकड़ो। बाप ने कहा, नहीं। एक-एक डग करके पीछे हट आ। ये राज गोहुअन हैं, इस पुरी के पहरेदार। साच्छात काल हैं ये। इनको पकड़कर कोई जीता नहीं रहता। पीछे हट आ। बाप का हुकुम, सरदार सँपेरे का आदेश, मैं पीछे हट गया। उसने भी अपना शरीर कुछ समेट लिया, फन कुछ छोटा हो गया। बाप ने कहा, तूने तो सत्यानाश कर दिया था। उसे नहीं पकड़ना चाहिए। सँपेरे का लड़का है तू, पकड़ तो शायद लेगा। लेकिन मुँह से लहू उगलकर मर जायगा। नहीं तो उसी के विष से जान जायगी। मगर वे इस तरह फन खोलकर खड़े क्यों हो गए? तूने छेड़ा था क्या? कि मन में कोई पाप विचार किया था? छिपा खजाना खोजने गया था? मैंने कहा, यह तुमने कैसे जाना। बाप ने सारा विरतांत बताया। कहा, पाप-विचार को पोंछ दे, भूल जा। देवता को दंडौत करके अपने अड्डे पर लौट चल। नहीं तो खैर नहीं है। मैंने मन को मन ही में डुबा दी, धो-पोंछ दी। कहा, ठाकुर, मुझे माफ करो। बस, देखा कि पलक मारते ही वे गायब हो गए। बिल में चले गए। मैं लौट आया। उसके बाद इस खँडहर में फिर गया हूँ। मन ही मन कहा, क्षमा करो देवता, कोई इरादा लेकर नहीं आया हूँ, आया हूँ देखने, आँखें सफल करने। उसके बाद फिर कभी नहीं देखा।

अपनी कहानी पूरी करके महादेव ने कहा—सब देखा कि यह छोरा एक राज-गोहुअन को पकड़ लाया है। साच्छात काल! बाबा शिव का रं

दूध-सा है, उनके अंग के परस के बिना वह वैसा रंग कहाँ से पा सकता है? सँपेरे की औलाद है, यह बात उसकी अजानी नहीं, मैंने कितनी बार यह कहानी सुनाई है। उसका तौर-तरीका बुरा था, जानता था मैं कि ऐसा ही होगा। जवानी किसे नहीं होती? इस छोरे के जवानी क्या आयी, इसने साँप के पाँच पाँव देख लिए। लहू की तेजी से यह धरती उसके लिए सिकोरा हो गई। सँपेरों के कुल में जिस-जिस बात की मनाही है, उसे वही सब करने की सनक थी। नहीं तो···

अचानक महादेव का चेहरा भयंकर हो उठा। उसकी आवाज में जैसे बड़े ढोल की आवाज बज उठी। वह प्राय गर्जन कर उठा, फट पड़ा। कहा—नहीं तो भला, नागिनी कन्या सँपेरा कुल की बेटी होती है, पदमी होती है, उस पर उसकी नजर पड़ती!

ऐसी ही, यही नियत थी उसकी।—महादेव ने सिर का झटका दिया, घुंघराले बाल हिल उठे। पाप बात उच्चारण करने की वजह से शायद उसने प्रायश्चित्त के लिए देवता का नाम लिया—जय बाबा महादेव, जय विषहरी मैया, जय माँ चंडी, क्षमा करो माँ, क्षमा करो।

सारी जगह ही सन्न-सन्न कर रही थी। गंगा के इस किनारे पर दूर तक भी महादेव के स्वर की प्रतिध्वनि गूंज रही थी। और उस पार का [illegible] धारा का कल-कल स्वर, उनकी हवा में पीपल और कटहल के पत्तों के पत्तों की मर्मर ध्वनि, बीच-बीच में [illegible] टूटकर [illegible] हुआ नीचे गिर रहा था। सारे सँपेरे मग्न थे, बच्चे भी [illegible] हुए बैठे थे, सभी [illegible] नजर से महादेव के मुँह की ओर ताक रहे थे। [illegible] अपलक निहार रहे थे [illegible]।

वह कल वहाँ, गंगा के उस पार गया था—नवाब-महल के झाड़ी
हर में। वहाँ यही देवता थे। आकर शबला से कहा। शबला ने
सँपेरे का पूत होकर नाग को देखकर भी छोड़ दिया ? सँपेरे का
बेटा है तू ? जा, पकड़ ला। सँपेरा, फिर जवान, तिस पर शबला ने
दिया, खैर थी भला। ले आया पकड़कर। मैंने देखा। देखकर सिहर
। कहा, इसे छोड़ दे, नहीं तो जहन्नुम में जायगा। मगर हरगिज नहीं
ा, आखिर मैंने उससे छीन लिया। सांझ हो गई थी, मैंने नाग को
टारे में भरकर रख दिया। सोचा, कल उसे जगह पर जाकर छोड़
ऊँगा। मगर उसका नसीब ! मैं क्या कहूँ, कहिए। रात को पिटारे का
ढक्कन ठेलकर साक्षात काल निकल पड़ा। इधर छोरा गंगा किनारे
बैठा क्या जाने क्या कर रहा था। पीछे से जाकर सांप ने उसकी पीठ पर
ठीक रीढ़ के ऊपर दाँत जमा दिया। छोरे ने घूमकर देखा, काल है। सँपेरे
का बेटा, हाथ में लोहे का डंडा था। उसने भी दे मारा। दोनों मर गए।

दूधिया गेहुँअन की लाश कुछ हटकर एक टोकरी में ढँकी पड़ी थी।
मरे साँप की लोभी कौआ-चील खींचातानी न शुरू कर दें, इसी डर से उसे
ढँककर रखा था। टोकरी को उठाकर महादेव ने कहा—देखिए, अपने ही
पाप से मरा है छोरा। और मरते वक्त यह कौन-सा पाप कर गया, सो
देखिए! कैसा देवता-सा शरीर! सोने के छाते-सा चक्कर कैसा है; देखिए
यह पाप सँपेरों पर टूटेगा।

इतनी देर के बाद शबला बोली, उसकी नजर लाश पर से हट
महादेव पर आ टिकी थी। नजर उसकी कब फिरी थी, किसी ने न
देखा। उत्तेजित महादेव को बोलते देख लोग उसी की ओर ताक रहे
उसके बाद नजर सबकी साँप पर थी। सच ही साँप का रंग अनोखा
दूध-सा सफेद ऐसा गेहुँअन नजर नहीं आता। इसी बीच शबला ने
कब निगाह हटा ली और महादेव की ओर ताकने लगी। वह बोल उ
यह पाप तुझ पर फलेगा—इसमें सँपेरों का पाप नहीं है। पाप तेरा

महादेव चौंक उठा।

तीखी और कुटिल हँसी से शबला के दोनों होंठ टेढ़े हो गए
की नोक फूल उठी थी। निगाहों से आक्रोश मानो छिटका पड़

किसी आग के कुंड में राख की परत हवा के झोंके में उड़कर जैसे रह-रहकर दमक उठने लगी हो। महादेव की किस बात ने हवा के झोंके का काम किया, शबला की आँखों पर से उदासीनता की राख की परत को उड़ा दिया, यह शबला ही जाने।

उसकी बात सुनकर महादेव चौंक उठा था, उसकी ओर ताककर वह ठिठक पड़ा।

शबला के होंठों की हँसी जरा और तीखी हो गई। उसके होंठों के कोनों में जरा और ज्यादा तनाव आ गया। महादेव को चौंकते और ठिठकते देखकर वह मानो खुश हो उठी। महादेव के स्तंभित हो जाने के मौके से उसने अपनी बात जरा और दृढ़ता से कही—अजी, महज उस राजनाग के मरने का ही पाप नहीं बुड्ढे, सँपेरा छोरा मरा, उसका भी पाप! दोनों ही पाप तेरे हैं।

रोष और आश्चर्य मिला हुआ एक अजीब भाव फूट उठा था महादेव के चेहरे पर। मगर वह मानो अपने-आपको ठीक से जाहिर नहीं कर पा रहा था, सिर्फ इतना ही बोला—मेरा पाप?

—हाँ! हाँ रे बुड्ढे, तेरा। बोल, कैसे? ऊपर माथे पर दिन के देवता सूरज हैं, पाँवों के नीचे है तेरी मैया वसुमती और उसे सिर पर उठाए हुए हैं विषहरी मैया के सहोदर वासुकी। तेरे सामने रखा है विषहरी मैया का घट, तू ही बता, पाप किसका है?

अबकी महादेव फट पड़ा। चीख उठा—शबला!

वह चीख मानो आदमी की नहीं, वह चीख मानो आत्मा की थी।

उस आवाज से वे सँपेरे भी, जो महादेव के साथ जनम से रहते आए हैं, चौंक उठे। शिवराम चौंक उठे। सँपेरों के जो बंदर डालों से बँधे थे, चिक्-चिक् करके इस से उस डाल पर कूद गए। बकरियाँ लेटी पड़ी थीं, डर से मिमिया उठीं, डालों पर जो चिड़ियाँ बैठी थीं, उड़ भागीं। वह आवाज गंगा की छाती से लगी आँकी-बाँकी होकर किनारों को धक्का देकर प्रतिध्वनित हो उठी—

शबला!

शबला!

शबला !

और दूर, और दूर में क्षीण होती हुई वह आवाज खो गई। उस समय तक सभी ठक्-से थे। सिर्फ शबला पेड़ की डाल को छोड़कर सीधी खड़ी हो गई। फिर बड़े ही धीमे स्वर में जरा हँसकर बोली—तू विचार देख। पाँच जने यहाँ हैं। वे भी विचारें। यहाँ धन्वंतरि बाबा के शिष्य खड़े हैं, उनसे भी पूछ। बता भला, तूने जब नाग को पहचाना कि यह राजनाग है, तू ने जब जाना कि इसके पकड़ने से मौत से नहीं बचा जा सकता, तूने मुझको बताया, और मैंने उसे छीन भी लिया तो फिर तूने उसे छोड़ क्यों नहीं दिया? बता तू उस पार उस राजनाग को छोड़कर अगर माफी माँग लेता, तो तू ही बता यह सबरा ज्ञान मरता कि यह राजनाग ही मरता? विचार कर देख तू, और भी पाँच जने विचार करें कि पाप किसका है?

महादेव को बात का जवाब ढूँढे नहीं मिला।

शिवराम को भी कहना पड़ा — काश, तुमने साँप को शाम को ही छोड़ दिया होता। चूक तुमसे हुई है।

महादेव ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा। कहा- हाँ, यह आप कह सकते हैं। लेकिन भूल एक ही तरह की तो नहीं होती, दो तरह की होती है। एक भूल आदमी अपनी अक्ल के दोष से करता है और दूसरी - वह भूल नहीं है बाबा, भरम है, नसीब का लिखा, अदृष्ट— वही आदमी से भूल कराता है। यह उसी अदृष्ट का खेल है, उसी ने भरम में डाला।

महादेव तुरन्त उग्र हो उठा। बोला - बाबा, एक बार अदृष्ट ने सन्दार, सेंपे विश्वम्भर को छला था। नियति लड़की बनकर आयी थी और उसने कालनागिन को उसके कलेजे में लगवाया था। भ्रम में यह समझाया था कि यही उसकी मरी हुई बेटी है। उसी पापिन नागिनी कन्या का छल है, उसी के मन में पाप समाया है—महापाप। उसका मन विषहरी मैया की सेवा में नहीं है—भरमाया है मन। उम्र के नशे से नागिन का मन मतवारा हो गया है। इसने उस छोरे को भुलाया था। कच्ची उमर थी औ' साला जवाँमर्द हो उठा था। अँधेरे में जग को देखता तो उसके पीछे दौड़ पड़ता। उसी गर्मी से छोरे ने इतनी बड़ी धरा को कटोरा समझा। नागिन कन्या के चमकते काले रंग और आँखों की दमक में वह मस्त हो गया

सँपेरे का बेटा, पर उसने सँपेरे-कुल का शासन नहीं माना, नहीं समझा कि नागिनी सँपेरे-कुल की बेटी होती है, वह मायाविन होती है, माया में भुला-कर अपनी वासना मिटाकर वही उसे डँसेगी। मामला उतनी दूर तक बढ़ा नहीं था बाबा, बढ़ा होता तो यह नागिन ही उसे डँसती। सँपेरों की सहाय मैया विषहरी है, सँपेरों को उन्होंने उस पाप से बचाया। राज-गेहुँअन को उन्होंने ही भेजा, उसको मोहित किया। वही सत्यानाशी···इसने माँ के छल को समझा नहीं बाबा, समझती तो छोरे को मना करती। कहती, न। उसे मत पकड़ो। वह काल है। मैया ने मुझे-तुझे छलने के लिए उसे भेजा है।

महादेव हँसा—देवता का छल समझ में नहीं आता। इस मायाविन ने ही छोरे को उकसाया, जा, पकड़ ला उसे। दूधिया गेहुँअन है तो क्या हुआ? उसने राज-गेहुँअन कभी देखा नहीं था, चीन्हती न थी। उसी की बात पर छोरा पकड़कर ले आया। देवता क्या चाहते हैं, समझ नहीं सकता, नहीं तो सिर्फ एक छोरे को ही तो काटने की बात नहीं, पापी-पापिन दोनों को काटता। लेकिन सो नहीं हुआ, सिर्फ छोरा ही गया।

उसके बाद शबला की तरफ उँगली दिखाकर बोला—इस लड़की के नसीब में बहुत दुःख है बाबा। बहुत दुःख पाकर मरेगी।

दूसरे दिन शिवराम फिर सँपेरों के अड्डे पर गए थे।

जिसके लिए कभी महादेव ने पाँच बीस एक यानी एक सौ एक रुपया माँगा था, वही वह बिना दक्षिणा के देने को तैयार हो गया। पुलिस की जाँच-पड़ताल के दिन शिवराम मौजूद थे। एहसान से शिवराम को महादेव ने कहा—आपने जो किया बाबा, वह कोई नहीं करता। हम पर बाबा *धन्वंतरि की कृपा है। इस शहर में वही हमारे अपने हैं, आप उन्हीं के* कहे आए हैं, यह ठीक है, मगर आए तो। अपनों जैसी बात तो की। आपके पैरों काँटा चुभे तो मैं अपने दाँत से निकाल दूँगा। आपको दें क्या, — — रुपया, प्रणामी—

शिवराम ने कहा—नहीं-नहीं। रुपये की जरूरत नहीं। रुपया न लूँगा। महादेव! यदि कुछ देना ही है, तो मुझे साँप चीन्हना सिख

मैंने तुमसे कहा भी था, याद है ?

—जी हाँ। याद है। तो वही सिखा दूँगा। आप कल आइए। उसका रुपया नहीं लगेगा। कुछ भी नहीं लगेगा। सिखा दूँगा।

लेकिन गजब !

दूसरे दिन महादेव दूसरा ही महादेव था।

धुत्त बना बैठा था। पी ली थी। गाँजे के साथ साँप का जहर पिया था। उसी के साथ शराब। नशे में ढुल-ढुल हुई आँखों से वह शिवराम को देखने लगा। कहा— क्या है ? क्या चाहिए ?

शिवराम हक्के-बक्के हो गए। उनके कुछ कहने से पहले ही महादेव बोल उठा—सँपेरे की लड़की के लोभ में आए हो ? एँ !—कहकर उसने खूँखार जानवर की तरह अपने मैले दाँत निकाल दिए।

शिवराम सिहर उठे। एड़ी से चोटी तक लोहू की धारा सन्-सन् करती बह गई। अपने को जब्त नहीं कर सके वे। बोल उठे—क्या कह रहे हो ?

—ठीक कह रहा हूँ।—महादेव की आँखें तब तक झिप गई थीं। नशे में जबान लड़खड़ा आयी थी।

—नहीं। तुमने कल खुद ही आने को कहा था, इसीलिए आया हूँ। तुमने रुपया देना चाहा था। मैंने नहीं लिया था तो कहा था—

—ओ !—फिर दोनों आँखें फाड़कर महादेव ने उनकी ओर देखा। कहा—ओ ! कविराज जी ! ओ ! मैं आपको पहचान नहीं सका बाबा। पी है,पीनी है। तो…

वह फिर ऊँघने-सा लगा। बुदबुदाया—अभी नहीं बनेगा बाबा। अभी नहीं होगा। ऊँहूँ-हूँ।—वह धूल पर ही लेट गया।

दूसरे एक सँपेरे ने आकर कहा—आप अभी लौट जाइए बाबा। बुड्ढे को अभी होश नहीं है।

शिवराम क्षुब्ध होकर ही लौटे। मगर दोष किसे दें ? उनके जीवन का यही रवैया है। उसाँस ली।

दूसरे दिन ठीक दोपहर में शबला आयी।

और एक दिन ठीक जिस समय आयी थी, उसी समय। धूर्जटी कवि-

राज घर पर नहीं थे। खिड़की के सामने खड़ी होकर आवाज दी—छोटे धन्वंतरि ! अजी ओ नन्हे कविराज !

शिवराम बाहर निकल आए।

—क्या है ? कविराज जी तो इस समय घर पर नहीं रहते। उस दिन तो कहा था तुमसे।

शबला ने हँसकर कहा—अजी, यही जानकर तो आयी हूँ। काम तो मुझे तुमसे है।

मुझसे ? शिवराम हैरान हुए। इस लड़की का लास्य रूप उस दिन उन्होंने जमींदार के यहाँ देखा था। काली, दुबली सँपेरिन जब लास्यमयी बनती है, तो उस समय वह आसव के सरोवर में सद्यःस्नाता-सी लगती है। सर्वांग से जैसे मदिरा की धारा चू रही हो। लोग अपने को भूल बैठते हैं। इस दोपहरी में, धूर्जटी कविराज नहीं हैं, यह जानकर मोहमयी नागिनी कन्या किस छलना से छलने आयी है। उनकी छाती के अंदर कलेजे ने जोरों से धड़कना शुरू कर दिया, मुंह की सरसता सूखती-सी लगने लगी। आँखों में शंका और मोह, एक ही साथ शायद दोनों फूट उठने लगे। सूखे गले से बोले—मुझसे क्या काम है ?

शबला ने कहा—कोई डर नहीं जी छोटे कविराज, इस दोपहर को तुम्हारे साथ हँसी-मजाक करने नहीं आयी हूँ, आप फिकर न कीजिए।

वह खिलखिलाकर हँस पड़ी।

शबला ने साँप के पिटारे को उतारा और दबाकर बैठ गई। कहा—कल तुम बुड्ढे के पास गए थे ? कितना रुपया दिया उसे ?

—रुपया ?

—हाँ। रुपया। परसों...

—ओ, हाँ। परसों जब पुलिस चली गई, तो बूढ़े ने मुझे रुपया देना चाहा था। मगर मैंने तो रुपया लिया नहीं।

—हाँ—शबला चुप रही। उसके बाद बोली—घूस देना चाहा था, तुमने नहीं लिया। बाबा धरम ने तुम्हें बचा लिया। ले लेते तो तुम्हें आदमी मारने का पाप लगता। बुड्ढे ने उस जवान सँपेरे का खून किया है।

शिवराम चौंके।—खून ? खून किया है ?

—हाँ जी। खून ! बुड्ढे ने उससे राज-गेहुँअन को छीन लिया था और उसे पिटारे में भरकर रख दिया। मन ही मन मनसूबा गाँठ कर ही रखा था उसे। नहीं तो यदि वह उसे उसी समय नदी के किनारे छोड़ देता तो यह मुसीबत ही नहीं आती। सोच रखा था, रात को जब वह नौजवान मेरी तलाश में चुपचाप निकलेगा, तो पीछे-पीछे जाकर साँप को ठोकर लगाकर उसके पीछे छोड़ देगा। और वह साँप उसे और मुझे, दोनों को ही डँसेगा। उस छोरे को मैंने कहा था जी, बार-बार कहा था। लेकिन…

शबला ने लम्बा निश्वास छोड़ा। आँचल के कोर से आँखें पोंछीं। बोली—मैं हूँ नागिनी-कन्या। मेरी ओर मर्दों को ताकना नहीं चाहिए। कम से कम संपेरों को तो नहीं ही चाहिए। मैं उसे अच्छी लग गई थी, साल-भ से भी ज्यादा दिनों से वह मेरे पीछे चक्कर काटता था। बोला था, मै नसीब में जो लिखा होगा, होगा, मगर तेरी चाह मैं नहीं छोड़ सकता, न नहीं, नहीं। मैंने उसे कितना समझाया, लेकिन उसने एक नहीं सुनी। ही रात को गाँव से बाहर या नदी के किनारे जाकर बैठा रहता था नहीं जाती, वह तो भी जाकर बैठा रहता था। कहता था, आखि दिन तुझे आना ही पड़ेगा। जब तक तू नहीं आती, मैं बैठा ही रहूँगा हो जाऊँगा, तब भी बैठा ही रहूँगा। बुड्ढा जानता था। उसने भी यहँ था। उससे अब मेरी पटती नहीं है। इस शहर में आकर मुझे भी अ हो गया कविराज, मुझसे भी न रहा गया। मैंने तीन दिन गंगा के उससे मुलाकात भी की थी। मैं मा विषहरी का नाम लेकर कहती राज, पाप नहीं किया, धरम नहीं छोड़ा। गंगा किनारे बैठी मै को पुकारा किया और रोती रही। रोती रही और कहती रही ले मैया, पुकारा है मुझे, दया कर। उस छोरे ने भी पाप नहीं मेरा बदन नहीं छुआ। सिर्फ यही कहा, शबला, यह सब ग नागिनी नहीं होती। चल हम दोनों भाग चलें। किसी और वहाँ अपना घर बनाएँ। मिहनत-मजूरी करें, घर-गिरस्ती और सोचा करती। सोचती और कभी हँसा करती, कभी रो जी में आता, यह जो कह रहा है, वही सच है। इसी के परदेस में जाकर घर बनाऊँ, सुख से रहूँ। कभी विषहरी के

उठती, कलेजा कांप उठता। रो पड़ती मैं—नहीं रे, नहीं। मैया विषहरी से कहती, छमा कर मैया, दया कर। दंड देना हो तो मुझको दो मैया। शिर से जर-जर करके मेरा जीवन ले लो। इस जवान को तुम कुछ न कहो, माफ कर दो, उस पर दया करो।

कहते-कहते शबला चुप हो गई, उदास हो गई एकाएक। बोलना बंद करके आसमान की ओर ताकने लगी। कातिक की दोपहर का आकाश। शरत काल की नीलिमा का गाढ़ापन अभी भी आसमान में झलमल कर रहा था। सादे मेघों के भी कुछ टुकड़े तैर रहे थे। हवा में सर्दी की ठडक-सी। गंगा के उस पार के खेतों का कतिकी धान कट चुका था, अगहनी धान के पौधों में पीलापन झलकने लगा था, मोटे धान के खेत हरे, बालियाँ झुक गई थीं। रास्ते पर लोग नहीं। कभी-कभी गंगा में दो-एक नाव जाती दीख रही थी।

उस दिन की याद ने शिवराम के मन पर ऐसी छाप छोड़ी, जो कभी पुरानी नहीं हुई। काली शबला समय के धब्बे में खोने की नहीं, कभी नहीं खोएगी—लेकिन उस दिन का आकाश, खेत, गंगा, दोपहर की धूप—सब कुछ जैसे उनके बुढ़ापे की जर्जर आँखों के सामने तुरत की बनाई तसवीर-सी झलमल करती है।

बड़ी देर के बाद एक दीर्घ निश्वास फेंककर शबला ने कहा था—मगर मैया ने माफ नहीं किया। मैया की इच्छा के बिना तो कोई काम नहीं होता कविराज, तभी ऐसा कह रही हूँ। नहीं तो···

झकमका उठीं शबला की आँखें। सफेद दाँत चकचक कर उठे कसौटी-से काले कोमल पतले होंठों के घेरे में। उसके गले की आवाज की उदासी जाती रही, उसमें ज्वाला सुलग उठी। बोली—उसी, उसी बुड्ढे ने उसका खून किया है। अँधेरे में चुपचाप उसने राज-गेहुँअन को छोड़ दिया। पिटारे को झकझोरा, नाग को कुदा दिया और डोरी खींचकर पिटारे के ढक्कन को खोल दिया। साँप के आक्रोश को नहीं जानते हो कविराज, बेहद आक्रोश होता है उसे। उसने मुँह के सामने ही उस छोरे को पाया। बुड्ढे ने था, मैं भी हूँ, साँप मुझे और उसे, दोनों को ही खतम कर देगा। प

शबला ने अपने कपाल पर हाथ रखा। कहा—पर मेरे नसीब

लिखा है, और भोगना बाकी है, मैं क्यों मरने लगी !
सके चेहरे पर फीकी हँसी फूट उठी। उसी हँसी में उसकी आँखों
कमक की तेजी दब गई। आँखों से आँसू बह निकला।
शिवराम भी स्तब्ध रह गए थे।

उसके आँसुओं की कुछ बूँदों ने मानो सब कुछ भिगो दिया था। मन
कातिक की वह दोपहरी मानो मेघ ढँकी-सी हो गई। आदमी का गहरा
ब जब आजादी से निकलने की राह नहीं पाता, कलेजे में दीर्घ निश्वास
ंडली होकर घुमड़ता है, तो उसके संस्पर्श से ऐसा ही होना है। शिवराम
क्या कहें ! चोर की माँ जब बेटे के लिए घर के कोने या एकांत में छिपकर
रोती है, तो जो उस रोने को सुनता है, उसका हृदय सिर्फ वेदना से गूँगा हो
जाता है, बेबस हो जाता है, दिलासा भी नहीं देते बनता और अवज्ञा से
तिरस्कार भी नहीं किया जा सकता। वह अभागिन लड़की अपने समाज
और कुल के धर्म का पालन करने में जो दुःख पा रही है, उस दुःख को तो
अस्वीकार नहीं किया जा सकता। और, वह कुल-धर्म गलत है, अन्याय है,
यही बात शिवराम कैसे कहें ? वह छोरा, जो अपनी जवानी के आवेग में
इस नागिनी कन्या पर आसक्त हुआ था, शिवराम इसका भी समर्थन कैसे
करें ? लेकिन उस नौजवान की लाश याद आ जाने पर यह बात भी झाँ
जाने से बाज नहीं आती थी कि कसौटी काटकर गढ़ी हुई-सी उस मूर्ति
सामने यह काजल-काली लड़की बड़ी फबती।

आचार्य धूर्जटी कविराज को लोग साक्षात धूर्जटी कहते। मन
पवित्र कविराज जी भोले बाबा-से ही कोमल हैं, दूसरे के दुःख से प
पिघल पड़ते हैं, लेकिन अन्याय और अधर्म के खिलाफ वे रुद्र ही हैं।
के शिष्य हैं शिवराम। शबला को वे सांत्वना भी न दे सके, उसकी
वेदना को अस्वीकार भी न कर सके। रोग की पीडा से असहाय रो
तरफ विज्ञ चिकित्सक जिस निगाह से ताकते हैं, शिवराम उसी नि
शबला की ओर ताकते रहे।

शबला भी गजब है लेकिन। अचानक एक निश्वास में म
सब कुछ को झाड़ फेंका। पल में। बोली—देख लीजिए, अपनी ही
कहे जा रही हूँ। जिस काम के लिए आयी थी, वही भूल गई।

कहिए कि कल फिर बुड्ढे के पास क्यों गए थे ?

—साँप पहचानना सीखने के लिए। बुड्ढे ने [illegible] देने की बात की।

—कितने रुपए दिए ? बुड्ढे ने कितना लिया [illegible] ?

—रुपया ?

—हाँ जी। कितना रुपया दिया उसे ?

—रुपया किस बात का ? यह क्या कह रही हो तुम ?

सँपेरिन हँस उठी—ठगाए हो,ठगा गए हो, बताने में शरम आ रही है छोटे धन्वतरि ? आः, हाय-हाय छोटे धन्वतरि, ठगा गए, ठगा गए, बुड्ढे से ठगा गए! मुझ जैसी कलूटी सुंदरी से ठगाते तो कोई गम नहीं रहता।

शिवराम चकित हो उठे। उन्हें इस सँपेरिन का वह लास्यमयी याना रूप याद आ गया, जो उस दिन जमींदार के यहाँ देखा था। बोले—नहीं, नहीं, यह सब क्या कह रही हो तुम ?

—विद्या सीखने के लिए रुपए नहीं दिए हैं ? बुड्ढे ने पाँच [illegible], माँगे नहीं थे ? मुझसे झूठ बना रहे हैं आप ? नहीं दिए हैं ?

और एकाएक उस सँपेरिन की शक्ल बदल गई। लास्य नहीं, [illegible] नहीं, सख्त और सीधी होकर खड़ी हो गई वह लड़की, आँखों की [illegible] स्थिर, उसके सारे शरीर में फूट उठी फन खोलकर साँप के खड़े होने की भंगिमा। शिवराम ने सुन रखा था कि नियति का आदेश [illegible] कर साँप दंडित व्यक्ति के सिरहाने मुस्तैद खड़ा हो जाता है, [illegible] रहता है कि कब उसकी आयु खत्म होगी और वह उसे डसेगा। [illegible] में इसी कल्पना की एक तसवीर आँकी हुई थी। यह रूप [illegible] में मिल गया। अपलक आँखों ताकती हुई धीर और धीमे स्वर में [illegible] बोली—राजा के पाप से राज्य तबाह होता है, गृहस्थ के [illegible] डूबती है, बाप के पाप से बेटे को सजा भोगनी पड़ती है। इस बुड्ढे के [illegible] में सारे सँपेरे कुल के नसीब में दुःख भोगना है, इसके पाप का [illegible] पड़ेगा, बदनामी का भागी होना पड़ेगा। मैं इसीलिए दौड़ी-दौड़ी [illegible] पास। आप कविराज हैं, सँपेरों के जहर की ठाँव आपको खर[illegible] आप सब हमारे जजमान हैं। उसने आपसे पैसे लिए और पैसे [illegible] नहीं दी। अधरम नहीं हुआ ? भला यह पाप बिपहरी

करेंगी ? विद्या के लिए रुपया लेकर विद्या नहीं देने से विद्या जो वेकार हो जायगी ! पाप बुड्ढे ने किया, मैं हूँ नागिनी कन्या, उस पाप के पराच्छित के लिए मैं दौड़ी आयी। जब तक मैं नागिनी कन्या हूँ, मुझे तब तक बुड्ढे के पाप का पराच्छित करना पड़ेगा।

शबला हाँफने लगी। आँखों में वही स्थिर दृष्टि। मानो वह सच ही नागिनी कन्या बन गई, शिवराम शबला में उस नागिनी को देख पाने लगे।

सँपेरिन का अनोखा धर्मज्ञान और दायित्व-बोध देखकर शिवराम अवाक् हो गए। बोले—मगर रुपया तो महादेव ने नहीं लिया है मुझसे।

—सच कह रहे हैं ?

—सच कह रहा हूँ। तुम से झूठ क्यों बोलूँ ?

—बिना रुपया लिए ही विद्या सिखाने की कही थी ?

शिवराम ने कहा—परसों जब मैं सिपाहियों के साथ गया था, तुम तो वहाँ थीं, शबला। याद नहीं है, सिपाहियों के जाने के बाद महादेव से मेरी क्या बातें हुई थीं ?

गरदन हिलाकर शबला बोली—नहीं। आखिरी तक मुझे होश नहीं था कविराज। पुलिस चली गई। मैं समझ गई, उस छोरे की लाश को अब लोग गंगा में बहा देंगे। लाश लहरों में बह जाएगी, कहाँ-कहाँ बह जाएगी जाने। मेरा मन भी मानो बह गया। मैंने फिर कान से कुछ नहीं सुना, आँखों से कुछ नहीं देखा।

शिवराम ने कहा—पुलिस के लौट जाने के बाद महादेव मुझे दो रुपय प्रणामी देने आया था। मैंने रुपए लिए नहीं। मैंने कहा, रुपए मैं नहीं लेता यदि सचमुच ही तुम कुछ देना चाहते हो, तो मुझे साँप पहचानना सिख देना। उसने कहा था, सिखा दूँगा। जभी मैं गया था। तुमने तो देखा था नशे में बुत्त पडा था। क्या करता, लौट आया !

—झूठ, सब झूठ है, छोटे धन्वंतरि। उसने पी रखी थी, मगर मर सँपेरे को नशा होता है कविराज ? साँप का विख निगलने की जगह नहीं होती है तो उसे गाँजे में मिलाकर पीने के लिए रख छोड़ता है। ऐसे भी सँपेरे हैं धन्वंतरि, जो दाँत के मसूड़े में जखम नहीं रहने से चाटकर ही

विष का सफाया कर देता है। उसने बिना पैसे के विद्या देने की बात की थी। मगर कहने के बाद उसे अफसोस हुआ, कुछ लिए बिना विद्या बताने को जी नहीं चाहा, इसीलिए उसने वैसा बहाना बनाया। पता है, आप आए और बुड्ढा उठ बैठा। और फिर जो ठहाके की हँसी हँसा ! आपको ठग लिया न, उसी की हंसी, उसी की खुशी। मेरे बदन पर जैसे किसी ने अंगारे रख दिए धन्वतरि, मैंने मन ही मन माँ विषहरी को पुकारा। यहां, मैया, अधरम से तू बचा ले। सँपेरों का जिसमें अमंगल न हो। इसीलिए तुम्हारे पास आयी। सोचा, बुड्ढे ने पाप किया, मैं उस पाप का खंडन कर आऊँ। कविराज को विद्या दे आऊँ।

शिवराम ने पूछा—क्या लोगी तुम, कहो ?

—क्या लूंगी ? अजी, बुड्ढे ने आपको वचन दिया है, मैं उस वचन को रखने आयी हूं। रुपया तो मैंने मांगा नहीं कविराज। आइए, बैठिए, आपको नाग चिन्हा दूं।

सँपेरों की वंश-परंपरा में चली आती है रहस्यमय सर्पविद्या। उस अनोखी काली लड़की को मानो जन्म से ही वह हासिल है। लहू में मिल गई है शायद।

उसने नाग दिखाया, नागिन दिखाई। नपुंसक साँप दिखाया। आकार-प्रकार का भेद बताया। फन की बनावट और आँखों का अंतर बताया।
—यह देखो छोटे धन्वतरि, इसका-उसका फर्क देख रहे हो ?

शिवराम ठीक देख नहीं पा रहे थे। जुड़वाँ बच्चों का जो अन्तर माँ की निगाहों में पकड़ में आता है, वह क्या और किसी की नजर में आता है ? वे ठीक-ठीक परख नहीं पा रहे थे, सिर्फ अवाक् होकर देखते जा रहे थे। उस अनोखे वर्णन की पूछिए मत ! वह लेकिन भेद को साफ, बहुत साफ देख रही थी और नाग-नागिन की देह की विशेषताएँ बताती जा रही थी। आचार्य धूर्जटी जैसे ध्यानमय आनन्द से निःसंकोच नर-नारी के देह-गठन का वर्णन करते हैं, चित्र-सा बनाकर समझा देते हैं, वैसे ही पगली ने भी साँप को उलट-पलटकर उसका अंग-अंग दिखाकर
चेष्टा की।

कहा—कविराज, मैं अगर पास बाँधकर मर्द बनूं, तो सब

कि आँख नहीं पहचानेंगे ? ज़रूर पहचानेंगे। मेरे चेहरे के मीठे-मीठे भाव से ही पहचान लेंगे। गुच्छा होगा तो छाती की तरफ़ ताकते ही समझ में आ जायगा। कपड़े को कितना ही सख्त करके छाती में क्यों न बाँधें, औरतों की छाती छिपाई तो नहीं जा सकती। ठीक उसी तरह नागिन की मर्म बनावट, उसके रंग का चिकनापन देखते ही साफ़ समझ में आ जायगा।

शिवराम ने कहा—हाँ।

वे जैसे मोहाविष्ट हो गए थे।

शबला ने कहा—कहिए, और क्या दिखाऊँ ?

—और क्या देखूँ ? शिवराम को ढूँढ़े और कोई प्रश्न नहीं मिला।

शबला खिलखिलाकर हँस पड़ी। वह रहस्यमयी काली लड़की फिर पलभर में ही लास्यमयी हो उठी। कटाक्ष मारकर बोली—तो अब ज़रा मुझको देखिए। साँप की आँखों की माफिक नहीं लगती है, आपको भी सँपेरों की नागिनी कन्या नहीं लगती। नहीं क्या ?

शिवराम के कलेजे में से जैसे आँधी का झोंका निकल गया। उसके धक्के में उस झोंके ने मानो सब कुछ को चूर-चूर कर देना चाहा—यह उनकी आँखों से समझ में आया। आँखों की नज़र उनकी मानो आँधी में कदली-सी काँप रही थी।

वह सँपेरिन फिर हँस पड़ी। बोली—अजी ओ कविराज जी, मन के घर की साँकल लगा लो, साँकल।

शिवराम तुरन्त सचेत हो उठे। अपने को संयत करके भी हँसते ही हुए बोले—साँकल लगाने से भी तो खैर नहीं होती शबला, लोहे के कोहबर में सात तालें लगाकर भी सोने के लखींदर की खैर नहीं रही, नागिन ने निःश्वास से नन्हीं बराबर छेद से बढ़कर उसको गाह दे दी थी। मैं साँकल नहीं लगाऊँगा। मैं तुम्हारे साथ मनसा-मंगल की कहानी की बनिया के बेटी और महानाग जैसा नाता जोड़ूँगा। जानती हो न वह कहानी ?

—नहीं जानती सखा ! नाग नागलोक में रहते हैं, नर रहते हैं नर लोक में। विधाता का विधान है, नर और नाग साथ नहीं बसते। नाग मुँह में मारक विष होता है और नर के हाथ में रहता है हथियार। :

देखने से वह अपना मृत्युदूत समझता है, उसे देखने मे यह अपना मृत्युदूत समझता है। कभी मरता है नर, कभी मरता है नाग। विधि का विधान, नर-नाग साथ नहीं बसते। हँसी शबला। बोली—मर्त्यलोक मे रहता है बूढा सौदागर। घर मे उसके घरनी, बेटा, बेटे की बहू। और संदूक मे धन, खलिहान मे धान, खेतों मे फसल, पोखरे मे मछली, गुहाल मे गाएँ। काली, गोली, धौली, मगला का झुड। उन गायों को चराता है बावरी का छोरा, सौदागर बूढ़े का चरवाहा। कजूस बनिए के घर रसोइया नहीं, बेटे की बहू को पकाना पडता है। बहू जैसी सुन्दर, वैसी ही लछमी, लेकिन बचपन मे ही अपने माँ-बाप को खो बैठी थी। बाप के खानदान मे कोई नहीं। कोई नहीं है, इसीलिए सौदागर बुड्ढे का दबाव बहू पर ज्यादा है। उसी से वह रसोइया और नौकरानी का काम कराता। बहू रसोई करती, ससुर को, पति को खिलाती, खुद खाती और चरवाहे छोरे का खाना लिए बैठी रहती।

चरवाह छोरा गायें लिए बँहार मे जाता, उन्हे चराता फिरता, कभी पेड तले बैठकर बाँसुरी बजाता, या तो कभी पेड की डाल पर झूला झूलता, कभी सोता, कभी आँचल भरकर आम-जामुन-बेर ले आता। एक दिन उसने पेड़ तले दो अडे देखे। बडे ही सुदर अडे। छोरे के जी मे आया, अडों को पकाकर खाए। वह कपडे की कोर मे उन्हे बाँध लाया। लाकर बनिए की बहू को दिया, ऐ बहू जी, मुझको ये अडे पका कर देना।

बहू जी ने अडे ले लिए और पकाने को जाकर भी पका नहीं सकी। बडा अच्छा लगा। अहा, जाने किस जीव के अडे हैं, इन अडों मे उसके बच्चे है। आहा! उसने अडों को टोकनी मे ढँककर एक कोने मे रख दिया। उनके बदले उसने कटहल के दो बीए पकाकर चरवाहे को दिए—ले, खा।

वह छोरा कटहल के बीए से ही खुश हो गया।

बहू भी खुश। भगवान के दो जीव बच गए।

दिन जाने लगे। महीने जाने लगे। चरवाहा गाये चराता रहा। बहू रसोई पकाती, बर्तन माँजती, घर-गिरस्ती के काम-धधे करती। वे अडे टोकनी में ढँके पडे ही रहे। बहू जी भूल ही गई, उसे याद ही न रहा। एक दिन एकाएक नजर पडी, टोकनी हिल रही है। बहू को याद आ गया,

हुसपुस करके उसने टोकनी उठाई। देखा, नाग के दो वच्चे हैं। लिकलिक कर रहे हैं, फन उठाकर डोलते हैं, माथे के चक्र कमल के फूल-से सोह रहे हैं।

पहले तो वहू को डर लगा। उसके वाद ममता हुई। अहा, उसी के जतन से ये अंडे वच पाए, उन्हीं अंडों से ये वच्चे निकले। उन्हें मारे कैसे ? भगवान को सुमरन किया, नाग के वच्चों से कहा—तेरा धरम तेरे पास, मेरा धरम मेरे पास। उस धरम को मैं नहीं तोड़ूंगी।

वहू ने छोटे-से एक सकोरे में दूध लाकर उनके सामने रख दिया। साँप के वच्चों ने चुकचुकाकर दूध पिया। वहू ने उनको फिर टोकनी से ढँक दिया।

रोज दूध देने लगी। पी-पीकर वच्चे वढ़ने लगे।

सौदागर की वहू की भी ममता वढ़ने लगी।

घर में आम आते। आम का रस वनाकर उन्हें देती। कटहल आता, उसके भी कोए वारीक पीसकर देती। नाग के वच्चे कद्दू की लतर की नोक-से रोज वढ़ने लगे। कुछ वड़े हुए तो वे भला टोकनी से ढँके क्यों रहने लगे। निकल पड़े। घर के अंदर घूमने लगे। उसके वाद वाहर, वहू के पैरों के पास घूमने लगे।

वूढ़ा सौदागर और उसकी वुढ़िया, दोनों मारे डर के सिहर उठे। हाय राम ! यह क्या ! यह कैसी हरकत ! यह क्या सँपेरिन है कोई कि नागकन्या ? मार, मार—नाग के वच्चों को मार।

नाग के दोनों वच्चों को आँचल में उठाकर वहू घर के पिछवाड़े भागी। उन्हें वहाँ छोड़कर वोली—भाई, अव तुम लोग अपनी जगह जाओ, मैं सास-ससुर के साथ घर-गिरस्ती सम्हालूं, इतनी फजीहत नहीं सही जाती। तुम दोनों के लिए मुझे तकलीफ तो होगी, अंडे से इतना वड़ा किया है ! मगर क्या करूँ, कोई उपाय नहीं है।

नाग दोनों अपनी जगह लौट गए। जाकर माँ विपहरी से कहा—माँ, नसीव से सौदागर-वहू थी कि जान वची, वरना खैर न थी। उसने हम दोनों को भाई कहा है, हमने उसे दीदी कहा। उसे अव अपने नागलोक में ले आना है।

माँ ने कहा—नहीं-नहीं, वेटे। ऐसा नहीं होता। नर-नाग साथ नहीं

बस सकते। विधाता की मनाही है। मैं बल्कि उसे यहां से वरदान दूंगी कि वह धन-धान्य से फूले-फले, पति-पुत्र के साथ सुख से उसका घर भर जाय।

नागों ने कहा—नहीं। यह नहीं हो सकता। फिर तो विश्व-ब्रह्मांड नागों को नमकहराम कहेगा।

माँ बोली—तो फिर ले आओ।

इस पर नागों ने नर का रूप लिया, सौदागर की बहू के जुड़वाँ मौसेरे भाई बने। बनकर उसके दरवाजे पर जाकर खड़े हुए—ओ माई, ओ बहना, घर में हो ? साथ में भारवाहकों पर बहुत-बहुत सामान।

—कौन ? कौन हो तुम लोग ?

—हम तुम्हारे बेटे की बहू के मौसेरे भाई हैं। दूर परदेस में रहते थे। घर लौटे तो दीदी की खोज की। उसे एक बार ले जाना है।

—हाय राम, सुना था कि बाप के खानदान की बूआ नहीं, माँ के कुल में मौसी नहीं, ये अचानक मौसेरे भाई कहाँ से आ टपके !

—कहा तो कि दूर परदेस में व्यापार करता था। बचपन ही से बाहर था, इसी से मालूम न था।

कहकर हजारों-हजार सामान उतारकर रख दिया। कपड़ा-लत्ता, गंध-आभरण—तरह-तरह की चीजें। मोती का हार तक।

बुढ़िया और बूढ़ा अब चुप हो गए। अपने कोई न हों तो इतना-इतना सामान क्यों देते ? चीज भी तो कुछ कम नहीं ! ढेरों ! और चीज भी जैसी-तैसी नहीं—मोती-मुक्ता-सोना-चाँदी।

नागों ने कहा—हम लोग लेकिन दीदी को एक बार ले जाएँगे।

—ले जाओगे ? नहीं बाबा, यह न होगा।

—होना ही पड़ेगा।

उधर बहू रोने लगी—मैं जरूर जाऊँगी !

आखिर बूढ़े-बूढ़ी को राजी होना पड़ा। नागों ने किराए की पालकी तै की, कहार ठीक किए, बहू को पालकी पर बिठाकर ले चले। कुछ दूर जाकर कहारों से कहा—अब पास ही है अपना गाँव-घर। हमारा रिवाज है, बहू हो या बेटी हो, यहाँ से उसे पैदल ही जाना पड़ेगा।

कहारों को अच्छी विदाई दी। पास ही की एक कोठी दिखा दी कहार

खुश होकर लौट गए।

उसके बाद नागों ने कहा—हम लोग न तो तुम्हारे मौसेरे भाई हैं, न आदमी हैं। हम दोनों वही नाग हैं, जिन्हें तुमने बचाया था, बड़ा किया था। माँ विषहरी तुम्हारे बारे में सुनकर प्रसन्न हुई हैं। उन्होंने तुम्हें नागलोक ले जाने को कहा है, हम तुम्हें वहीं ले जाएँगे। माँ के वरदान से तुम इत्ती-सी हो जाओगी, रूई-सी हलकी हो जाओगी, हमारे फन पर बैठोगी और हम तुम्हें आकाश-पथ से नागलोक ले जाएँगे। तुम आँखें बंद कर लो।

बहू को लगा, मैं आकाश-पथ में उड़ रही हूँ। फिर लगा, कहीं पर उतरी। नागों ने कहा—अब आँखें खोलो।

बहू ने आँखें खोलीं। देखा, सामने कमल-दल पर माँ विषहरी शतदल-सी बैठी हैं। अंग में कमल की खुशबू, कमल का रंग। चेहरे पर वैसी ही दया।

माँ ने कहा—बिटिया, नागलोक में आयी हो, रहो। दूधों नहाओ। हजारों नागों की सेवा करो। सभी तरफ ताकना, मगर दक्खिन की ओर मत ताकना।

सूनी दोपहरी में यह कहानी कहते-कहते सँपेरिन के मन और आँखों में मानो सपने की छाया उतर आयी थी। व्रतकथा की उस स्वजन-विहीना लड़की के नाग को अपना जान पकड़ लेने जैसा यह लड़की भी मानो शिवराम को जकड़ लेने की कल्पना में विभोर हो गई।

उस स्वप्न की छूत शिवराम के मन में भी लगी। उन्होंने कहा—हाँ। बनिया की वह बहू और नाग जैसे भाई-बहन बने थे, हम दोनों भी वैसे ही भाई-बहन हुए।

सुनकर शबला हँसी। उसके चेहरे पर उस हँसी की कल्पना नहीं की जा सकती। लगा, वह रो पड़ेगी मानो।

लेकिन वह नहीं रोयी, रोए शिवराम। छिपाकर आँसू पोंछते हुए बोले—तो मैं तुम्हें जो दूंगा, वह लेना पड़ेगा।

—क्या ?

शिवराम ने दो रुपए निकाले। बोले—ज्यादा देने की तो जुर्रत नहीं है।

ये दो रुपये तुम लो। तुमने मुझे विद्या सिखाई, यह उसकी गुरु-दक्षिणा है। गुरु-दक्षिणा देनी चाहिए।

गुरु-दक्षिणा सुनकर उस चपला युवती को हँसते-हँसते लोटपोट हो जाना चाहिए था। शिवराम ने यही आशा की थी। आशा की थी कि हँसते-हँसते लोटपोट होकर शबला कहेगी—हाय, मेरी माँ, मैं तुम्हारी गुरु! तो फिर दो, दक्षिणा दो।

शिवराम का अनुमान लेकिन ठीक नहीं निकला। यह बात सुनकर भी वह नहीं हँसी। फिर आँखों से एक बार शिवराम की तरफ ताका, फिर उन दो रुपयों की तरफ ताका। शिवराम को लगा, आँखों में उसकी चाँदी के रुपयों की छटा लगी, उस छटा में आँखें चकमक कर उठीं। फिर भी वह स्थिर ही रही। अपने को जब्त करके बोली—नहीं। रुपए मैं नहीं ले सकती, धरम भाई। लेने से सँपेरे-कुल का धरम जायगा। मैंने तुम्हें भाई कहा है, मेरा वह भाई कहना बेकार होगा। वह मैं नहीं ले सकती। रुपए रखो।

शिवराम ने कहा—मैं तुम्हें खुशी से दे रहा हूँ। और फिर भाई क्या बहन को रुपया नहीं देता है?

—देता है। इसके बाद जब भेंट होगी, देना। मैं लूँगी। गर्व से सबको दिखाती फिरूँगी—देख री देख, मेरे धरम भाई ने दिया है।

उसके बाद बोली—सँपेरों की लड़की, मैं तुम्हारी कालनागिन बहन हूँ। मैं तुम्हें नहीं भूल सकूँगी, लेकिन धन्वन्तरि, तुम तो मुझे भूल जाओगे। दाम देकर चीज लेने वाले दूकानदार को कौन याद रखता है, कहो? चीज रहती है, पर दूकानदार को लोग भूल जाते हैं। मैंने तुम्हें बिना दक्षिणा के विद्या दी, इस विद्या के साथ मैं भी तुम्हारे मन में रहीं। रुको, तुम्हें मैं एक चीज और दूँगी।

सँपेरिन सहसा भाव-उच्छ्वास से हिजल बिल के बरसाती नदी-नालों-सी उमड़ पड़ी। अपनी छाती में कसकर बँधे हुए कपड़े के नीचे से उसने लाल धागे में बँधे तावीजों, जड़ी-बूटी के गुच्छे को खींचकर निकाला। उसमें से जड़ी का एक टुकड़ा निकालकर शिवराम से कहा—लो। हाथ फैलाओ भाई मेरे, हाथ फैलाओ।

शिवराम ने हाथ फैलाया। जड़ी का टुकड़ा उनके हाथ में देकर वह

—धन्वंतरि, इससे बड़ी और कोई दवा सँपेरों के नहीं है। नागके जहर
अमरित, माँ विषहरी का दान।

—कौन-सी जड़ी है यह ? किस चीज का मूल ?

सँपेरिन युवती एक बार हँसी। बोली—यह बताना तो मना है धरम
भाई ! यह सँपेरों की गुप्त विद्या है, बताना मना है।

वह जरा देर चुप रहकर बोली—अगर विश्वास करो धरम भाई तो
बताऊँ, सुनो। यह पेड़ जो क्या है, सो हम लोगों को भी नहीं मालूम। सँपेरे
कहते हैं, वही जब सताली गाँव से नावों से सँपेरे नदी में वह चले थे, उस
समय जो आभरण पहने कालनागिनी कन्या नाची थी, उसी में इस जड़ी
का थोड़ा-सा मूल लगा मिला था। सँपेरों ने सताली गाँव छोड़ा और चाँद
सौदागर के शाप से धन्वंतरि-विद्या वे भूल बैठे। विषहरी मैया ने नई विद्या
दी। धन्वंतरि विद्या का उतना ही मूल उस कन्या के आभरण में लगा
आया, सरदार सपेरे ने हिजल बिल के किनारे नए संताली गाँव में उसी
मूल को रोपा। उसका पेड़ है, उसी की जड़ से हम दवा बनाते हैं। किन
उसका नाम तो नहीं मालूम है, धरम भाई। और फिर यह पेड़ भी संताल
गाँव के सिवा संसार में कहीं नहीं है। सो तुम्हें नाम कैसे बताऊँ या न
को कैसे चिन्हा दूँ ? तुम इस जड़ी को रखो, नाग अगर काटे और
काटने के पीछे देवता का या ब्रह्मरोष नहीं हो, तो काली मिर्च के
पानी में इसे पीसकर पिलाने से तिल भर भी जान बाकी होगी, तो
जान को लौटना ही पड़ेगा, मरा हुआ-सा आदमी भी पहर-भर में
खोल देगा।

उसने शिवराम को और भी एक जड़ी दी थी। बड़ी कड़
उसकी।

इतने दिनों के बाद भी बूढ़े शिवराम ने बताया—भैया, उस
में लहर होने लगती है। साँसों से कलेजे के अन्दर पैठ कर वह मा
की साँस को रोक देती है।

यह जड़ी उनके हाथ में देते हुए उस दिन शबला ने कहा था-
को लिए-लिए तुम राज-गेहुँअन के सामने जा खड़े हो, सिर भ
राह छोड़ देनी पड़ेगी। ठहरो, मैं तुम्हें दिखा ही देती हूँ।

उसने साँप का एक पिटारा खोल दिया। पल-भर में एक काला गेहुँअन फन खोलकर खड़ा हो गया। शायद तुरत-तुरत का पकड़ा हुआ साँप था। शिवराम पीछे हट आए।

हँसकर सँपेरिन ने कहा—अजी, डरो मत। इसके जहर के दाँत तोड़ दिए हैं, विष निचोड़ लिया है। हाथ में जड़ी लिए तुम आगे आ जाओ।

विष के दाँत टूट चुके हैं, विष भी निचोड़ लिया गया है—सब सच है, मगर शिवराम कैसे, किस साहस से आगे जाएँ? दाँतों तले टूटा हुआ कण ही हो कहीं? यदि थैली में इतना भर ही विष हो, जितने में सुई की नोक भीग सकती हो? या जहर निचोड़ लेने के बाद फिर से कहीं जहर जमा हुआ हो? चाहिए भी कितना? दाँत के टूटे टुकड़े को भिगो देने के लिए जरूरत ही उस तरल पदार्थ की कितनी है? एक बूँद भी तो नहीं, बूँद का आभास!

शिवराम के मुह की तरफ ताककर सँपेरिन हँसती हुई बोली—डर लग रहा है? खैर। वह जड़ी मुझे दो। जड़ी को लेकर वह हाथ बढ़ाकर आगे गई।

गजब! साँप का फन सिमट गया। देखते ही देखते साँप शिथिल-सा होकर पिटारे में निढाल हो गया। ठीक वैसे, जैसे कोई बेहोश होता हो।

—पकड़ो, इसे अब तुम पकड़ो।

शिवराम के हाथ में जड़ी देकर अबकी शबला ने जो किया, शिवराम उसे सोच भी नहीं सके थे। दूसरे एक पिटारे को खोलकर उसने फन ताने एक साँप को निकाला और उसे शिवराम के हाथ पर रख दिया।

साँप का ठंडा स्पर्श। सिर्फ ठंडा ही नहीं, उसके साथ और भी कुछ। साँप के चमड़े के चिकनेपन की भी प्रक्रिया। शिवराम खुद भी मानो साँप जैसे निढाल होने जा रहे थे। जी जान से उन्होंने अपने को जब्त किया। शबला ने साँप को छोड़ दिया, वह शिवराम के हाथ में निर्जीव फूल माला-सा झूलने लगा।

गजब!

शिवराम बोले—गजब का एक नशा! मैं जीवन-भर उस दवा को खोजता रहा, नहीं मिली। सँपेरों से पूछा, उन्होंने नहीं बताया। वे होंठ—

ऐसी दवा कहाँ पाओगे बाबा ? किसने आपसे गलत बताया ? शिवराम शबला का नाम नहीं बता सके। मना किया था उसने।

कहा था—इस दवा को कभी सँपेरों के सामने हरगिज मत निकालना, कहीं उन्हें मालूम हो गया, तो मेरी जान जायगी। पंचायत बैठेगी, विचार होगा—इसने विश्वासघात किया है, सँपेरों की लछमी का पिटारा खोलकर पराए को दिया है। यह जड़ी किसी दूसरे को मिल जाय तो सँपेरों को रहा क्या ? सँपेरों के सामने साँप सिर झुका लेते हैं, तिल भर भी जान बाकी रहती है, तो इस दवा से लौट आती है—इसीलिए तो सँपेरों की पूछ है, नहीं तो कौन पूछता है उन्हें ! जो कुल की लछमी को बाँट देता है, उसकी सजा मौत है। मुझे मार डालेंगे।

शिवराम ने आज तक किसी सँपेरे को शबला का नाम नहीं बताया। कभी किसी को वह जड़ी नहीं दिखाई।

उधर बेला झुकती आ रही थी। गंगा के पश्चिम तट पर जंगल के माथे पर सूरज लौट पड़ा था। दोपहर के खत्म होने की घोषणा करते हुए चिड़ियाँ बोल उठीं। पेड़ों के घने पत्तों के अन्दर से निकलकर कौवे रास्ते पर उतरने लगे। शिवराम हड़बड़ा उठे। आचार्य के लौटने का वक्त हो गया।

—तुम ऐसा क्यों करने लगे ? हड़बड़ा क्यों उठे ?

—अब तुम जाओ, शबला। कविराज जी के आने का वक्त हो गया। उन्होंने अपने शिष्यों को मना कर रखा है, खबरदार, सँपेरिनों से होशियार रहना। साक्षात् मायाविन होती हैं वे।

पिटारा समेटकर शबला उठी। चली गई। पर फिर लौटी।

—क्यों, क्या बात है, शबला ?

—मुझे एक चीज दोगे, भाई ?

—कौन-सी चीज, कहो ?

शबला ने आगा-पीछा करके चीज का नाम बताया।

शिवराम चौंक उठे।

आफत ! यह सत्यानाशी कहती क्या है !

शिवराम सिहर उठे। बोले—नहीं-नहीं। वह न होगा, नहीं। वह मैं····

झूठी बात उनके मुह से नही निकली। कहना चाह रहे थे, वह मैं नही जानता, लेकिन 'नही जानता' का उच्चारण नही कर सके।

शबला ने उनसे आदमी मारने वाला जहर माँगा था—गर्भ में आयी संतान को नष्ट करने की दवा चाही थी। जिन आँखों सपना देखना मना है और उन आँखों डीठ सपना आ जाए तो उसे पोंछ फेंकने का हथियार *चाह रही थी वह। वह दवा, वह हथियार उनके पास भी है, पर उससे तो* सिर्फ सपना ही नष्ट नही होता, जिन आँखों सपना आता है, वे आँखें भी जाती रहती है। इसलिए वह धन्वंतरि से ऐसी कोई दवा, ऐसा कोई तेज धार हथियार चाह रही थी, जिससे आँखों मे उतरने वाले महज सपने को ही डठल से अलग हुए फूल की तरह गिरा दिया जा सकता हो। आँखें जिससे यह न जान पाएँ कि सपना अलग होकर धूल मे जा मिला।

शिवराम को सँपेरिनों के बहुत-से गुप्त व्यवसाय की बात मालूम थी, तो क्या यह भी उन्ही मे से एक है ? वशीकरण करती हैं वे। जाने कितनी अभागिने स्वामी को वश करने के लिए इनकी दवा का इस्तेमाल करके स्वामी की हत्यारिन बनी हैं, यह बात शिवराम से छिपी नही है।

यह सँपेरिन कितनी चतुर मायाविन है! शिवराम से रुपये न लेने की भलमनसाहत का मान करके, उनसे भाई का नाता जोड़कर उन्हें कैसे कठिन बधन में बाँधा उसने! ठीक नागिन की लपेट!

सँपेरिनें मायाविन होती हैं, छलनामयी, सर्वनाशी, कलमुही होती है, जला मुह लिए वे हँसती हैं, बेहया, पापिन!

शिवराम की ओर ताकती हुई शबला कुछ देर ठक् खड़ी रही। शिवराम की शकल देखकर, उनका आर्तस्वर सुनकर कुछ क्षण के लिए वह माटी के खिलौने-सी हो गई थी। कुछ ही क्षण मे उसका वह भाव कट गया। मिट्टी के खिलौने में मानो जान आ गई। जान के आने का पहला लक्षण था एक *लंबा निश्वास। उसके बाद होंठो पर हँसी की एक पतली रेखा दिखाई* पड़ी।

बड़ी क्षीण और उदास हँसी हँसकर वह बोली—यदि यह दे सक धरम भाई, तो तुम्हारी यह बहन बच जाती।

शिवराम समझ नही सके कि शबला क्या कह रही है।

उसने तुरत ही फिर कहा—यदि वह दवा तुम्हें नहीं मालूम है धरमभाई, यदि वह तुम न दे सको, तुम्हारे धरम पर आँच आए, तो जीवन की ज्वाला जुड़ाने वाली कोई दवा दे सकते हो ? मेरे अंग-अंग जले जा रहे हैं, जले जा रहे हैं। जी में आता है, हिजल बिल में या गंगा मैया की गोदी में लेटकर सो जाऊँ। या कि इन नागों की सेज बिछाकर उसी पर सो जाऊँ। मगर उससे भी तो मेरे अंदर की जलन नहीं जाने की। अंदर की वही जलन जुड़ाने वाली कोई दवा दे सकते हो ?

उधर रास्ते पर कहारों की हाँक सुनाई पड़ी। आचार्य धूर्जटी कविराज की पालकी आ रही है।

शिवराम स्तब्ध ही खड़े रहे। गुरु की पालकी के कहारों की हाँक से भी उनकी चेतना नहीं लौटी। लेकिन वह सँपेरिन भी गजब ! आदमी की आहट से साँपन जैसे औचक ही चौंककर पल में गायब हो जाती है, ठीक उसी तरह वह तेज कदम बढ़ाकर एक गली में निकल गई।

आचार्य की पालकी पहुँच गई। आचार्य उतरे। शिवराम के मन की जड़ता लेकिन तो भी नहीं गई। दोनों जड़ियों को मुट्ठी में दबाए वे खड़े ही रहे।

कुछ ही क्षणों में कहीं दूर से आती हुई चपल और सुरीले कंठ की आवाज शिवराम के कानों पहुँची।

—जय हो रानी मैया की, सोना-सुभागी, चंद्रमुखी, स्वामी-सुहागिन राजा की रानी, राजा की माँ की जय हो। भागजली कंगालन सँपेरिन ने तुम्हारे द्वार पर आकर हाथ पसारा है। नाग-नागन का नाच देखो, कलमुँही सँपेरिन का नाच देखो। माँ जी !

और डमरू जैसा बाजा उसके हाथ में बज उठा।

चार

दूसरे दिन शिवराम खुद ही सँपेरों के अड्डे पर गए। शहर के बाहर गंगा के उसी निर्जन तट पर, बरगद पीपल की छांह तले, उसी स्थान पर।

मगर, कहाँ तो कोई ? कुछ टूटे चूल्हे, दो-एक टूटे-फूटे बर्तन, कुछ छोटी-छोटी हड्डियाँ पड़ी थीं, शायद चिड़ियों की हड्डियाँ। सँपेरे जा चुके थे। कुछ कौवे जमीन पर घूम रहे थे, हड्डियों पर चोंच मारते फिर रहे थे। पेड़ के नीचे शहर के दो आवारा कुत्ते बैठे थे। सँपेरों के जूठन के लोभ से शायद वे शहर में कुछ दिनों के लिए यहाँ आ रहे थे। वे अभी समझ नहीं पाए थे कि सँपेरे चले गए हैं। सोच रहे हैं, कहीं गए हैं, आ जाएँगे।

शिवराम भी कुछ चकित हुए। सँपेरे ऐसे ही चले जाते है, वे रहने को नहीं आते। ऐसा ही तरीका है उनका। इस बात को वे अच्छी तरह से जानते थे, फिर भी चकित हुए। कहाँ, कल दोपहर को तो शबला ने कुछ भी नहीं कहा ! उसके शब्द अभी भी उनके कानों में गूँज रहे थे।

—धरम भाई, धन्वतरि भैया, सँपेरिन कालनागिन बहन है। सदा-सदा से यह बात चली आती है, नर-नाग साथ नहीं बसते। यह असंभव बनिए की बेटी और पदनाग के दो बच्चों के लिए प्यार के बल से, भैयादूज के टीका के चलते, विषहरी की कृपा से संभव हुआ था। अब तुमसे-मुझसे हुआ। तुमने बहन कहा, मैंने भाई।

उसके और शब्द भी गूँज रहे थे—यदि यह दे सकते धरम भाई, तो तुम्हारी यह बहन बच जाती।

उस दिन शिवराम सारी रात सो नहीं सके। दिमाग में तरह-तरह के सवाल उठाती हुई वही बातें चक्कर काटती रही और आज वे शबला से वही जानने के लिए आए थे। पूछने आए थे कि शबला बहन मुझे खोल कर बताओ कि तुमने ऐसा क्यों कहा ?

सूने नदीतट पर वे निस्तब्ध खड़े रहे।

साल-भर बाद सँपेरों की टोली फिर आयी।

इस बीच शिवराम ने जाने कितनी बार यह कामना की—आह,

काभरण वाला वह बर्तन किसी भी प्रकार से गिरकर टूट जाय तो
फिर संताली गाँव जायँ। और धानवन से हँसमुखी नाले में बही
ल-नागिन सँपेरिन निकले। कसौटी से घोर काले सुकुमार मुखड़े पर
सकी नजर में, होंठों की हँसी में जोत की किरण जल उठेगी।

मगर ऐसा भी होता है भला !

आचार्य धूर्जटी कविराज शिवराम के पीले पड़े चेहरे को देखते ही
ताड़ लेंगे कि सूचिकाभरण वाला पात्र अचानक ही गिरकर नहीं टूटा है,
टूटा है··· शिवराम सिहर उठे और उनकी मुट्ठी सख्त से और सख्त हो गई।

ेर। सँपेरे आए। एक साल से भी ज्यादा हो गया। लगभग एक
सप्ताह ज्यादा। दूसरे हिसाब से और भी ज्यादा। इस साल के पर्व-त्योहार
और वर्ष की अपेक्षा आगे बढ़ गए हैं। मलमास इस वर्ष दशहरा के भी
बाद है। नागपंचमी भादों के पहले पखवारे में ही हो गई। दुर्गापूजा क्वार
के आरंभ में। उस हिसाब से इन्हें और भी पहले आना चाहिए था।

बाहर चिमटे के कड़े बजे झन-झन झनन्न, झन-झन-झनन्न। एकर
महीन सुर में बीन बजी। उनके साथ ढोल—डम्-डम्। भारी आवाज औ
अजीब-से उच्चारण—जय विषहरी मैया ! जय बाबा धन्वंतरि। जय-ज
कार हो आपकी।

शिवराम अंदर बैठे दवा बना रहे थे। धूर्जटी कविराज बाहर ही
थे। दूर से कोई अजीब रोगी आया था. आचार्य खुली रोशनी में उसे
देख रहे थे। सँपेरों की आवाज सुनकर शिवराम चंचल हो उठे। प
के बिना बुलाए अपना काम छोड़कर आने का उन्हें साहस नहीं हुआ।
बाहर सँपेरों का स्वर गूँज-गूँज उठने लगा—दोहाई धन्वंतरि बाबा
जयकार हो। धन्वंतरि का आसन, हमारे यजमान का घर, धन से
भरपूर हो। आपकी दया से हमारे पापी पेट की ज्वाला जुड़ाए।

शिवराम ने आचार्य का भारी गला सुना—अरे, महादेव
वह बूढ़ा, वह ?

—उसने देह रख दी, बाबा।

—महादेव नहीं है ? गुजर गया ?—आचार्य ने शांत
कहा, आदमी की मौत से उन्हें आश्चर्य तो होता नहीं। उन

न था। काफी दिन हो चुका उसको मरे। उसकी विधवा पतोहू शबला, नागिनी कन्या, उसे नाग ने कटवाकर भाग गई—अभी-अभी कोई पंद्रह दिन पहले। समय पर सब संताली गाँव से निकल पड़े थे। हंसरमुखी से उनकी नावें गंगा में आयीं। महादेव ने कहा—आज रात के लिए नावें यहीं बाँधो।

भादों का अंत। भरी हुई गंगा। कटाव पर पानी छल-छलात कर रहा था। बीच वाला बालू का चौर, जो प्रायः सात-आठ महीना जगा रहता है, डूब गया था। कटते हुए किनारे से बीच-बीच में झुप्-झुप् आवाज करती हुई मिट्टी गिर रही थी। कभी-कभी बड़ी-बड़ी चट्टान गिर रही थी। जोरों की आवाज उठ रही थी और लहरों पर डोलती हुई इस पार से उस पार को चली जाती थी।

नाव के ऊपर कई गगनभेरी पंछी कर्-कर् करते हुए उड़ रहे थे। दूर, कोई मील-भर के फासले पर झाऊ के जंगल में लोमड़ी बोल रही थी। बाघ निकला था शायद। हाँसखाली के मुहाने के आस-पास, बासवन में एक अजीब क्रोध भरा चीत्कार उठ रहा था, दो जानवर गरज रहे थे। दो बनैले सुअरों में भिड़ंत हो गई थी। पास ही कहीं कोई जलचर पानी में उथल-पुथल मचाता हुआ लोट रहा था, मगर होगा। नावें उठती हुई लहरों में डोल रही थीं। नाव की टप्परों की लगभग सारी ढिबरियाँ बुझ चुकी थीं। नाव पर लगभग चार सँपेरे जवान पहरा दे रहे थे। मगर के पास आने पर वे चिल्लाएँगे। साथ ही इस पर निगरानी रख रहे थे कि कोई सँपेरिन इस नाव से उस नाव पर न जाय।

ऐन वक्त पर महादेव की नाव से मार्मिक चीख उठी। ऐसा लगा, जोरों के आलोड़न में नाव डूब जायगी। क्या हो गया ?

—क्या हुआ, सरदार ?—पहरेदार सँपेरे खड़े हो गए। फिर पूछा—सरदार ?

सरदार की ओर से कोई जवाब नहीं। एक नंगी काली मूर्ति सरदार के टप्पर से निकली और झप् से गंगा में कूद पड़ी। दूर पर उस जलचर जीव ने भी एक बार हलकोरा मारकर अपनी मौजूदगी जता दी। वह जीव और भी दो बार उसी तरह से झपटा, फिर झपटा कि नहीं, यह देखने

का किसी को अवकाश नही था।

मरदार की चीख उठ ही रही थी। वह गों-गों कर रहा था।

नावो पर रोशनी जल उठी। सरदार के पँजरे मे लोहे की एक कील गड़ी हुई थी। देखकर सभी लोग सिहर उठे।

नागिनी कन्या का नागदंत। यह उनका खास अस्त्र होता है। विष मे बुझी लोहे की कील। यह कौन-सा विष होता है, कोई नही जानता। नागिनी कन्याएँ भी नही जानती। आदि विपकन्या से हाथोंहाथ एक विष का चोंगा चला आ रहा है। वह कील उसी चोंगे मे बंद रहता है। विष मे भीगता रहता है। यह कील वही थी। आतक से सरदार की आँखें विस्फारित हो गईं।

गगाराम ने आवाज दी—चाचा ! चाचा !

सरदार ने जवाब नही दिया, हताश होकर उसने सिर्फ गरदन हिलाई। आँखों से आँसू बह निकला। बोला—पानी !

पानी पीकर निराश हो गरदन हिलाकर बोला—उसने मेरी जान ही नही ली, मुझे नर्क मे भी गर्क कर गई दईमारी! अँधेरे मे मैंने समझा, दधिमुखी आयी, मैं···

हताशा मे उसने सिर हिलाया, जैसे सिर पीटना चाह रहा हो।

सभी सिहर उठे।

दधिमुखी महादेव की प्रेमिका है। वह प्रेम-कहानी सभी सँपेरे जानते हैं।

नाव पर शबला का कपडा पड़ा हुआ था। वह हत्यारिन अंधेरे मे दबे पाँवो आयी। नाव के हिलने से महादेव जाग पडा। समझा, शायद दधिमुखी आयी। बुड्ढे के आलिंगन मे बँधकर उसने कलेजे मे कील भोंक दी। नागदंत। सिर्फ उसे मारने की ही नियत नही थी उसकी—उसे धर्म मे पतित करके—परलोक मे उसके नर्क का रास्ता साफ करके वह नगी ही गंगा में कूद पडी।

गगाराम ने कहा—धन्वतरि बाबा के लिए यह कोई नई बात तो नही है। आप तो सब जानते हैं। उस छोरी के यह मति बहुत दिनों से हो गई थी बाबा, बहुत दिनों से। ये कन्याएँ ही ऐसी होती ।

ये कन्याएँ ही ऐसी होती हैं।

शिवराम को औचक ही याद आ गया, शबला ने उससे कहा था, अगर वह दवा नहीं जानते हो धरम भाई, दे नहीं सको, तो जीवन की ज्वाला जुड़ाने की दवा दो। हिजल बिल में डूबती हूँ, गंगा में तैरती हूँ, बाहर जुड़ाता है, अंदर नहीं जुड़ाता। ऐसी ही कोई दवा दो, मेरा सब कुछ जुड़ा जाए।

गंगाराम ने कहा—ये नागिनी कन्याएँ सदा से यही करती आ रही हैं, यही उनका भाग है, यही उनका स्वभाव है। विधाता का निर्देश है। बिहुला सती का अभिशाप है।

सती के पति को कालनागिन ने डँस लिया।

सती के दीर्घ निश्वास से कालनागिन के नाग भी समाप्त हो गए। सती बिहुला मरे पति को गोद में लिए केले के बेड़े पर अथाह में बह चली। दिन निकले, रातें बीतीं; कितनी वर्षा, आँधी, वज्रपात गुजरा; कितने पापी, राक्षस, मगर आए—सारे कष्टों को झेलकर सती अपने मरे पति को जिला लायी; माँ विषहरी को दुनिया में पूजा मिली, उन्होंने चाँद सौदागर के छः पूत, सात जहाज लौटा दिए, लेकिन वे अभागिन काल-नागिन की बात भूल गईं। सती के अभिशाप से जो कालनाग धरती से लुप्त हो गए, वे फिर नहीं लौटे। कालनागिनी जन्म नर-कुल में लेती है, लेकिन भाग्य नागिन का ही लिए जनमती है। उसके पति नहीं होता, इसीलिए जिससे छुटपन में उसका ब्याह होता है, वह साँप के काटने से मर जाता है। उसके बाद उसके अंगों में नागिनी कन्या के लक्षण निखरते हैं। निखरने पर उसे माँ-मनसा का घर मिलता है, उनकी पूजा का भार भी मिलता है—परंतु अभागिन को पति नहीं मिलता, पुत्र नहीं मिलता, घर नहीं मिलता। सो उसका नागिन का स्वभाव प्रकट हो आता है। सरदार से कलह शुरू हो जाता है।

गंगाराम ने कहा—यही पहला लक्षण है बाबा। नहीं समझे! बाप पर क्रुद्ध होती है। बाप के घर से अरुचि होती है!

पिछली बार धन्वंतरि बाबा के आँगन में विष घुलाते हुए महादेव ने

यही बात कही थी। कहते हुए वह इतना उत्तेजित हो गया था कि जिस हाथ से वह सांप का मुंह पकड़े हुए था, वह हाथ टेढ़ा हो गया था। तेज नजर वाली शबला ने ऐन मौके पर उसका हाथ ठीक कर दिया था, इसलिए बच गई थी, नहीं तो उस रोज वही जाती। महादेव ने कहा था, इस लड़की का रीत-चरित अजीब हो उठा है। मन में पाप समाया है। महादेव ने यह भी कहा था, आखिर जात-स्वभाव जायगा कहां बाबा, इस जात का यही स्वभाव है, यही तौर है। पल-भर के लिए शबला की आंखें लहक उठी थीं, उसकी आंखों का वह लहक उठना एकाध जने की नजर में आया था, सभी नहीं देख पाए थे। अधिकांश लोगों की नजर महादेव के मुंह की ओर थी। शिवराम ने देखा था। जवानी के धर्म से शायद, तरुणाई के अमोघ नियम से उनकी नजर उस मोहमयी काली सँपेरिन के चेहरे पर ही गड़ी थी। इसीलिए उस लहकने को उन्होंने देखा था। नहीं तो वे भी नहीं देख पाते, क्योंकि वह लहक लमहे में ही बुझ गई थी। ऐसा लगा, उस सँपेरिन के छद्म वेश को भेदकर पल-भर के लिए फन उठाकर नागिन-रूप ने झांक लिया और फिर गुम गया।

आचार्य ने कहा था—सरदार सँपेरा और विषहरी की बेटी—बाप बेटी हैं। बाप-बेटी का यह झगड़ा निवटा लेना।

बाप पर नागिनी कन्या को आक्रोश हुआ था।

क्यों न हो? कितना सहे शबला? क्यों सहे? बाप पर कुछ शौक से थोड़े ही आक्रोश होता है? कम दुःख से आक्रोश होता है?

सांप के विख को दुनिया हलाहल कहती है। वह विख मनुष्य के लहू में एक बूंद मिल जाय, तो मनुष्य मर जाता है। दुर्गम पहाड़ के ऊपर घने जंगल में जाइए, देखिएगा, पत्थर को फोड़कर पेड़ उग आया है; वह पेड़ आसमान छूने चला है, लोहे की जंजीर सी मोटी लतर उगी है, किसी गाछ में लिपटकर उसने उसकी चोटी पर जाल-सा बिछाया है, देखिएगा, पहाड़ पर तमाम विचित्र घासों का जंगल है गौर से देखने पर जगह-जगह पर एक-एक पत्थर दिखाई देगा—घास नहीं, सेवार नहीं, सख्त काला पत्थर। खूब अच्छी तरह देखिए, उसके चारों तरफ माटी के चूरे-सा कुछ जमा हुआ दिखाई पड़ेगा। वह दरअसल माटी का चूरा नहीं है, चींटी की

जात का एक कीड़ा है। आप नहीं जानते, ये सँपेरे जानते हैं कि वह पत्थर विष का पत्थर बन गया है। पहाड़ के ऊपर घने जंगल में शंखचूड़ नाग रहते हैं। ये शंखचूड़ सात-आठ हाथ के लंबे बड़े भयानक विषधर होते हैं। वे रात में आकर पत्थर को काटते हैं, उस पर विष उगलते हैं। वह पत्थर मर जाता है। उस पर गाछ तो गाछ, सेंवार तक नहीं लगती। साँप के बूँद भर जहर से आदमी मर जाता है, वही बूँद पत्थर पर गिरने से पत्थर की छाती भी जलकर खाक हो जाती है सदा के लिए। उन चींटियों ने पत्थर पर लसलसाते विख को रस समझा था, उस रस पर वे टूट पड़ीं और विख से जलकर धूल हो गई। लेकिन उस विख से भी भयंकर है चाँदी का एक टुकड़ा, जरा-सा सोना। और उससे भी गजब है बाबा आसन !

नागिनी कन्या के आसन पर बैठकर, माँ विषहरी के घर में फूल-जल चढ़ाकर वह बुड्ढे की गलतियों को कैसे बरदाश्त करे ?

पिछली बार जब वे 'विख' बेचने के लिए यहीं, धन्वंतरि बाबा के यहाँ आए थे, तो सबसे सबला ने कहा नहीं था कि कन्या, तू सरदार से कह, जिसका जो पावना है, यहीं चुका दे। नहीं तो···

महादेव का फरमाबरदार वह लोटन, उसने भी कहा था, पिछले साल का भी बकाया अभी तक नहीं चुका है।

इसी बात पर विवाद हुआ। नागिनी कन्या विषहरी की पुजारिन होती है, सँपेरों का कल्याण ही उसका काम है, वही उसका धर्म है। यह बात वह न कहे तो कहे कौन ? और वहा कहने में मुसीबत। झगड़ा शुरू हो गया। सरदार खुद तो सब का अधरम देखता फिरेगा और उसके अधरम पर कोई कुछ कहे तो वही हुआ बदमाश !

विषहरी की पूजा की प्रणामी, भोग की सामग्री—उसका भी हिस्सा करना नागिनी कन्या के ही जिम्मे है। एक हिस्सा नागिनी कन्या का, एक सरदार सँपेरे का; बाकी दो हिस्से में सारे सँपेरे। फिर नागिनी कन्या के हिस्से का दो हिस्सा—पुरानी नागिनी कन्या को मिलता है, जिन सँपेरों के यहाँ मर्द सूरत नहीं, उस घर की स्त्रियों को मिलता है। इन्हीं हिस्सों के लिए झगड़ा। जो भी अच्छी चीज होती है, सब पर सरदार का दावा। भला विवाद न होगा !

यह विवाद सदा का है। सदा से होता आया है। कभी सरदार जीतता है, कभी कन्या जीतती है। कन्या कम ही जीतती है और जीतने पर भी वह जीत हार में बदल जाती है। कन्या मां विषहरी की पुजारिन है, अंदर से वह पूरी नागिन होती है, आखिर उसे काटकर ही भागना पड़ता है, न भागे तो मौत। इसके सिवा उसके नसीब मे बिहुला का अभिशाप होता है, एक दिन एकाएक वह अभिशाप फूल उठता है। तन-मन में ज्वाला सुलग उठती है। रात मे नींद नहीं आती। फर्श पर लेटी पड़ी रोती रहती है यों ही। लगता रहता है, कहीं कोई सीटी बजा रहा है।

शिवराम से जिस दिन आखिरी मुलाकात हुई थी, उसी दिन रात को शबला अपने यहां उनीदी आंखों पड़ी थी। नींद नहीं आ रही थी। आधी रात की पुकार पुकार गए सियार। गंगा किनारे के बड़े-बड़े पेड़ों पर से डैने खोलकर चमगादड़ इस पार से उस पार, उस पार से इस पार उड़ गए। उल्लू बोल उठे। सँपेरिन के माथे पर सांपों के जो पिटारे टँगे थे, उनमें बन्द सांप एक बार फुफकार उठे। सँपेरिन का कलेजा भी कैसा तो कर उठा। गहरी रात मे डायन का भीतर कलेजा मलमल कर उठता है मरघट मे काली मैया के साधक मां-मां पुकार उठते हैं, सियारों की हांक से चोर-डकैतों की नींद खुल जाती है, इस खास घड़ी मे बिछौने पर सोए मरीज भी एक बार जरूर छटपटा उठते हैं, ठीक इसी क्षण नागिनी कन्या के मन मे कालनागिनी रूप लिए जाग पड़ती है। रोज ही जागती है। लेकिन उसे बिछौने का कोर थामे दांत पर दांत धरे निश्वास रोके पड़े रहना पड़ता है। ऐसा ही नियम है। कुछ देर मे, जब ऐसा लगता है कि रोका हुआ निश्वास पंजरों को तोड़-फोड़कर निकल पड़ेगा, तो उसे निश्वास छोड़ना पड़ता है। उसके बाद जब कलेजा धौंकनी-सा धौंकने लगता है, तो उठकर बैठ जाना पड़ता है। बाल बिखरे होते हैं, तो उन्हें बांध लेना पड़ता है; फिर से कसकर कपड़ा पहन लेना पड़ता है, विषहरी का नाम जपना पड़ता है। उसके बाद वह फिर सो जाती है। नागिनी कन्या के अन्दर की

नागिन को उस समय जबड़ा दबाए नागिन-सा ही हार मानना पड़ता है। उस समय वह पिटारा खोजने लगती है, मन के पिटारे में घुसकर कुंडली मारकर पड़ जाती है। ऐसा न करके वह यदि बिस्तर से उठकर बाहर निकल पड़े तो उसका सर्वनाश होता है।

रात का अँधेरा उसके नैन-मन में निशि का नशा चढ़ा देता है।

'निशि का नशा' रात की पुकार से भी खौफनाक होता है। रात की पुकार आदमी जीवन में कभी-कभार ही सुनता है। लेकिन निशि का नशा आदमी को नियमित रूप से नित्य ही पुकारता है। हिजल बिल के चारों ओर रात को भुकभुकी जलती है। घने वन में बाँसों की बाँसुरी बजती है। हिजल के घासवन में इधर बाघ बोलता है, उधर बोलती है बाघिन। बिल के इस सिरे पर चकवा, उस सिरे पर चकवी बोलती है। वनकूकी पंछी पछिन को पुकारता है :

—कुक !

—कुक !

—कुक् !

—कुक् !

नागिन भी पागल हो जाती है। सारी दुनिया को भूल बैठती है। भूल बैठती है माँ विषहरी का निर्देश, भूल जाती है सती बिहुला का अभिशाप, भूल जाती है अपनी शपथ की बात। सँपेरों, सँपेरों के सरदार के शासन को भूल जाती है; मान-सम्मान, पाप-पुण्य, सब भूल जाती है और वह रास्ते पर उतर पड़ती है। उतरकर घने घासवन में नागिनी जैसी ही सनसनाती हुई चलती है। सारी रात उद्भ्रांत-सी भटकती रहती है—घासवन के अन्दर, मगरखाली के किनारे-किनारे, हिजल बिल के चारों ओर घूमती रहती है।

बाँसुरी ! कौन बजा रहा है बाँसुरी ! कहाँ !

रात और रातों को नागिनी कन्या घूमती रहती है। एक दिन निकल पड़ने के बाद फिर खैर नहीं। रोज रात उसपर निशि का नशा सवार होगा, मानो झोंटा पकड़कर खींच ले जाएगा।

एक नागिनी कन्या पर यह नशा सवार हो गया था, उसकी जान बाव

के दबोच में गई। एक नागिनी कन्या की लाश हिजल बिल के पानी में पायी गई थी। एक का कहीं पता ही नहीं चला। हंगरमुखी नाले में उसकी *लाल साड़ी का फटा टुकड़ा मिला था। मगर के पेट में समा गई थी वह।*

दो-तीन जनों पगली हो गई थीं। हिजल बिल के किनारे सारे बदन में कीच मले बैठी थी, आँखें सुर्ख हो गई थीं। कोई सिर्फ हँसती रही, कोई सिर्फ रोती रही।

चारेक की बड़ी बुरी गत हुई। वे दईमारी धरम गँवाकर लौटीं। कुछ ही दिनों के बाद उनमें मातृत्व का लक्षण दिखाई दिया। उसके बाद पेट की संतान को नष्ट करने की कोशिश में खुद ही मरी। किसी ने भागने की कोशिश की, कोई भाग गई। लेकिन भागकर भी तो राहत नहीं मिली। बच नहीं पायी। या तो सँपेरों के मंत्र पढ़े वाण से मारी गयी या नागिनी धर्म के नियमानुकूल प्रसव के बाद ही उसने गला दबाकर शिशु को मार डाला। अंडा फूटकर संतान के बाहर निकलते ही नागिनी उन्हें चट कर जाती है—नागिनी कन्या को भी उस धर्म का पालन करना ही पड़ता है। छुटकारा कहाँ ? गरदन पकड़कर धरम उससे यह कराकर ही छोड़ेगा।

निशि का नशा—नागिनी कन्या की मौत का योग है। रात को दोपहर की सूचना होने पर आँखें बंद किए, साँस रोके, दाँत पर दाँत धरे, बिछौने की कोर पकड़े पड़ी रही नागिनी कन्या।

गंगा किनारे बरगद तले खजूर के पत्तों की चटाई की कोर पकड़ने-पकड़ने भी शबला ने उस दिन नहीं पकड़ी। क्या होगा ? क्या होगा ? *इतने बड़े जवान ने ही उसके लिए जान दे दी। न होगा तो वह भी जान* दे देगी। उसकी प्रेतात्मा कहीं गंगा के किनारे आयी हो ! उसका कलेजा हू-हू कर उठा। वह चटाई पर उठ बैठी।

आकाश से धरती तक थम-थम अँधेरा। ऊपर सतमैया झुक आया आकाश पर। चारों ओर दोपहर रात की सूचना फैल गई। उसी में रात की पुकार छिपी थी। छाती के अंदर कैसा कर उठा। साफ सुन पाने लगी वह धुक, धुक, धुक। आँखों में पलक नहीं।

अंधकार की ओर ताकने लगी। अँधेरे में पेड़-पौधे मिल-मे-गए थे, शहर ढँक गया था, घाट-बाट, खेत-खलिहान, वन-बस्ती, हाट-बाजार,

लोग-बाग—सब, सब अँधेरे में मिल गए थे। जैसे, कहीं कुछ नहीं, है सिर्फ अँधेरा, सारी दुनिया को छाये एक काला पारावार—

वह उठी। आगे बढ़ी। गंगा की ओर चली। गंगा के ऊँचे कगार से उतरकर बैठी, ठीक वहीं पर, जहाँ पर वह नौजवान छोरा उस दिन उसके इंतजार में बैठा था। गंगा की धारा में बहाव की छल-छल आवाज हो रही थी अविराम, रह-रहकर किनारे पर स्रोत के टकराने का छल-छलात् शब्द! थोड़ी ही दूर पर उनकी नावें डोल रही थीं। गीली माटी पर औंधी पड़कर वह रोने लगी।

—गंगा मैया! मेरे अंगों की जलन बुझा देना, धो देना। उसने मेरी, सिर्फ मेरी खातिर अपनी जान गँवाई। हाय-हाय रे!

जी में आया, पानी में कूद पड़े।

छाती में जलन भी तो कम नहीं थी! और सिर्फ क्या छाती ही में? जलन तो अंग-अंग में थी!

कि आदमी का कंठ-स्वर सुनकर चौंक उठी वह। पहचान गई, आवाज यह किसकी है! बुड्ढे की! बुड्ढा ठीक जग गया है। वह ठीक जान गया है। देख लिया है कि अपने बिछौने पर सबला नहीं है।

लमहे में वह गंगा के पानी में उतर पड़ी। कुछ ही दूर पर सँपेरों की बँधी नावें गंगा की लहरों में डोल रही थीं। वह उन्हीं नावों के पास चक्कर काटकर एक नाव पर चढ़ गई। उसी की नाव थी वह। नागिनी कन्या की नाव। उस नाव पर विषहरी का घट है। घट के पास वह पेट के बल पड़ी रही—ओ मैया, बचा ले। बूढ़े के हाथ से बचा ले। इस निशि के नशे से मुझे बचा, मेरी मैया, जिसमें सँपेरों के कुल का पुण्य सबला से बरबाद न हो। इस जवान की जान गई, वह जान यदि तू ने ली है, तब तो कहने को कुछ नहीं है। लेकिन ओ मेरी माँ, यदि साजिश करके लोगों ने उसे मार डाला है, तो इसका विचार तू करना। तेरा विचार बड़ा बारीक है, उसी विचार से सजा देना।

—तू उसका विचार करना, तू।

कब वह चीख उठी थी, वह खुद भी नहीं जानती। उस चीख से नाव के पहरेदारों की नींद खुल गई। वे डरकर, दबे पाँवों आए। देखा,

शवला विपहरी के घट के सामने औंधी पड़ी है। चीख रही है—विचार करो। सँपेरे जानते हैं, नागिनी कन्या की आत्मा आदमी की आत्मा नहीं, वह नागकुल के नाग की आत्मा होती है। उसके हाथ की पूजा लेने के लिए विपहरी उसे सँपेरों के वश में भेजती है। वह उस पर आती हैं—आँखें सुर्ख हो आती हैं, बाल बिखर पड़ते हैं, उस समय वह अपने आप में नहीं रहती। उस समय साक्षात् देवी से जुड़ जाती है वह। उसकी लाल आँखों के सामने सँपेरों के पाप-पुण्य का पट खुल जाता है। वह अनर्गल बकती चली जाती है—यह पाप, यह पाप ! नहीं, यह नहीं होगा !

वे सँपेरे काँप उठे। गीले कपड़े, ओदे बालों नागिनी कन्या औंधी पड़ी है। हाथ जोड़कर चीख रही है—विचार कर।

वे सब उसकी नाव पर आ गए। भार से नाव डोलने लगी, फिर भी उसे होश नहीं। निश्चय ही उस पर देवी आयी है ! इतनी गहरी रात में ऐसी चीख। उफ, चीख से मानो अँधेरा फूट रहा है।

देखते ही देखते सोये सँपेरे जाग पड़े। सभी आकर नदी किनारे बटुर गए। हाथ जोड़कर सब एक साथ ही चिल्ला उठे—रच्छा करो माँ, रच्छा करो !

लेकिन सरदार कहाँ है ? सरदार ? वह बुड्ढा ?

भादो सँपेरे ने हाँक लगाई—सरदार ! अजी ओ सरदार ! कहाँ हो ?

मगर कहाँ ! सरदार का पता नहीं।

भादो शवला का चाचा है। उसने शवला की माँ से कहा। शवला की माँ, प्रौढ़ा सुरधुनी सँपेरिन से कहा—भौजी, एक बार तुम्हीं देखो। बुला... कन्या को।

वह बोली—देवर, अभी तो मेरे बस की नहीं। अभी उसे छू... सकता है ?

—तो ?

—तो सब मिलकर एक ही साथ पुकारो। देखो क्या होता है

—वही ठीक है। लो भई, सब एक साथ ही पुकारो...—

सबने एक ही साथ सुर मिलाया—ऐ माँ विषहरी ... में सोयी हुई सृष्टि चौंक उठी। गंगा के किनारे, ...

ध्वनि की प्रतिध्वनि उठी, वह प्रतिध्वनि इस पार के प्रांतर में दौड़
ई, दिगंत में फैल गई। शवला की चेतना लौटी। उसने सिर उठाया—
या है ?

दूसरे ही क्षण वह सब समझ गई। समझ गई, उस पर देवी आयी थी
उसकी प्राण-पुतली के माथे पर देवी ने हाथ रखा था। उसकी देह अभी
तक झिमझिमा रही थी। फिर भी वह उठी।

—उठी। उठकर बैठ रही है कन्या।—जटाधारी सँपेरे ने कहा।

सँपेरों ने फिर धुन उठाई—विषहरी मैया की जय !

लड़खड़ाती हुई शवला वहाँ से उठ आयी।

—ओ भौजी, पकड़ो, कन्या को पकड़ो। लडखड़ा रही है।

सुरधुनी पानी में उतरी।—क्या हुआ था, कन्या ? बिटिया !

शवला ने कहा —माँ ने दरस दिया, परस दिया।

—क्या बोलीं ?

—बोलीं ?—उसकी आँखें झकमका उठीं—बोलीं, माँ पक्का विच
करेगी। धागे की धार पर पक्का विचार।

ठीक इसी समय किनारे पर कुत्ते की भौंक सुनाई पड़ी। सभी च
उठे।

कुत्ते के गले की वह आवाज कैसी ! भौंकते हुए एक ही साथ दो
चले आ रहे थे, मानो किसी का पीछा करते आ रहे हों।

दौड़ते हुए दैत्य-सा एक आदमी आकर खड़ा हो गया।

सरदार ! सरदार सँपेरा !

उसके पीछे-पीछे चिपटे मुंहवाले दो सफेद कुत्ते।

—लाठी ! भादो, लोटन—लाठी लाओ। फाड़ डालेंगे ये कु

और लाठी-डंडे निकल पड़े, भौंक शांत हो गई।

कुत्तों ने काटकर महादेव को लहू-लुहान कर दिया था।

—वह ! उस ऊंचे मकान के विलायती कुत्ते हैं, उस मका

महादेव उस घर की चहारदीवारी फाँदकर अंदर गया
उसे लेदा। फिर दीवार फाँदकर ही वह भागा और कुत्ते भ

रास्ते-भर थम-थम कर उसने ढेले मारे, मगर कुत्ते बाज न आए। ढेलों की परवाह न की। उसके हाथ में लोहे का एक डंडा था। चहारदीवारी फांदते वक्त उसे उस पार फेंक दिया था। आते वक्त उसे उठाने का मौका ही न मिला। उसके पहले ही कुत्ते आ पहुँचे थे।

—मगर तू वहाँ गया क्यों था?

—क्यों गया था?—महादेव के जी में आया, हाथ के नाखून से शबला के गले को वह चलनी बना दे। उसने शबला की तरफ ताका।

शबला की आँखें फूंके हुए अंगारे-सी दहक उठीं। वह बोली—तू कुत्ते के काटे नहीं मरेगा, मरेगा नागिन के दांत से। माँ ने मुझे बताया है। आज उससे मेरी बात हुई है। वह पक्का विचार करेगी।

महादेव गरज उठा—पापिन!

भादो ने झट उसका हाथ पकड़ लिया। चीखा—सरदार!

महादेव भी चीखा—ऐ! छोड़ दे हाथ, इस पापिन को मैं···

—आः, तेरा मुंह घायल होगा। हम सारे सँपेरों ने देखा है, इस पर आज देवी आयी थी। यह सब मत बोल। तूने देखा नहीं, तेरा भाग।

शबला ने कहा—वह मुझको ढूंढने गया था। उस दिन मैंने उस मकान के राजा बाबू को नाच दिखाया था, गीत सुनाया था—बाबू ने मुझको टुकटुक साड़ी दी थी, इसीलिए मुझे बिछौने पर न देखकर वह मुझे वहाँ खोजने गया था। सोचा, मैं पाप करने गई हूँ। इसका विचार होगा। माँ ने मुझसे कहा है, इसका पक्का विचार होगा।

सारी टोली सन्न रह गई। सबके चेहरे पर मानो शंका थम-थम करने लगी।

महादेव एकटक शबला को ताकता रहा। उसके मन में सवाल उठा, सच ही क्या शबला बिषहरी मैया के घट के सामने ध्यान कर रही थी? माँ ने उसे बुलाया था? हाथ-पाँव के जख्म से लहू चू रहा था, मगर महादेव को उसकी परवाह न थी। पाँव का जख्म ज्यादा था। एक जगह का थोड़ा-सा मास ही नोच लिया था। मगर कोई गम नहीं। वह सोच रहा था।

शबला ने कहा—अरे, लहू तो धो-धवा ले बुड्ढे, मेरी ओर ताककर

क्या करेगा ? जा, धो ले। उस पर थोड़ा-सा रेंड़ी का तेल लगा दे। विला-यती कुत्ते के जहर नहीं होता, कुत्ते-सा सिर्फ भों-भों भूँकता है। उससे तेरी मौत नहीं होगी। लेकिन फूलकर पक जाने से कष्ट होगा। और...

भादो की ओर देखकर बोली—इन मरे कुत्तों को नाव पर रखकर गंगा में डाल आओ। मेवरे बाबू के यहाँ इनकी खोज होगी। चारों ओर लोग दौड़ेंगे। कहीं देख लें तो पूरी टोली की शामत आएगी। नहीं समझे ? वहा आओ। हाँ, सवेरा होते-होते डेरा-डंडा समेट लो। चीज-वस्त नाव पर सहेज दो। यहाँ अब नहीं।

महादेव मौन ही रहा। उसने कुछ न कहा। लेकिन आधी रात के उसी नशीले क्षण में ही, उल्लू की बोली, सियारों के हुआ-हुक्का, पेड़ों की मर्मर, चमगादड़ों के डैनों की फटफटा से निशि जब जागी, प्राण-प्राण को इशारा किया, ठीक उसी वक्त, उसी क्षण ही तो उसकी भी नींद टूटी थी ! रोज ही तो टूटती है। सरदार सँपेरे की नींद माँ विषहरी के आदेश से टूटती है—वह अपना लोहे का डंडा लिए उठता है और सँपेरा-समाज के धर्म की रक्षा करता है। वह लग्न जब बीत जाता है, तो महादेव धीरे-धीरे दक्षिमुखी के घर के सामने जाकर खड़ा हो जाता है। वह भी जग जाती है। बाहर निकल आती है। उस समय सरदार सँपेरा दंडधर नहीं रह जाता, साधारण आदमी बन जाता है !

यहाँ भी आज कई दिन हुए, आया है। ठीक उसी घड़ी महादेव की नींद टूटती रही—टूटती नहीं रही, उस घड़ी के पहले वह सोया ही नहीं। उसने उस जवान पर कड़ी निगरानी रखी थी—नागिनी कन्या, इस पापिन पर तो रखी ही थी। माँ विषहरी की आज्ञा से उसने उस राज-गेहुँअन को छोड़ा था। कहा था—पापी की जान लेना, तू नागकुल का राजकुमार है, तुझी पर विचार का भार दिया। उसे उसने उस जवान के पीछे छोड़ दिया था। बाँस के चोंगे में भरकर डोरी खींच कर चोंगे के मुँह को खोल दिया था।

पापी मरा ! लेकिन—! उसने सोचा था, दोनों ही जाएँगे। पापी-पापिन दोनों। लेकिन वह अकेला ही गया।

आज उसी लग्न में उठकर उसने साफ देखा, नागिन उठी—काल-

नागिन—बरगद की ओट लेकर उधर गई। उसके पीछे लगा यह भी बर-गद के इस ओर जा खड़ा हुआ था। अँधेरे में उस ऊँचे मकान के ऊपर की रोशनी उसकी आँखों में चमकी। याद आया, उसी मकान में शबला को रंगीन साड़ी और सोलह आना इनाम मिला है और वह बात, सोने के उस राजकुमार की बात दूसरी सँपेरिनों से शबला को कहते उसने अपने कानों सुना है। पापिन की आँखों में निशि के नशा-सा सुरूर चढ़ते उसने देखा है।

तो पापिन के कलेजे में कटहली चंपा की खुशबू जागी है! उसी नशे में दिशा भूलकर वह जरूर उसी मकान में गई है—सोने के राजकुमार के आकर्षण से खिंची गई है। सरदार एकटक उस रास्ते की ओर ताकता रहा—कहाँ तक गई पापिन! कि लगा, वही तो, सफेद साड़ी में वह काली दुबली लड़की चली जा रही है! काल-नागिनी-सी सन्-सन् करती चली जा रही है! वह!—वह भी दौड़ पड़ा।

पलटकर किसी तरफ नहीं ताका। सादे कपड़े में उस काली लड़की को मानो उसने हवा में मिलकर जाते देखा। इस लग्न में नागिन के पर उग आते हैं—वह चलती नहीं, उड़ती है। ठीक वही। पीछे-पीछे भरसक महादेव भी दौड़ने लगा।

चहारदीवारी के इस पार उसे देख न पाकर वह दीवार पर चढ़कर बैठा था। कुत्तों ने खदेड़ा। भाग आना पड़ा।

तो? तो यह क्या हुआ? वही लड़की माँ-मनसा के घट के पास कैसे आयी?

जैसे भी आयी हो चाहे, सँपेरों के सामने उसका सिर नीचा हो गया। उसके उस झुके सिर पर नागिन फन खोलकर डोलने लगी। किसी भी क्षण उसे डँस सकती है।

—ऐ बुड्ढे, उठ। नाव खोलेंगे।—शबला ने कहा।

सुबह होते न होते सँपेरों की नावें बीच गंगा में बह चलीं।

दक्खिन-दक्खिन में। बहाव में। दक्खिन।

दूसरा अध्याय

एक

तें शिवराम की कही नहीं हैं, ये हैं पिंगला की। पिंगला ही शबला के
सनाली गाँव की नई नागिनी कन्या हुई। उसी ने शिवराम से शबला
यह कहानी कही थी।

कहते-कहते पिंगला ने कहा—माँ की लीला। माँ मानें विषहरि, सँपेरों
ी दूसरी माँ नहीं। काली नहीं, दुर्गा नहीं—कोई नहीं। और सँपेरों के
ाबा मानें शिव। शिव के मानस से माँ विषहरी का जनम हुआ। पद्मवन
में शिव के मानस से पैदा होकर माँ कमल के पत्ते पर धीरे-धीरे बड़ी हुई।
माँ रहती थी पद्मवन में है—पद्म जैसा रंग अंग का। मधु पीकर शिवजी
को नशा नहीं होता, इसलिए शिवजी की बेटी ने पद्मवन में पद्म मधु
पिया, उसी बिटिया के गले से अमानित से मधु हुआ और तब शिवजी ने वह
मधु पान किया। उसी मधु से उनके कंठ का रंग हो गया नीला, सदा-सदा
के लिए उनकी मधु की प्यास मिट गई। खुशी के मारे आँखें दोनों छल-छल!
शिवजी की बेटी पद्मावती, पद्म जैसा देह का रंग, वैसी ही खुशबू अंग
की! माँ त्रिभुवनी है।

ऐसी माँ की पूजा का भार जिस पर हो, उसके बूढ़ी होने की गुंजाइश
है भला! युवती माँ की पूजा युवती कन्या करेगी। लेकिन हाँ, चूँकि व
कालनागिन है, इसलिए उसका रंग होगा काला। चिकना चकचक काल
मन हरने वाला काला रंग! इसीलिए एक नागिनी कन्या के होते ही दूस

नागिनी कन्या का आविर्भाव होता है। वह आविर्भाव सरदार सँपेरो की नजर में आ जाता है। कन्या अनाचार करती है, कन्या बूढ़ी होती है—जाने कितना कारण होता है। वैसे मे सरदार सँपेरे ना ही मन मां का सुमरन करते है। बरसात की अँधेरी रात मे, कृष्णापंचमी तिथि मे आसमान में घोर घटाएँ घिर आती हैं, चारो ओर थमथम करती रहती हैं—सरदार सँपेरा आसमान की ओर ताकता है। उस रात को वह उस रात से मिला लेता है, जिस रात उन सबका सर्वनाश हुआ था। हां जी, जिस रात लोहे के कोहबर मे कालनागिन ने लखीदर को डँसा था—उसी रात के साथ। बरसात आसन्न, पचमी मे नाग-माता की पूजा; मां दरबार करके इस बात की खोज करती हैं कि नए युग की दुनिया में चांद सौदागर जैसा अविश्वासी कौन है! कहाँ किस भक्तिमती बनिया-बेटी का जन्म हुआ! वैसी ही कृष्णापंचमी पाने से सरदार सँपेरा पूजा पर बैठेगा। कमरा बद करके पूजा पर बैठेगा। माँ-माँ करके माँ को पुकारेगा। परदीप जलाएगा, धूप जलाएगा—धूप के धुएँ मे कमरा धुंध हो जाएगा। तेज चाकू से छाती का चमडा चीरकर वहाँ से निकला लहू माँ को चढाएगा। उस वक्त मेघलोक मे मां विषहरी का आसन जरा डोल उठेगा—माँ के मुकुट का राज-गेहुँअन फन खोलकर हिसहिस कर उठेगा। माँ अपनी सहचरी से कहेगी—बहन नेता, देख तो जरा, आसन क्यो डोलता है? मुकुट क्यो हिलता है? नेता जोड-जाडकर बताएगी—सताली गाँव मे सरदार सँपेरा तुम्हारी पूजा कर रहा है, तुमको याद कर रहा है—उस बेचारे की मुसीबत है, नागिनी कन्या अविश्वासिनी हो गई है। या कि नेता यह कहेगी—नागिनी कन्या के बाल पर सफेदी चढ़ने लगी है, दाँत हिलने लगे हैं, अब नई कन्या चाहिए। इस पर माँ कहेगी, अच्छा, कोई डर नहीं। और वे नागिनी कन्या के नाग-माहात्म्य का हरण कर लेंगी तथा वह माहात्म्य नई नागिनी कन्या में डाल देंगी। कन्या के तन-मन मे वह माहात्म्य जाग उठेगा।

पिंगला ने कहा—उस बार शबला शहर में बोली, माँ विषहरी ठीक विचार करेंगी। कन्या पर माँ आयी।

सरदार सँपेरे महादेव को कुत्ते ने काटा। सबके सामने उसका सिर नीचा हुआ। वह बोल नहीं सका।

वला ने कहा—चल। भोर में ही नावें खोल दे। कुत्तों की खोज में बाबू को अगर यह शुबहा हो कि यह सँपेरों की कारस्तानी है, तो वैर नहीं। गंगा मैया के बहाव में नावों को छोड़ दे, डाँड़ थाम ले— दिन की राह एक दिन में तै कर।

महादेव नाव पर बुत बना बैठा रहा।

मन ही मन बोला—हाय माँ, आखिर दोष मेरा ही हुआ ? मैं हूँ सर-र सँपेरा, तेरे चरणों का दास। तेरे चरणों को छोड़ मैंने और कुछ नहीं जा, तीन संध्या तुझे सुमरन करना किसी दिन न भूला—दोष मेरा ठह-राया माँ जननी ?

रात के अंतिम पहर के अँधेरे में रानी भवानी का महल-मंदिर पीछे पड़ा रह गया, नावें वालूचर आज़िमगंज के सेठों के सोने के नगर को पार कर गई, उसके बाद नसीपुर में जगत-सेठ का मकान। उसको पार करने के बाद लाल बाग का नवाबमहल। उस पार खुशबाग। हीरा झील का जंगल। वही—वही शबला के प्यार के उस नौजवान ने राज-गेहुँअन को पकड़ा था।

पिंगला बोली—शबला ने जो भी कहा हो चाहे, वह उसके प्यार का ही आदमी था, कविराज जी। आशिक, मन का मीत। नागिनी कन्या हुई तो क्या, तन-मन तो उसका औरत का ही था ! स्त्रियाँ छुटपन में अपनी माँ को, अपने बाप को प्यार करती हैं। नागिन के बच्चे होते हैं, अंडे फूट हैं—पुराणों में लिखा है, प्रवाद है—नागिन अपने जितने बच्चों को साम पाती है, खा जाती है। बड़े साँप छोटे साँपों को खाते हैं। पता नहीं, आ देखा है या नहीं, हमने देखा है, खाते हैं। तो फिर नागिन अपने बच्चों खा जाएगी, इसमें क्या आश्चर्य है ! वही नागिन मानुष के पेट से ज लेती है, मानुष का धरम लेकर; उस धरम का वह पालन करती है। बाप को प्यार करती है, इसके बिना उसका काम नहीं चलता। उसके वह धीरे-धीरे बढ़ती है, देह में जवानी आती है, तब उसका प्राण प्यार के आदमी को चाहता है। नागिन के नारी-धरम का समय अ उसके बदन से कटहली चंपा की खुशबू आती है, वह खुशबू चारों अ

जाती है। उस सुगन्ध से नाग खिचा आता है। दोनों का मिलन होता है, लीला होती है, जीव-धरम की अभिलाषा मिटती है। अभिलाषा मिटाकर नाग-नागिन अपनी-अपनी ठौर चले जाते हैं। वहाँ प्यार तो नहीं होता है न ! लेकिन नागिनी कन्या जब मानुष रूप धारण करती है, मानुष का मन पाती है, तो देह की अभिलाषा मिटने से ही मन की प्यास नहीं जाती, मन प्यार चाहता है। वह प्यार किए बिना नहीं रह सकती। शबला ने उस जवान से वही प्यार किया था। उसे वह छू नहीं सकी, डर उसका तब भी नहीं टूटा था, *भय टूट गया होता, तो वह कुछ भी नहीं मानती, नदी किनारे* रात के अँधेरे में सनसनाती हुई जाकर उसके कलेजे मे लग जाती, गले से लिपट जाती, नागिन जैसे नाग को घूम-घूमकर लपेट लेती है, वैसे ही लिपट जाती अंग-अग से।

हीरा झील के पास पहुँचकर शबला फिर माँ के सामने पछाड खाकर गिर पडी—मैया, यह तूने क्या किया ! यदि तेरा ही शासन राज-गेहुँअन को ले आया था, तो उसने मेरी छाती मे दाँत क्यों नही जमाया ?

पिंगला नागिन-सी ही गरज उठी। बोली —बहन पिंगला, जीवन-भर अपने कलेजे की बात को जबान पर नही ला सकी, मेरी छाती जलकर खाक हो गई। दोष किसको दूँ ? किसी को नहीं दूँगी। अदरिष्ट को नही, नसीब को नही, विषहरी को नही—दोष उस बुड्ढे का है और दोष मेरा है। मैं जिन्दगी भर आप ही अपने को छलती रही। प्राण ने प्यार किया, मेरे अंग-अग ने प्यार किया, मेरे मन ने कहा, नहीं-नही-नहीं। वह बात नहीं कहनी चाहिए। पाप है, महापाप। पोंछ डाल, पोंछ डाल, विषहरी की बेटी, उस अभिलाषा को मन से कतई पोंछ डाल।

लम्बा निश्वास छोड़कर अपनी लाल आँखें फैलाए केश जैसे काले अँधेरे की तरफ ताकती रहती और यही कहती। शबला के अग-अग मे उस समय मानो काले रूप की बाढ उमडी हो। वह मानो बाढ मे उमडी कालिंदी के कालीदह-सी अथाह हो उठी। कदम तले कन्हैया नही है, फिर भी लहरों में मचल-मचलकर वहाँ पछाड़ें खा रही है। कन्या यदि वास्तव मे नागिन होती है, तो उसके बदन से चंपा की सुगंध उठती है। शबला के

ांग से उस समय चंपा की सुवास उठ रही थी।

के आश्रम से शिक्षा समाप्त करके शिवराम जब विदा हो रहे थे,
ला ने उनसे उसी समय ये बातें कही थीं। उस समय पिंगला के सर्वांग
जवानी फूट रही थी। शबला के गायब हो जाने के बाद जब वह पहली
र आयी थी, उस समय वह एक हरी कोमल लता-सी थी। जरा हवा चली
क डोली, जरा ताप पड़ा कि मुरझा गई, जरा जोर की बारिश हुई कि
उसके डंठल-पत्ते माटी पर कीच में सन गए! अब वह पूर्ण युवती थी, सबल
सतेज घनी लता। फन खोले नागिन जैसी अपनी कमनीय कोरों को मानो
शून्यलोक की ओर पसारे हुए हो। झड़ी-पानी अब उसे धूल में नहीं लुटा
पाती, बैशाख की दोपहरी में उसके पत्ते अब मुरझाते नहीं। वह शांत, कम
बोलने वाली किशोरी अब मुखरा युवती थी। अब वह लजीली नहीं, हनक
वाली थी।

शबला ने शिवराम का नाम रखा था—छोटे धन्वंतरि। बर्बर और
उल्लास वाली सँपेरिन उन्हें उसी नाम से पुकारती थीं। वे सब उनको
मानो प्रीत की निगाहों ही देखती थी। शबला को जान-चीन्ह कर, उसके
मन का परिचय पाकर शिवराम भी उन सबको स्नेह की नजर से देख
थे। लेकिन किशोरी पिंगला से अभी तक परिचय गाढ़ा नहीं हो पाया था

अब की गुरु ने इसका सुअवसर कर दिया। बोले—शिष्य शिवराम अ
स्वतंत्र रूप से कविराजी करेंगे। तुम सब इन्हें यजमान बना लो।

सरदार सँपेरे और नागिनी कन्या ने नये यजमान का वरण कि
हाथ जोड़कर प्रणाम करके बोले—हम तुम्हें कभी नहीं ठगेंगे। शोधने से
गरल अमरित बनता है, हम तुम्हें उस गरल के सिवा दूसरा नहीं
माँ विषहरी की कसम! हे यजमान, तुम जो वाजिब दाम दोगे, वे
नकली न हों।

उसी दिन शाम को पिंगला अकेली आयी। कहा—तुम्हारे पा
हूँ, छोटे धन्वंतरि। एक बात कहने के लिए चार साल से वचन में बँ
मगर कह नहीं पायी। आज कहने आयी हूँ। माँ का नाम लेकर
दीदी से शपथ की थी।

शिवराम उसकी ओर ताकने लगे। यह औरत और ही एक जात की है। शवला उमड़ती-सी थी, वह थी जैसे मेघ भरा आकाश—रह-रहकर बिजली कौंधती होती, दमकती रहती थी वज्र की दाह ; और फिर तुरत ही बारिश और चंचल बयार के चपल कौतुक से लोट-पोट हो जाती। और यह युवती जैसे वैशाख की दोपहर हो। हर पल जलती हो जैसे।

सारी बातें बताकर वह बोली—शवला दीदी ने मुझसे छिपाया नही। उसके बदन में चंपा की महक महकी, पाप उसका हुआ। मन की वासना को नागिनी कन्या अगर अपने जहर से जला नही सकी, तो वह वासना मन के विरिछ में चंपा फूल जैसा फूलकर खुशबू लुटाती है। वैसे में कन्या को पाप लगता है। माँ विषहरी उसके नाग-महातम को हरण कर लेती हैं। वह महातम दूसरी कन्या को दे देती हैं। शवला के महातम को छीनकर माँ ने मुझको दिया। उससे शवला नाराज नही हुई। मुझ पर उसे आक्रोश नही हुआ।

शिवराम के मुह की ओर ताककर उनके मन के प्रश्न का अनुमान करके ही बोली—नही समझे ? अजी, नागिनी कन्या के दुर्भाग्य से उसका सौभाग्य कहीं ज्यादा होता है। वह साच्छात देवी होती है। सरदार सँपेरे से तो कुछ कम नही होता ! इसी से जब नई नागिनी कन्या प्रकट होती है, तो पुरानी बिगड़ उठती है। वह उसे मार डालना चाहती है। लेकिन शवला ने वैसा नही किया, उसने मुझे बहन जैसा प्यार किया था। कहा था, दोष मेरा और इस सरदार सँपेरे का है, तेरा कोई दोष नही। वह मुझे सब कुछ सिखा गई—नागिनी कन्या का सब महातम, सारी विद्या बता गई। उसने मुझे अपने मन की सभी बात बताई। बताया सिर्फ यह नही कि वह महादेव का धरम और जीवन लेकर अथाह में कूद पड़ेगी।

—अब धरम बचाने के लिए सँपेरे कहते हैं कि शवला का दिमाग खराब हो गया था। बिलकुल झूठ है। मैंने अब सब समझा। मेरे बारे में सरदार सँपेरा गंगाराम अब क्या कहता है, मालूम है ? कहता है, तेरा दिमाग भी शवला की तरह बिगड़ेगा, लगता है।

पिंगला ने गंगाराम के मुह पर ही कह दिया—मेरा दिमाग नही बिगड़ेगा, यह मैं तुझसे कहे देती हूँ, तू सुन ले। पिंगला शवला नही है।

शबला मुझसे कह गई है—बहन पिंगला, 'नागिनी कन्या के नसीब में सदा से यही होता आया है, मैं तुझसे खोलकर सब कुछ कहे जाती हूँ—तू जिसमें पड़ी-पड़ी मार मत खाना, सरदार सँपेरे से मत डरना। मैं तुझे नहीं डरूँगी।

नई नागिनी कन्या पिंगला और सरदार सँपेरा गंगाराम में सदा की अनबन गहरी हो गई, जो शबला और महादेव में हुई थी, वही। महादेव को मरे सात साल से ज्यादा हो गया। पिंगला जब नागिनी कन्या हुई, तब उसकी उमर पन्द्रह पार कर चुकी थी, पूरे सोलह की नहीं हुई थी। अब वह पूर्ण युवती है। काली पिंगला की आँखें पिंगल हैं। उन आँखों की दृष्टि अजीब स्थिर है। लोगों की ओर वह अपलक ताकती रहती है, पलक नहीं मारती। लगता है, एक बारगी भीतर के भीतर जो अँगुली बराबर आत्मा रहती है, वही मानो उन दो आँखों का दरवाजा खोलकर बाहर खड़ी है। उसके तो कोई डर नहीं, भय भी नहीं। और फिर पिंगला की वे आँखें अँधेरे में वन-बिलाव की आँखों-सी जलती है। जिस अंधकार में लोगों की नजर काम नहीं करती, पिंगला की आँखें उस अंधकार में भी देखती हैं। उसकी आँखों की तरफ ताकने से सबको डर लगता है। गंगाराम जैसे आदमी को भी डर लगता है। पिंगला जब वैसी थिर आँखों ताकती है, तो गंगाराम दो डग पीछे हट जाता है। पिंगला को उससे कौतुक नहीं होता, उसके होंठ टेढ़े हो आते हैं, उस टेढ़ेपन की एक तरफ से आक्रोश झड़ता है, दूसरी तरफ से घृणा टपकती है।

गंगाराम भी भयंकर है।

महादेव जैसा भयंकर नहीं, वह भीषण है। वह पत्थर के पुराने मंदिर-सा कठिन नहीं, पर कुटिल है। संताली के सारे सँपेरे उससे डरते हैं, जैसे डोमन-करैत से। महादेव शंखचूड़ था, वह पीछा करके काटते-काटते क्षत-विक्षत कर देता था, आदमी की तुरत जान निकल जाती। उससे हार मान-कर देह का कपड़ा-लत्ता उतारकर कतरा जाने से उन कपड़ों पर ही वह अपना गुस्सा उतार लेता। मगर इस डोमन-करैत से निस्तार नहीं। वह अँधेरी रात में अपनी नीली देह को मिलाए चुपचाप छिपकर तुम्हारा पीछा करता रहेगा। दिन के प्रकाश में अगर पीछा न कर पाए, तो वह कुढ़न को पालता

हुआ प्रतीक्षा करेगा। खोज-खोज कर ठीक ही पहुँचेगा। डँसेगा। उस डँसने से खैर नही। ब्राह्मण लोग कहा करते हैं, *काटे डोमना तो बुला ले बम्हना।* यानी जब डोमन-करैत ने काटा है, तो ओझा-गुणी को मत बुलाओ, नाहक ही इलाज कराना, मरघट मे लाश ले जाने के लिए ब्राह्मण को बुलाओ। दाह-सस्कार का इतजाम करो।

गंगाराम बाहर से देखने मे डोमन-करैत जैसा ही धीर और निरीह लगता है। शरीर में ताकत उसे बहुतों से कम है, लेकिन वह कामरूप की विद्या जानता है, जादू जानता है। तीस साल पहले वह इसी शहर से ही महादेव से झगडकर गायब हो गया था। दोष महादेव का नही, उसी का था। जवान होते ही उसकी मति-गति बेहद बुरी हो उठी थी। शहर में वह अकेले ही घूमा करता। पीकर रास्ते के लोगों से झगडा करता। गले मे एक गेहुँअन लपेटकर रास्तो पर चक्कर काटा करता। उस गेहुँ-अन को उसने खूब वश मे किया था। उसके गले मे वह माला जैसा ही झूलता रहता। कभी कधे पर, कभी कान के पास, कभी छाती पर मुह ले जाकर थोडा-थोडा सरकता रहता। लेकिन एक दिन भीड मे एक दुर्घटना हो गई। यो लोग उससे डरते। कोई उस पर कभी हाथ उठाने का साहस नही करता। उस दिन भीड मे एक आदमी ने हठात् अपने सामने सांप लिए गंगाराम को जो देखा; सो वह मारे डर के चीख उठा। गगाराम को उसने ठेल देना चाहा। सांप ने भी डरकर उसे काट लिया। बीच छाती से थोडा-सा मास खीच लिया। यह होना था कि एक काड हो गया। जितनी दुर्गत गंगाराम को हुई, उतनी ही सँपेरो की। पुलिस आयी। सँपेरों की नावें उसने रोक दी। महादेव को थाने ले गई।

गगाराम ने बहुत कहा—विपहरी की कसम खाकर कहता हूँ हुजूर, कुछ नही होगा, इसके बिख नही है। उसके दाँत, बिख की थैली—सब काट-कर फेंक दिया है। इस आदमी को अगर कुछ हो तो मुझे फाँसी दे दीजिएगा, फाँसी।

उसने गेहुँअन के मुंह को अपने मुह मे लेकर चकचक करके चूसकर दिखाया कि जहर नही है। मुह से बाहर निकालने के बाद सांप ने गगाराम को भी कई बार काटा।

महादेव ने भी कसम खाकर गंगाराम की बात की ताईद की। फिर भी उस फजीहत से पिंड नहीं छूटा। प्रायः चौवीस घंटा उन्हें रोक रखा गया। चौवीस घंटे में भी जव उस आदमी पर जहर का कोई असर नहीं हुआ, जव डाक्टरों ने कहा कि अव कोई खतरा नहीं रहा, तव कहीं उन्हें छुटकारा मिला। इसी वात पर महादेव से उसका विवाद हुआ। अकेले महादेव से ही क्यों, गंगाराम की सभी सँपेरों से झड़प हुई। महादेव ने उसे वेतरह पीटा। और दो दिन में कुछ सम्हल कर गंगाराम दल छोड़कर भाग गया।

महादेव ने कहा—जाने दो, पाप गया। कल्याण हो गया। जाने दो।

गंगाराम के जाने से कल्याण होगा, इसमें किसी को संदेह नहीं था, पर महादेव के वाद सरदार कौन होगा ?

महादेव ने कहा—मैं पोसपूत[1] लूँगा।

तेरह-चौदह साल के वाद अचानक एक दिन गंगाराम आ पहुँचा। उसने वताया—कामरु-कमच्छा से जाने कितनी जगह घूमा, चारेक साल जेहल में भी रहा। उसके वाद आया हूँ। सोचा, जरा संताली की खोज-खवर ले आऊँ।

सँपेरों को उसने जादू के करिश्मे दिखाए।

कैसे-कैसे करिश्मे ! अजीव-अजीव खेल ! जीभ काटकर जोड़ दी। काठ की चिड़िया हुकुम की गुलाम—पानी में डूवने-उठने लगी। पत्थरों से चिड़िया निकल आयी; उस चिड़िया को ढँक दिया, वह उड़ गई। हवा में खुले पंजे की मुट्ठी वाँधी, मुट्ठी से रुपया निकला। और भी जाने क्या-क्या !

सँपेरे सम्मोहित हो गए। शाम को वह कितने देश-देशांतर की गप्पें सुनाता। इसके कुछ ही दिनों के वाद महादेव और शवला के विवाद का फैसला होगया। महादेव के कलेजे में विष-वुझी कील भोंककर शवला गंगा के प्रवाह में वह गई। गंगाराम सरदार वना।

पिंगला ने कहा—पापी था, महापापी था वह।

---

१. दत्तक पुत्र।

तुरत ही फिर हँसकर बोली—उसका भी दोष क्या ? यह पुरुषों की जाति ही ऐसी है। भोला महेश्वर की बेटी हुई विषहरी। भँगडी भोला चंडी को मर्त्यधाम में भुला आए। विषहरी को देखकर काम की पीड़ा से वे बेशरम बन गए। कहा, कन्या, मेरी वासना पूरी करो। माँ विषहरी ने गुस्से के मारे विष की दृष्टि से पिता की ओर ताका। शिव ढुलक पड़े। दोष केवल नागिनी कन्या का ही नहीं। शबला का दोष क्या था कि उसने सरदार सँपेरे का धरम लिया, कलेजे में कील भोककर भाग गई। लेकिन दोष सरदार सँपेरे का भी है। इसी गगाराम सरदार सँपेरे को देखो न।

नशे से आँखें लाल-लाल किए गगाराम मताली बस्ती के घर-घर घूमता फिरता है। सँपेरिनों से हँसी-मजाक करता है। किन्तु कोई भी कुछ कहने का साहस नहीं करता। वह डाकिनी-विद्या जानता है। मंतर चला-कर वह आदमी को लँगडा बना देता है। इतना ही नहीं, गगाराम जान भी ले सकता है। डाकिनी-सिद्ध गगाराम के न तो धरम है, न अधरम। वह कुछ भी नहीं मानता।

गगाराम डरता सिर्फ पिंगला से है।

पिंगला भी डरती है, पर बीच-बीच में वह मानो बिगड उठती है।

फागुन का अंत था। फागुन में भी गंगातट के घासवन के भीतर माटी में वर्षा के पानी के गीलेपन की ठंडक थी। पक्की घास सूख जाती है, कसालों को सँपेरे पहले ही काट चुके होते हैं। ऐसे ही समय एक दिन घासवन में धुआँ उठने लगता है। सूखी घास में सँपेरे आग लगा देते हैं। इसलिए कि सूखी घास जल जाएगी, नीचे की माटी को आग की आँच मिलेगी, फिर सूरज का ताप लगेगा, मताली की मिट्टी नया कलेवर लेगी। चैत के बाद बैसाख में उठेगी आँधी, झड़ी-पानी, माटी भीजेगी और कटी हुई घास की मूठ से यानी जली घास का जो मूल रह गया है, उससे फिर हरी घास निकलना शुरू करेगी। बरसात आते-आते घना जंगल हो उठेगा। गंगा के पानी को रोकेगा। मताली गाँव के घरों की छाजन के लिए कमाल का जुगाड़ होगा।

धूम तक बाहर का सफर खत्म करके सर्दी से जर्जर नाग-नागिनों को छोड़कर सँपेरे घर लौटते हैं। नाग-नागिनें माँ विषहरी की बेटे-बेटियाँ

हैं। सँपेरों के पिटारे में वे मर जायँ तो उन्हें पाप लगेगा। माघ से फागुन-चैत तक सँपेरों के पिटारे में साँप नहीं होते। बहुत ही तेज नाग, सर्दी जिन्हें बेबस नहीं कर सकती, वही दो-एक रह जाते हैं। फागुन के अंत में बैहार की घास जला देने से उसकी आँच से, धूप के ताप से माटी सूख जाती है, तो माटी के नीचे ताप के स्पर्श से नाग सर्दियों की नींद से जाग जाते हैं। क्वार के अंत से कातिक के अंत तक नाग रात को खुले खेतों में निढाल होकर पड़े रहते हैं। सँपेरे कहते हैं, शरीर में ओस लेते हैं। वही ओस अंग में लेकर वे माटी के नीचे घोर नींद में सो जाते हैं। लोग कहते हैं, साँप 'मूँद' लेते हैं। सो मूँद कहिए या कालनिद्रा, यह टूटती है फागुन-चैत में। जहाँ सँपेरे नहीं होते, वहाँ उनकी नींद काल तोड़ता है। जहाँ सँपेरे हैं, वहाँ उनकी वह नींद तोड़ने की जिम्मेदारी उन्हीं की होती है। नींद तुड़ाने के बाद नये नाग पकड़ लाने की बारी।

आग लगाने की इस घड़ी की सूचना हिजल बिल की चिड़ियाँ देती हैं। साँपों के सो जाने का समय होते ही जाने कहाँ से आसमान को छापकर कल-कल करती हुई चिड़ियों का झुंड हिजल बिल में जा पहुँचता है। सबसे आगे गगनभेरी चिड़िया। आसमान में मानो नगाड़े बज रहे हों।

गरुड़ के वंशधर। नागों की जननी और गरुड़ की जननी—दोनों सौत। सौतेले भाइयों में उस आदिकाल से ही शत्रुता चली आ रही है। सृष्टि के अंत तक यह चलती रहेगी। सो यह फैसला देवताओं का किया फैसला है। सर्दियों के कई महीने दुनिया पर गरुड़ के वंश का अधिकार होता है। आसमान को ढँककर भेरी बजाते हुए वे नदी-नाले-पोखरों में छा जाती हैं, धान भरे खेतों में धान चुगती हैं। उसके बाद फागुन बीतेगा। चैत की शुरुआत में गर्मी की शीतलता लिए दक्खिनी बयार आएगी, खेतों की फसल खत्म होगी—और वे उड़ जाएँगी। आगे-आगे नगाड़े बजाती जाएँगी गगनभेरी चिड़ियों की टोली! उसके बाद फिर आ जायगा साँपों का समय।

जिस दिन गगनभेरी चिड़ियाँ उड़कर फिर नहीं लौटेंगी, उसके तीन दिन बाद घासवन में आग लगाई जायगी।

सताली के चौर पर घासवन मे आग लगाई गई है। धुएँ की कुंडली ऊपर आसमान को उठ रही है। घास की डंठलें आँच से फटाफट फूट रही हैं। आसमान मे कौवे-पतिंगे मँडरा रहे हैं। कीडे-मकोडे उड़कर भाग रहे हैं। लंबी टांगों वाला हरा पतिगा झुड का झुड उछल रहा है। आग दक्खिन से उत्तर को बढ़ रही है। दक्खिनी हवा बहने लगी है। सो तो बहेगी ही। गगनभेरी चिड़ियाँ गरुड के वश की हैं, वे दक्खिन से उत्तर को चली जा रही हैं—उनके डैनों की फड़फड़ाहट से पवनदेव को भी अपना मुह दक्खिन से उत्तर को घुमाना पड़ा है।

बिल के घाट पर पिंगला खड़ी थी। उसका मन-मिजाज ठीक नही था। दुनिया जैसे जहर हो गई है। सताली, विषहरी, विश्व-ब्रह्माड—सब मानो विष हो गया है। वह चूँकि नागिनी कन्या है, इसीलिए शायद इतना विष बरदाश्त होता है, और कोई होती तो पत्थर पर सिर पटककर मरती, फाँसी लगाती या कपड़ों मे आग लगा लेती।

बिल के दक्षिण अभी-अभी जगी माटी पर खेतिहर हल जोत रहे थे। बोरो धान लगाएँगे। तिल के पौधों पर बैंगनी रंग के फूल छा गए थे। सेमल के पेडों पर लाल-लाल फूल। उधर आ पहुँचे थे वे ग्वाले। इनकी तरफ चरी का अकाल हो गया है। गर्मी के दिन आ रहे हैं। वे अपनी गाय-भैंसों को लेकर हिजल आ गए हैं। यहां घास की कमी नही। इसके सिवा हजारों की तादाद मे बबूल के पेड हैं। बबूल के फूल और पत्ते खिलाएँगे।

कुछ ही दिनों के बाद दुस्साहसी मछेरों की एक टोली आएगी। बिल मे मछली मारेंगे वे। बरसात का फैला हुआ हिजल बिल अब टुकड़ों मे बँट गया है। और भी बँटेगा अभी। फिर मछली मारने की धुन होगी। पद्मा के मूल भाग यानी माँ मनसा के आसन को छोड़कर, बाकी सभी बिलों मे वे मछली मारेंगे।

एकाएक एक जंगली जानवर की गरज से पिंगला चौंक उठी। उधर सँपेरे शोर कर उठे—गुलबग्घा, गुलबग्घा !

जाने कहाँ छिपा था, आग की लपट, गाछ-पत्तों के जलने की बू से वह निकल पड़ा। काले धब्बे वाला वह पीले रंग का जानवर दौड़ने लगा। शायद किसी को घायल किया। लेकिन आज कमबख्त मरेगा। जायगा

? पूरब में गंगा, उत्तर में हैं सँपेरे—वे पीछे-पीछे दौड़े आ रहे हैं।
न में भैंसें लिये भैंसवारों का दल है। वहाँ भैंसों के सींग और ग्वालों
लाठियाँ हैं। पश्चिम में हिजल का पानी है। भागने का कोई रास्ता
ों है। वह कमबख्त आज मारा जायगा।

इस उत्तेजना से पिंगला के मन की उदासी कट गई। वह घाट पर से
ी सिर उठाकर देखने लगी। अरे! गुलबाघा गया कहाँ? घासवन की
आड़ से गंगा में उतर पड़ा क्या? पंजे के ऊपर भार देकर उसने सिर ऊँचा
किया। दौड़े आ रहे हैं सँपेरे—वह! शोर-गुल कर रहे हैं। उमंग से फटे
पड़ रहे हैं। पिंगला को भी दौड़ पड़ने की इच्छा हुई। लेकिन उपाय नहीं
था। उसे हिजल बिल के इसी विषहरी घाट में रहना है। उधर जंगल में
आग लगाई गई है। नागिनी कन्या आकर विषहरी घाट में बैठी है। उसे
माँ का ध्यान करना होगा। माँ को जगाना होगा। कहना होगा—माँ,
नागों के शत्रु गरुड़ के वंशधर गगनभेरी पक्षी नगाड़े बजाते हुए उत्तर को
चले गये। अब नागों के अधिकार का समय आया। उत्तर में दक्खिनमुखी
हवा दक्खिन से उत्तरमुखी हो गई। नागचंपा के पेड़ों में कलियाँ ल
गई। अब तुम आँखें खोलो, जननी, जागो।

उधर जंगल जलाना खत्म करके सँपेरे आएँगे। सबके आगे सर
सँपेरा होगा। आकर वह घाट पर हाथ जोड़कर खड़ा होगा। कहेगा
कन्या, ओ कन्या!

कन्या घुटने टेककर हाथ जोड़े ध्यान में बैठी रहेगी। जवा
देगी। सरदार सँपेरा फिर पुकारेगा। एक, दो, तीन बार। उस
कन्या बोलेगी—

—हाँ जी!

—माँ जगी? जननी की नींद टूटी?

—हाँ, जननी जाग गई।

सुनकर नगाड़े बज उठेंगे। सँपेरे जय-जयकार करने ल
होगी। बत्तख की, वन-कबूतर की बलि चढ़ेगी। उसके बाद
लौटेंगे। लौटने से पहले नौर में, बिल के किनारे खोज-ढूँढ़कर
एक नाग भी पकड़ना होगा।

इसीलिए पिंगला घाट पर अकेली आयी है। लेकिन जब से आयी है, उसने कोई ध्यान-पूजा नहीं की। चुपचाप खड़ी थी। इच्छा नहीं हुई, जी भी अच्छा नहीं था। नींद-सी आ रही थी। एकाएक इस उत्तेजना में वह चंचल हो उठी। लेकिन कोई उपाय नहीं था। वह जा नहीं सकती। वह खड़ी-खड़ी उत्सुकता से देखने लगी। बग्घा मरेगा। हाय रे बग्घा, तू अगर सरदार सँपेरा गंगाराम को जख्मी बनाकर मरे, तो पिंगला तुझे जी भरकर आशीर्वाद देगी। तेरे मरने से वह जार-बेजार रोएगी। तेरे नाखून को पीतल में मढ़वाकर गले में पहनेगी। तेरे पंजरे की छोटी-सी हड्डी लेकर वह रख छोड़ेगी जतन से, वह सौभाग्य की निशानी होगी।

सँपेरों की टोली ठिठक गई, लो। बग्घा किधर गया, पता नहीं चल रहा। दूसरे ही क्षण उसके सारे शरीर में बिजली की लहर-सी खेल गई। सामने ही, कोई पन्द्रह हाथ की दूरी पर घास के जंगल को ठेलकर गोल पीली हंडी-सा एक मुंह निकल आया। उस मुंह पर दो पलकहीन गोल आँखें। लंबी दो काली रेखाओं जैसी पुतलियाँ मानो दमक उठती हों। नजर मिलते ही वह दाँत निकालकर 'फँस' कर उठा। दुबककर देह को भरसक सिकोड़े वह छिपकर इधर चला आया।

सताली गाँव के जंगल की पगडंडियों पर जो कन्या घूमा करती है, जिसके बदन की गंध से घासवन में मुंह छिपाए कुंडली मार लेते हैं विषधर साँप, पिंगला वही कन्या है। जो कन्या दो-चार बार बाघ में लुका-छिपी खेलकर बेखटके गाँव लौट आयी है, वही कन्या है पिंगला। मगरखाली के नाले में हर साल जिन सँपेरों की दो-एक बेटियाँ मगर के मुंह में जाती हैं, उन्हीं सँपेरों की कन्या है पिंगला। पिंगला की फुआ के एक पाँव नहीं है। उसे मगर ने धर दबाया था। पिंगला की फुआ गाछ की डाल को पकड़े चिल्लाने लगी थी। सँपेरे दौड़े आए—भाले से, बाँस से मारकर मगर को भगाया। मगर को छोड़ तो देना पड़ा, पर एक पाँव के निचले हिस्से को नहीं रहने दिया। लँगड़ी हो गई। फुआ अभी भी जिंदा है। पिंगला के सारे शरीर में बिजली की लहर दौड़ गयी, पर वह बेबस नहीं हुई।

—ऐ रे बग्घा! चतुर, शठ! अरे ऐ गंगाराम!

एक, दो, तीन, चार डग पीछे हटकर वह अचानक खड़ी-

जल में कूद पड़ी। जय विषहरी !

ट में कुछ ही दूर पर डोरी से बँधा ताड़ का डोंगा था। तैरकर वह र चढ़ गई। बग्घा तनकर खड़ा हो गया। दुम पटकने लगा। एक-गला की ओर ताकने लगा।

पिंगला के दाँत झलक पड़े। इशारे से उसने बग्घे को बुलाया—आ, जा। तैरना तो जानता है। आ जा न !

बग्घा घासवन से बाहर निकल आया। घाट पर जाकर खड़ा हो या। हलचल दूर हटती जा रही थी, चालाक बग्घे ने यह समझा और किंचन आश्रय तथा आहार की आशा में वह घाट पर आ खड़ा हुआ। अरे ओ मुँहजले, तुझे विषहरी मैया का दामाद बनने का शौक चर्राया है क्या ? कन्या को मुँह में उठाकर ले जायगा, जंगल के भीतर अपनी गिरस्ती बनाएगा क्या? बाघिनी के दल में नागिनी कन्या ! आ न मितवा, आ। तेरे गले में माला डालूँगी, गले से लगाकर तुझे चूमूँगी, आ न। बिल के नीचे विषहरी मैया की नागमहला पुरी है, मेरा मैका है, आ न, अपनी ससुराल जाना। आ।

ये बातें वह बाघ को सुना-सुनाकर ही कह रही थी। साफ बोल रही थी। बाघ दाँत निकालकर 'फँस-फँस' कर रहा था। अचानक ही वह मुँ उठाकर गरज उठा—आँ···ऊ। पूँछ को धरती पर पटका।

सनकी पिंगला खिलखिलाकर हँस पड़ी।

उधर घासवन को जलाती हुई आग बाघ के पीछे की ओर ब चली आ रही थी। बाघ ऐसे निहत्थे और निरीह शिकार का सुअ किसी भी तरह छोड़ना नहीं चाह रहा था, नहीं तो वह भाग जाता। भागता दक्खिन की ओर, जिधर हलवाहे हल जोत रहे थे, ग्वाले गाय को लिये बैठे थे। भैंसों की सींग, ग्वालों की लाठी और दाव मरता।

रसीले कौतुक से पिंगला खिल पड़ी। डोंगे पर बैठी वह गा ठीक जैसे बाघ से प्रेमालाप कर रही हो—

मितवा, योगिया बने आये
आखिर, हाय !
मरण मेरे, हाय रे मरण
लोर बहा धुला दूँ चरण
काले केशो पोछूँ दोनो पायँ।
चाँचर वालो जटा बाँधी है
नही नयन मे काजल,
नही होठ पर छटा हँसी की
चुए आँख मे बादल—

उत्तेजना से गीत का स्वर ऊँचा हो उठा। हवा ने जोर पकडा। आग तेजी से बढ़नी आने लगी। हवा की कुण्डली अब इधर को आने लगी। हवा का रुख बदला। आग से हवा का बड़ा मेल है। यह आयी—तो वह दौड़ी आएँगी। बाघ पड़ा फंदे में। 'हाय मोरे मितवा, हाय ! पड गए फंदे मे !' गाना बन्द करके वह फिर खिलखिलाकर हँस पडी।

मितवा ने अब समझा।

गुस्से से आग बना अधान घोप आ रहा है ! सम्भालो अब धक्का ! बग्घा अब पलटा। आग देखकर चौंका और तेजी से दक्खिन की ओर चलने लगा। उधर के सिवा कोई रास्ता नही। मगर उसी रास्ते में तुम्हारा काँटा है मितवा मोरे। हाय !

पिंगला जोर-जोर से ही बोल रही थी। उसे उमग-सी सवार थी। हाथ से पानी काटते हुए वह भी डोंगे को दक्खिन की ओर ही ले जा रही थी। लेकिन हुआ क्या अचानक ? बाघ जोरों से गरजा और ठिठक गया। दो डग पीछे हट आया। बाघ की उस गरज से पिंगला का हाथ रुक गया, बोलती बन्द हो गई। बाघ की हुकार ने मारे चौर को चकित कर दिया।

अरे, हाय-हाय !—उल्लास और उत्तेजना से पिंगला के सारे शरीर में कँपकँपी दौड़ गई। वह चीख उठी—आ !

बग्घा के सामने फन खोले एक पद्मनाग खड़ा हो गया था।

हाय-हाय रे ! आ—!

ाग की आँच पाकर पद्मनाग निकला। वह भी भाग रहा था, यह
ग रहा था। दोनों आमने-सामने आ निकले। नाग-बाघ में ठन

—हाय, हाय !

पिंगला डोंगे को लेकर किनारे की ओर बढ़ी। अच्छी तरह से देखना
ओह, कितना मजेदार तमाशा ! सीधा तना सिर उठाए झूम रहा है पद्म
ग। दृष्टि स्थिर। मटर-जैसी दो काली आँखें। उनमें कोई भाव नहीं।
ंतु विषबुझी तीर जैसी तीखी और सीधी। बघा जिधर घूमता, फन के
ाथ वे आँखें उधर ही घूमती। आह ! पद्म जैसे चक्र की बहार कैसी !
चीरी हुई लिकलिक जीभ आग की लौ-सी लगातार निकल रही
है। बाघ भी खूंखार हो उठा। आँखें दहक उठीं। लंबी काली तीली-सी
दोनों पुतलियाँ चौड़ी हो गईं। मूंछें तनकर सीधी हो गईं। खूंखार दाँतों
की कतारें निकालकर वह गरजने लगा, बदन के रोएँ फूल-फूल उठने लगे
मानो. पूंछ रह-रह माटी पर पछाड़ खाने लगी। लेकिन हिलने की गुंजा-
इश न थी। हिला कि पद्मनाग ने जमाया दाँत। नाग भी नहीं हिल रहा
था. वह हिला कि बाघ माथे पर मारेगा पंजा। बाघ रह-रहकर आगे
. बढ़ने की कोशिश कर रहा था. फिर डर से पीछे हट आता। नाग माटी प
फन से वार कर रहा था. बाघ उसी मौके से वार करना चाहता, पर दाँ
नहीं लग रहा था। बाघ जैसे ही झपटना चाहता कि नाग बिजली की ग
से उठ खड़ा होता। वैसे में बाघ कूद पड़े तो खैर नहीं। नाग उसके
में ही जबड़ा बैठा देगा। बाघ यह समझ रहा था। इसीलिए हमला न क
नाकाम गुस्से से मुंह उठाकर गरज-गरज उठता था।

पिंगला डोंगे पर खड़ी हो गई।

—आ ! आ !

चार तरफ में से एक तरफ गंगा. एक तरफ बिल। बाकी दो
दौड़े आए सँपेरे, ग्वाले, हलवाहे। बिल की तरफ डोंगे पर थी
कन्या पिंगला।

गंगाराम बाघ के ठीक उस तरफ खड़ा हो गया। उनकी भौ
रही थीं। उनके हाथ का बरछा हिल रहा था। बाघ को मारेगा

—नहीं !—पिंगला चिल्ला उठी।

गंगाराम ठिठक गया। पिंगला की ओर ताकने लगा। बोला—बाघ के हाथों नाग मारा जाएगा।

—कौन किससे मारा जाता है, देखो तो सही।

—फिर ? अगर नाग मरे…

—तो बाघ को मत छोड़ना !

—नहीं। हम माँ विषहरी के दास हैं। कहते-कहते हाथ का बरछा हिल उठा। पिंगला पल में पानी में कूद पड़ी। बरछा 'सों' करके डोंगे के ऊपर से होता हुआ पानी में जा गिरा। पिंगला को समझने में भूल नहीं हुई थी। भला बाघा को बींधना है तो गंगाराम की नजर पिंगला की नजर पर क्यों है ? दूसरे ही पल दूसरा एक बरछा बाघ को जा लगा। बाघ गरज-कर उछल पड़ा। उछलकर वह माटी पर गिरा कि नाग ने बाघ को काट लिया। घायल बाघ के पंजा उठाते-उठाते वह दौड़कर पानी में जा रहा। मुह डुबाकर अपने निश्वास से पिचकारी-सा छोड़ते हुए साँप तीर की तरह पानी में सीधा भागा। मगर पानी में नागिनी कन्या खड़ी थी। छाती भर पानी में खड़ी वह गौर कर रही थी। वह डोंगे पर चढ़ गई। गप् से नाग का मुंह पकड़ लिया। दूसरे हाथ से पंछ पकड़ ली। नाग बंदी हो गया।

सँपेरों ने जय-जयकार की।

गंगाराम घाट पर आ खड़ा हुआ। डोंगा जैसे ही घाट पर आ लगा, वह बोला—घाट पर ध्यान न करके तू डोंगे पर बैठी रही ? खोट की ?

पिंगला हँसकर बोली—यह नागिन है रे बाबा ! बाघ नागिन के हाथों मारा गया।

गंगाराम चीख उठा—खोट क्यों की ? घाट पर ध्यान न करके तू ने यह क्या किया ?

पिंगला थिर आँखों उसे देखने लगी। यह दृष्टि उसकी अजीब है। लगता है, आग में जलता हुआ प्राण ही मानो आँखों से बाहर निकला आ रहा है।

इतने में मादो ने आगे बढ़कर कहा—तू यह क्या कह रहा?

जवड़े में जान नहीं जाती ?

नगला ने हँसकर कहा—वही अच्छा होता भादो मामा, नागिन के
ते वाघ बच जाता।

इसके बाद बोली—अच्छा ले, अब बजा नगाड़ा। माँ तो जग गई।
का जलता हुआ सबूत तो मेरे हाथ में ही है, यह पद्मनागिन। अरे
, बरछा पानी में गिर गया है, उठा ला तो। दे, सरदार को लौटा दे।
:, सरदार सँपेरा होकर बरछा छोड़ता कैसे है तू ? छि-छि-छि ! यों काठ
मारा-मा खडा क्यों है ? ले, पूजा की जुगत कर। बाघ का चमड़ा छुड़ा
लगा, तो ले। अब खड़ा मत रह। दोपहर बेला बीत चुकी। तीन पहर होने
को है। माँ जागी है, उसे भूख नही लगती ! बजा भैया, बजा।

नगाड़े बज उठे।

गंगाराम चाहे जो कहे, सँपेरे सब बहुत खुश हैं। अबकी शिकार काफी
हुआ है। खरगोश, माहिल, तीतर बहुत मिले। तिस पर बत्तख की बलि
चढ़ेगी। हिजल बिल के किनारे बस्ती है, वहाँ माँस दुर्लभ नहीं है। फंदा
लगाते ही बन-बतखे, वन-मुर्गाबियाँ मिल जाती हैं; लंबी टाँगों वाली
चिड़ियाँ बिल के किनारे घूमती ही रहती हैं। गुलेल से उनको भी सहज ही
मारा जा सकता है। लेकिन आज के खाने से उस खाने की तुलना नहीं हो
सकती। आज के दिन के लिए दो-तीन महीने से वे तैयारियाँ कर रहे
संग्रह कर रहे हैं। कातिक के महीने में हिजल बिल के पश्चिम की वह
रबी की फसल से हरी हो उठती है। गेहूँ, जौ, चना, मसूर, आलू, प्या
लहसुन, तरह-तरह की फसल। पकने पर सँपेरे यह सब चुन-बीनकर,
करके सँजोते हैं। प्याज, लहसुन, मसूर को वे सब आज ही के दिन के
जतन से रख छोड़ते हैं। प्याज-लहसुन, मिर्च-मिरचई देकर ठाट से
पकाएँगे, आज भरपेट खाएँगे, कल परसों के लिए बासी रखेंगे। बासी
मसूर मिलाकर पकाएँगे। इतना सुंदर भोजन दूसरा भी होता है !
आज ज्यादा शिकार मिलने से सभी खुश हैं। तिस पर माँ विष
महिमा से नाग ने बाघ को मारा है। बाघ की चमड़ी छुड़ाई जा
नमक लगाकर सुखा लेने के बाद वह महिथान का आसन होगा।
विषहरी ! पद्मावती ! सँपेरे कुल की जननी, जय !

जय जय अरी विपहरी मैया,
दुख के सागर में तेरी
किरपा ही अपनी नैया।

उत्सव शुरू हो गया। ढोल-नगाड़े बजने लगे। बजने लगी बीन-बाँसुरी, चिमटे के कड़े। पिंगला बीच में बैठी। पद्मनागिन को, जिसे अभी-अभी पकड़ लायी थी, छोड़ दिया। उसके जहर के दाँत तोड़कर उसका विष जरूर निकाल लिया था। बदी नागिन मुह के घाव की पीडा से अधीर होकर सिर उठा-उठाकर छो मार रही थी। पिंगला हाथ की मुट्ठी घुमाती हुई, घुटना गाड़कर कहने लगी—ले, डँस। डँस तो सही! और उसके छो मारने के समय मुट्ठी और घुटने को इस ढग से हटा लेती कि नागिन का मुह माटी पर गिर जाता। वह गाने लगी :

नागिन री, तू मत फुफकार!
उसे देखकर पागल होगी, यह भी नही विचार!
ऐसे मत फुफकार!

उधर गंगाराम पीछे बैठ गया। आँखें सुर्ख हो गई। लेकिन आज वह गंभीर था। और किसी ने इसे गौर किया हो चाहे नही, भादो ने यह गौर किया था। गगाराम को वह अच्छी नजर से नहीं देखता। भादो के जैसा विशाल शरीर है, वैसा ही साहस है उसे। साँप पकड़ने और पहचानने में भी वह उस्ताद है वैसा ही। गगाराम डाकिनी-सिद्ध है, हो डाकिनी-सिद्ध, विषविद्या में वह भादो के सामने कुछ भी नही। भादो ने महादेव से ये सारे गुण सीख लिए है। भादो पिंगला का मामा है। माँ-बाप के मरने पर पिंगला को उसी ने पाला है। उसे नागिनी कन्या के रूप में वास्तव में भादो ने ही खोजा था। शबला से महादेव का विवाद जब चरम पर पहुँच गया था, महादेव जब माँ विपहरी को पुकार रहा था—मैया, नई नागिनी कन्या भेजो, सँपेरों का जात-धरम बचाओ, पुरानी कन्या की मति मैली हो गई है माँ, उस सत्यानाशी के मन में सरबनाश की आँधी उठी है। सरबनाश होगा। बचालो, मैया। नयी नागिनी कन्या भेजो। उस समय भादो ने ही कहा था—

पिंगला पर गौर किया है, उस्ताद ? जरा गौर से देखो तो सही। मुझे तो कैसा-कैसा लगता है।

—कैसा लगता है ?

—उसके कपाल पर नागचक्र देखने की नजर मुझे कहाँ ? लेकिन इधर के लच्छन से लगता है—नयी कन्या आ रही है, कन्या के अंग में लच्छन फूट रहे हैं।

इसी जागरण के दिन, जिस दिन आग की तपन में नाग नींद से जगते हैं, भादो ने हाथ पकड़कर पिंगला को महादेव के सामने खड़ा करके कहा था—ठीक से देखो तो जरा।

—हूँ। हूँ। हूँ।

महादेव चीख पड़ा था—जय विपहरी मैया। नागचक्र! कन्या के कपाल पर नागचक्र! आयी। नई कन्या आ गई।

पिंगला नई नागिनी कन्या हुई। भादो महादेव का दायाँ हाथ बना। शवला ने पिंगला से कहा—कोई डर नहीं, पिंगला। मैं तेरा बुरा नहीं करूँगी। तुझे मैं सब बता जाऊँगी, सारी गुप्त बातें कह जाऊँगी। मगर भादो से सावधान। तेरा मामा है तो क्या हुआ, उसने सरदार का मन जुड़ाने के लिए तुझको नागिनी कन्या बनाया। इस सरदार के बाद वही सरदार होगा। उससे होशियार। नागिनी कन्या और सरदार सँपेरा—साँप-नेवलों का सम्बन्ध। यह वैर सदा का है। उससे सावधान।

गंगाराम लौटकर नहीं आता तो भादो ही सरदार बनता। भादो का नसीब खोटा था, इसीलिए गंगाराम वापस आ गया। शुरू-शुरू में गंगाराम भादो की ही बात पर चलता था। लेकिन उस डाकिनी-सिद्ध आदमी ने कुछ ही दिनों में भादो को झाड़ फेंका। भादो भी विप-विद्या में माहिर था, वह भी तो कुछ मामूली आदमी नहीं, झाड़ फेंकने से ही क्या फेंका जा सकता है ? उसने विद्या के बल पर अपना आसन बरकरार रखा है, वहीं से वह गंगाराम पर कड़ी निगाह रखता है।

गंगाराम आज गंभीर था, भादो ने यह गौर किया। उसने पूछा—क्या सोच रहे हो, सरदार ?

—ऍं ? सोचूँगा क्या ?

जंतर-मंतर। बनाएँ, उस जमे हुए लोहू को फिर से ताजा लोहू बना दें। नहीं है, यह विद्या मटेल सँपेरों के नहीं। यह विद्या संताली के विख-बैदों को है। वही कर सकते हैं, वही। उनकी संताली में आदि संताली से लाए मूल की लता अभी भी है। उसी लता के ताजे रस को उस जमे लोहू में डाल देंगे, माँ विषहरी का सुमरन करके अपना मंतर पढ़ेंगे। और फिर देखो, तेल जैसा साँप का जहर मिलता जायगा, जमे लहू का ढेला और पानी मिलकर एक हो जायगा। ऐसा लगेगा कि आँच में मक्खन-सा गल गया।

संताली में विख-बैदों का खेल देख जाना साँपों का। उनसे तुम्हारी तुलना। ह-हा करके हँस देंगे विष-बैद संताली के।

पिछले साल बाबुओं ने मटेल सँपेरों को बुलाया था। उन्होंने हाथ चलाकर बताया था, यह उपद्रव घर का नहीं, बाहर का है। घर के बाहर कहीं नागों का वंश बढ़ा है। वहीं बच्चे यहाँ के सूखे और चिकने फर्श पर चले आते हैं। उन्होंने जड़ी देकर, विषहरी के फूल से मंत्र पढ़कर घर के चारों तरफ लकीर बाँध दी थी, घर को बाँध दिया था। बाबुओं ने भी विलायती दवा का प्रयोग किया था। उधर क्वार बीता कि नाग भी सो गए। इस साल फागुन में ही तीन बार नाग दिखाई दे चुका। घर के पुराने महल में रसोई है, भंडार है। उसी भंडार में गृहिणी ने दो दिन नाग को देखा। विशाल गेहुँअन। भोर-भोर की तरफ रसोइया बाहर निकला, कमरे से बाहर पाँव रखते ही उसे काट लिया। मटेल सँपेरों को बुलाया गया। उसी के साथ ही यहाँ भी आदमी आया। जाना होगा।

भादो उठ खड़ा हुआ। नाक-कान पर हाथ रखकर माँ का सुमरन करके बोला—गंगाराम!

—हाँ।

गंगाराम विषहरी का सुमरन करके नाच-गान की महफिल में चला गया। आज के दिन कन्या को भी साथ जाना पड़ेगा। वह न होगी तो विषहरी मैया के फूल से घर कौन बाँधेगा?

संताली गाँव की सँपेरे-सँपेरिनें खिल पड़ीं। ऐसा शुभ लच्छन पचास साल में नहीं हुआ कभी। ऐन जागरण के दिन ऐसा बुलावा आया है।

उठा झोला-पिटारा, धागा-जड़ी, विशल्यकरणी, ईश का मूल, संताली

पहाड़ की उस लता का पत्ता, पत्ता अगर न निकला हो तो उस मूल का ही एक टुकडा। मूल ढूंढ़े न मिले तो वहां पर की थोड़ी-सी माटी ले आ। विषहरी के फूल साथ ले ले और विष-पत्थर ले। पिटारा ले—खाली पिटारा। ले-लिवाकर चल।

संताली पहाड के मूल मे पत्ता अभी निकला नही था। नये साल का पानी पडे बिना पत्ते नहीं आते। मूल भी पुराना हो गया है। तिस पर बार-बार काटते-काटते वह दुर्लभ भी हो गया है।

भादो ने कहा—उसी से चल जायगा। लगता नही है कि वह आदमी बचेगा। भोर पहर का काटना, साच्छात काल का काटना होता है। जान भी यदि अभी तक रह गई हो, तो भी नहीं जिएगा। लेकिन हां, जमींदार के यहां के नाग को पकड़ने से सिरोपा मिलेगा।

पिंगला ने कहा—तुम लोग जाओ, मैं नही जाती।

—क्यो ?

—नही। अधरम के सिरोपा से मुझे कोई मतलब नही।

—पिंगला !—शासन के स्वर मे गंगाराम ने कहा।

उसके साथ-साथ भादो भी बोल उठा—पिंगला !

पिंगला हँसी। अजीब हँसी। बाबुओ के यहां से आए हुए दोनों आदमी पास ही खड़े थे। उन्होंने कहा—मालकिन ने बार-बार कहा है, सँपेरो की कन्या को जरूर से आने के लिए कहना। मैं विषहरी की पूजा कराऊँगी।

उनके सामने पिंगला क्या कहे, कैसे कहे ?

भादो ने कहा—वहां जहर लमहे मे योजन की चाल से चल रहा है, आदमी के लहू मे नाग का विस फैल रहा है, उस फैलाव मे प्राण का पुतला डूब जायगा तो फिर शिव की भी मजाल नही बचाने की। चल, चल। देर करने मे अधरम होगा।

—अधरम ?—पिंगला हँसी—मैं अधरम कर रही हूँ।

—हां। कर रही है।

—तो चल। तेरा धरम तेरी ठाँव। तेरा नसीब भी तेरी ठाँव। मैं लेकिन तुझे सावधान किए देती हूँ। होशियार होकर नाग को पकड़ना।

भादो और गंगाराम, दोनो ने तिरछी दृष्टि से उसे देखा।

पिंगला उससे भी नहीं डरी। बोली—भैंस के दोनों सींग टेढ़े—एक उधर जाता है तो एक उधर ! लेकिन काम के वक्त, जूझने के समय दोनों का मुँह एक ही ओर।

गंगाराम ने कोई जवाब नहीं दिया। भादो हँसा। बोला—कन्या के बड़ी पैनी नजर है। उस नजर से कुछ बच नहीं सकता।

—गमछा को अच्छी तरह से कमर में लपेट ले।

गंगाराम चौंका।

भादो ने कहा—ओह, खूब कही है। जियो, बिटिया। जियो।

—सजीव बनाने के लिए ? लेकिन जो हो, जिऊँगी मैं बहुत दिन। समझे मामा, जिऊँगी मैं बहुत दिन। आज बरछे से जब बाघ न छिदा और वह हवा को बेधता हुआ पानी में जा गिरा, तो मैं बहुत दिन जिऊँगी।

हँस उठी वह।

गंगाराम पीछे रह गया था। वह कपड़ा सम्हालकर गमछा को अच्छी तरह से कमर में बांध ले रहा था। आगे बढ़कर साथ होते हुए बोला—क्यों ? हँसी किस बात की ?

—कन्या बरछे के बारे में कह रही है।

—हाँ, मैं भी नहीं समझ पा रहा हूँ कि चूक कैसे गया।

—किस पर से ? बाघ या पापिन पर से ?

—कह क्या रही है तू ?

—कह रही हूँ, चावल उबलने से भात होता है। ऐसे भी ता[illegible] बात सुनी है ?

वह फिर हँस उठी।

दो

हिजल बिल का निर्जन पश्चिम किनारा उसकी हँसी से मानो सिहर उठा। घने पेड़-पौधों में से एक कोयल पिक्-पिक् करती हुई उड़ भागी; मैनों का एक झुंड बेहार में बैठा था, किच-किच करके डैनों के शब्द करती हुई वे आसमान में उड़ गई। वह हँसी मानो पतले लोहे की कुछ छुरियों या पत्तरों-सी झनझनाकर माटी पर गिर गई।

गंगाराम ने फिर मुड़कर उसकी तरफ देखा। भादो ने भी फिर ताका। पिंगला भी फिर हँस उठी।

भादो ने धीमे से कहा—अरी, साथ में दूसरे लोग हैं। छि:, घर की बात दूसरों के सामने—नः, ऐसा मत कर।

पिंगला को तब तक थोड़ी-सी तृप्ति हुई। बहुत दिन उसे हँसने में ऐसा सुख नहीं मिला। अब उसे यह ख्याल आया कि संग में बाबुओं के यहाँ के लोग हैं। उनके सामने इस बात की चर्चा ठीक न होगी। उसे माँ मनसा और बनिया की बेटी की कहानी याद आ गई। माँ मनसा ने उससे कहा था, बिटिया, सभी तरफ देखना, पर दक्खिन की तरफ मत ताकना। बनिया की बेटी का नसीब—नर-नाग साथ नहीं बसते। एक दिन ऐसा हुआ कि वह नागों का दूध उबाले बिना ही सो गई। नाग सब घूमने गए थे। नदी-समुद्र, जंगल-पहाड़ में घूम-घामकर वे लौटे। लौटकर वे दूध पिया करते थे। दूध के लिए आए। आकर देखा, बहन तो खुर्राटे भर रही है। किसी ने उसका हाथ चाटा, किसी ने पाँव, किसी ने बदन। किसी ने फोंस करके कहा—अरी ओ बहन, भूख लगी है। कितना सोएगी तू? बहन की नींद खुली। शर्म आयी। हड़बड़ाकर उठ बैठी। कहा—भाई, जरा सब्र करो। बस, अभी देती हूँ। धड़फड़ करके फूस और ताड़ के पत्ते में चूल्हा सुलगाया, तड़तड़ाकर आंच दी और टगबगाकर दूध उबला। कड़ाही उतारी। इसके बाद कलछुल से मापकर किसी को कटोरे में, किसी को गिलास में, किसी को माटी के सकोरे में, किसी को पत्थर के बर्तन में तो किसी को कुछ में, गर्ज कि हाथ के पास जो भी मिला, उसी में दूध देकर बोली—पियो, भाई।

स्पर्श देकर बोली—बिटिया, क्या देखा, बता ?

—नहीं माँ, मैंने कुछ नहीं देखा।

—बिटिया, क्या देखा, बता ?

—नहीं माँ, मैंने कुछ नहीं देखा।

—बिटिया, क्या देखा, बता ?

—नहीं माँ, मैंने कुछ नहीं देखा।

इस पर माँ ने प्रसन्न होकर कहा—तूने स्वर्ग में मेरी गोपन बात छिपाई, मैं मर्त्य में तेरी बात छिपाऊँगी। गोपन बात छिपानी चाहिए। जो छिपाते हैं, उनको महापुण्य होता है। वही महापुण्य तुझे होगा। स्वर्ग अमृत का राज्य है। माँ वहाँ विष पीती हैं, विष उगलती हैं—यह देव-समाज के लिए कलंक की बात है। बनिया की बेटी यदि इस बात को कहती, स्वर्ग में वह बात जाहिर हो जाती तो माँ का कलक फैलता।

'मेरी स्वर्ग में छिपाई, मर्त्य में तेरी छिपाऊँगी'—माँ विषहरी की बात है। गगाराम की गोपन बात रहे, दस के सामने ढँकी ही रहे। पिंगला चुप हो गई। खुशी-खुशी ही राह चलने लगी।

तेजी से चलने लगी।

रास्ता हिजल के पश्चिम तट के मेतों से गया है। घुटने भर धूल। गगा की मुलायम माटी—महीन बुकनी-सी नर्म। फागुन का तीसरा पहर। धरती तप गई थी। पाँव के नीचे की धूल गर्म हो गई थी, हवा में ताप। उस हवा में पिंगला के सर्वांग में नशे की एक जलन-सी हो रही थी। मेतों में तिल के बैंगनी फूल फूले थे। फूल जब और घने होंगे तो क्या ही शोभा होगी! कुछ फूल तोड़कर उसने अपने जूड़े में खोंस लिए।

गगाराम ने कहा—तिल के फूल जूड़े में खोंसे, निल सोना खटना पड़ेगा तुझे। चैत-लक्ष्मी की कथा मालूम है ?

—मालूम है। खटती तो यों ही जा रही हूँ, जाते वक्त तुझे गजमोती का हार दे जाऊँगी। चैत-लक्ष्मी की कहानी जब जानता है, तो जाते वक्त लक्ष्मी ने ब्राह्मणी को गजमोती का हार दिया था, यह भी तो जानता है ?

गजमोती का हार—अजगर !

व्रतकथा में आता है, छद्मवेशी लक्ष्मी को ब्राह्मणी पूछती न थी, अप-

ती थी। लेकिन जब लक्ष्मी अपने असली रूप में आकर स्वर्ग जाने
रथ पर सवार होने लगी, तो सुनाई ब्राह्मणी ने दौड़कर कहा—
क को तो तुमने इतना दिया, मुझे क्या दोगी, देती जाओ।
मी ने हँसकर कहा—तुम्हारे लिए उस तहखाने में गजमोती का हार
ब्राह्मणी दौड़ी। तहखाने में हाथ डाला। वहाँ एक अजगर था। अजगर
उसे काट लिया।

गंगाराम हँसा। वह उसे मालूम है। पिंगला के मन के द्वेष का भी उसे
ता है। आज सब ही उसने पिंगला को ही निशाना बनाकर बरछा फेंका
था। लेकिन पिंगला ठहरी सच्ची कालनागिन की जात। नागिन पल में
गायब होती है। 'अरे, वह देखो नागिन'—इतना कहकर पलक भर मारिए,
वहाँ कुछ नहीं। नागिन छूमंतर हो गई। व्याध का तना तीर छूटते न
छूटते वह मायाविन-सी गायब हो जाती है। पिंगला ठीक उसी तरह से आज
डोंगे से गायब हो गई थी। निशाना लगाते वक्त तक वह गंगाराम के बरछे की
सीध में थी। गंगाराम ने बरछा फेंका और वह नहीं थी। डोंगा खाली पड़ा
था। हिजल बिल का पानी हिल रहा था और पिंगला पानी में थी। गंगाराम
ने मन ही मन में उसे शाबाश कहा, हजार बार।

वाह, वाह! पिंगला चल रही थी जैसे झूमती हुई। देखकर कलेजे क
लहू छलक पड़ता। गंगाराम की आँखों को आग लग जाती।

गंगाराम गंगाराम है। दुनिया में वह कुछ भी नहीं मानता।
बोला है, सब झूठ। कन्या?—गंगाराम को ही-ही करके हँसने क
चाहता।

नातो चल रहा था और मन्तर पढ़ रहा था। बीच-बीच में एक
में गाँठ लगा रहा था। वह यहीं से मन्तर पढ़कर गाँठ से बंधन बाँ
था कि रोगी के लहू में विष और न फैले।—जहर जहाँ है, वहीं
जा। बाल भर भी आगे बढ़ा तो तुझे माँ विषहरी की कसम! नी
गले में जैसे थिर है, वैसे ही थिर रह। दुहाई महादेव नीलकंठ की
आस्तिक मुनि, माँ विषहरी के बेटे की।

दुनिया में नाग-नागिन को मायावी कहते हैं। जब वे अ
दिखाई दे जाते हैं, आदमी घबरा जाते हैं और कह उठते हैं—

क्षण वे नजरों में ओझल हो जाते हैं। माया महज कहने की बात है, शायद हो जाने की शक्ति उनमें नहीं है। दरअसल वे चालाक होते हैं और जितने चालाक होते हैं, उतनी ही तेज होती है उनकी चाल। इसीलिए वे छिप जाते हैं। पर उनकी चालाकी सँपेरों की निगाह से नहीं छिपती। सँपेरे साँप से भी ज्यादा चतुर होते हैं, साँपों की चतुराई को वे पकड़ लेते हैं। छिपने से भी सँपेरों के हाथ से छुटकारा नहीं मिलता। साँप की छींक सँपेरे पहचानते हैं।

पिंगला ने कहा—मगर एक जने के आगे कोई चतुराई नहीं चलती। राजा इंदर के हजार आँखें हैं, धरमदेव के हजार आँखें नहीं हैं, बीच कपाल पर एक आँख है—उस आँख से पलक नहीं, उस नजर से कुछ छिपाया नहीं जा सकता, वहाँ कोई चतुराई नहीं चलती।

बार-बार यही कहकर पिंगला ने गंगाराम को सावधान कर दिया कि चालाकी खेलने मत जाना, मत जाना।

गंगाराम ने भी गरदन घुमाकर ताका। कमर के कपड़े को उसने कसकर बाँधा था। बोला—चुप भी रह तू। गंगाराम और भादों, दोनों ने अपनी-अपनी कमर में गेहुँअन छिपा लिया था। जमींदार के यहाँ साँप मिले, तो ठीक ही है। एक होगा तो तीन निकलेंगे। दो होंगे तो चार निकलेंगे। नहीं ही होगा तो दो तो निकल ही आएँगे। साँप घर के अँधेरे कोने में रहता है। वहाँ कोई गड्ढा देखकर उसे खोदने वक्त सयाने सँपेरे कमर में बँधे साँप को खोलकर पकड़ लाएँगे—यह देखिए, निकला।

मोटी विदाई मिलेगी ही। पिंगला को यह अच्छा न लगा। सतालो के सँपेरे अधरम करेंगे? मटेल सँपेरे करते हैं, इस्लामी सँपेरे करते हैं। उन्हें यह सोहता है। उसने होशियार कर दिया। लेकिन गंगाराम ने दाँत निकालकर, गरदन घुमाकर कहा—चुप भी रह तू।

दीर्घ निश्वास फेंककर पिंगला ने कहा—खैर। चुप हो गई। तेरा धरम तेरे पास।

बाबुओं का रसोइया जिंदा न था। मर गया था। उनके पहुँचने के पहले ही मर गया था। मटेल सँपेरे, डाक्टर, दूसरे ओझा—कोई कुछ न कर सके।

रे दिन सवेरे साँप पकड़ने की बारी। साँप बाहर नहीं, घर ही

विशाल मकान। ईंटों की चुनाई। चारों ओर घूमकर उन्होंने बंधन
दिया। उसके बाद बाहर महल, अंदर महल से पुराने महल में घुसे।
ा महल में रसोइए को साँप ने काटा था।
जमीन पर झल्ली ने लकीरें खींच भादो धरती पर हाथ रखकर बैठा।
लका हाथ चलते हुए भंडारघर में पहुँचा। सँपेरे भी भंडारघर में
हुँचे। अँधेरा कमरा। उसकी नाक को एक गंध लगी। है। इसी घर में
है। रोशनी चाहिए। रोशनी लाइए।
पिंगला सबके पीछे खड़ी स्थिर आँखों से देख रही थी। गंगाराम ने
आवाज दी—रोशनी लाइए। दो-तीन हंडी लाइए। साँप एक नहीं, दो-
तीन हैं। लगता है, एक पद्मनाग है। पकड़ूँगा। बंद करूँगा उसे। खासी
विदाई लूँगा। ले आइए।
सब्र करो—पीछे से आवाज आयी। भारी गले से किसी ने आवाज
दी।
पिंगला चौंकी। गंगाराम ने मुड़कर देखा। भादो ने नजर उठाई। ए
अनोखा खूबसूरत जवान—सिर पर लंबे बाल, चेहरे पर मूँछ-दाढ़ी, ब
में तावीज, गले में जनेऊ, गोरा रंग, गठीला बदन, आँखों में पागल
निगाह। वह आदमी आकर सामने खड़ा हो गया। उसकी वह पागल
निगाह गंगाराम की कमर पर थी। उसकी नजर देखते ही पिंगला
पल में सब समझ गई। काँप उठी। क्या होगा? संताली के विष-वैद
मानमर्यादा जमींदार के आँगन की धूल में मिलाकर लौटना होगा?
माँ विषहरी! बाबा भोलेनाथ! उपाय करो, मान बचाओ। जिस
के सँपेरों के मंत्र से एक दिन गड्ढे से निकलकर साँप फन खोले खड़
था, उसी संताली के सँपेरे आज चोर बने सिर झुकाकर लौटेंगे
सँपेरे हँसेंगे, खिल्ली उड़ाएँगे। इतने बड़े जमींदार के यहाँ साँप
देखने के लिए कितने लोग आए हैं, अच्छे-अच्छे लोग। विष-वैदों
की निंदा रास्ते की दोनों तरफ फैलाते हुए वे चले जाएँगे।
सैपा।

—जी ?

—पहले तुम लोगों की तलाशी लूंगा। देखूंगा, पल्ले साँप है कि नहीं।

गंगाराम दोनों हाथ ऊपर उठाकर खड़ा हो गया। आँखें उसकी दहक उठीं। उसकी कमर में कपड़े से बँधा वही पद्मनाग था, जो कल पकड़ा था। जान पर आए सँपेरे की इच्छा थी कि कपड़ा खोलकर पद्मनाग को निकालने में यदि उसे काटे तो काटे। भादो की कमर में भी एक गेहुँअन था। वह अपनी कमर में हाथ डाल रहा था, खोलकर साँप को अंधकार कोने में फेंक देगा। लेकिन उस पगले की आँखें नेवले-सी पैनी थीं। वह बोला—खबरदार। खड़े हो जाओ! आवाज कैसी थी उसकी ! कलेजा काँप उठता था।

—चल, बाहर चल।

—ठाकुर !—सामने आ खड़ी हुई नागिनी कन्या पिंगला। खींचकर उसने अपने पहनावे के छींटे लाल कपड़े को उतार फेंका। बिलकुल नंगी होकर खड़ी हो गई सबके सामने। आँखें जलने लगीं, पलकें स्थिर। बेहद क्षोभ और उत्तेजना से साँस घनी हो गई, निश्वास के वेग से शरीर डोलने लगा। बोली—देख लो, ठाकुर। नाग नहीं, नागिन नहीं—कुछ भी नहीं है। देख लो।

सारी भीड़ काठ की मारी-सी खड़ी उस नंगी औरत की ओर देखती रह गई।

उसने तुरत ही अपना कपड़ा उठा लिया।

फेंटा बाँधकर उसने कपड़े को पहना। गंगाराम के हाथ से सब्बल को छीन लिया और बोली—मैं साँप पकड़ूंगी। रोशनी और हड़ी लाइए। तुम सब वही खड़े रहो जी। मैं साँप पकड़ूंगी। मताली के सँपेरों के बदन पर हाथ मत डालिए। उनका अपमान मत कीजिए।

सब्बल से उसने पक्के फर्श पर चोट की। ईंट-चूने का फर्श—टन-टन आवाज होने लगी। वह तीखी निगाहों से देखती हुई कोने-कोने बढ़ी। पीछे-पीछे वह आदमी।

हाथ की रोशनी उठाकर उसने देखा, लाल धूल जैसा वहाँ प

है ? एक बारगी उस छोर पर बंद दरवाजे के नीचे पानी निकलने वाली नाली के पास ? उसने जोर से साँस ली। हलकी गंध-सी आ रही थी। तेजी से आगे बढ़ी। रोशनी नीचे रखकर उसने उस धूल को उठाया। और उसे सूंघकर उस आदमी को पुकारा—ठाकुर, आइए, देखिए।

—मिला ?

—हाँ।—उसने सब्बल मारा। ठंग से आवाज हुई।

—कहाँ ? वह तो सख्त फर्श है।

—है। देखिए, कुछ फूला-सा है। उसने फिर एक कोने पर सब्बल ठोंका। अब की आवाज और तरह की निकली। और जोर से ठोंका।

—गढ़ा कहाँ है ?

—चौखट के नीचे। पानी निकलने की नाली के भीतर।

—खोद वहाँ पर।

पक्के फर्श पर सब्बल की चोटें पड़ने लगीं। द्वार के उस पार से भादो ने कहा—सबर बिटिया, होशियार।

—क्यों ?

—ठहर, मैं आता हूँ। देखूँ जरा।

—नहीं, बाबा। मैं तुम लोगों की नागिनी कन्या हूँ। मुझ पर भरोसा रखो। मैं इन भले मानस को संताली के विषवैदों की बेटी की बहादुरी दिखा दूँ। क्या कह रहे हो, वहीं से कहो ?

भादो ने कहा—गढ़े का मुंह किधर है ?

—दरवाजे की चौखट की नाली में। चौखट के ठीक बीचोंबीच।

—खोद कहाँ रही है ?

—दाएँ कोने।

—बाएँ कोने को ठोंक कर देखा ? परख लिया ?

चमक उठी पिंगला। ठीक तो ! जोश में वह कर क्या रही है ?

भादो ने कहा—लगता है अड्डा होगा। पिछली बरसात में डेढ़ बीस बच्चे निकले थे। पहले ठोंककर देख ले।

पिंगला ने अबकी बाएँ कोने में सब्बल मारा—हाँ। फिर ठोंका—हाँ, हाँ।

भादो ने कहा—एक काम कर।

—हां, हां। अब नहीं बताना होगा। पहले गढ़े का मुंह खोलकर एक मुंह बन्द कर दूं।

—हां—भादो खुशी में बोल उठा—बलिहारी बिटिया, बलिहारी सँपेरे कुल की बेटी। ठीक ही कहा। हां। फिर एक-एक करके दोनों को खोदो। सावधान!

मब्बल की चोट पड़ने लगी।

लाल कपड़े में कमर कसे हुए उस तन्वी की दोनों खुली बाँहें उठने और गिरने लगीं, रोशनी की छटा भी भकमकाकर उठने-गिरने लगी। पसीने-पसीने हो गई। घुटने गाड़कर बैठी थी। उत्तेजना में कलेजा थर-थर कर रहा था। विषहरी ने मान रख लिया आज। उसका जीवन आज धन्य हो गया, वह सताली के सँपेरों का मान बचा सकी। नंगी खड़ी हो गई थी, इसकी शर्म, इसका क्षोभ न रहा।

बीच के गढ़े का मुंह थोड़ा-सा खोला उसने। इधर से उधर को एक लम्बी नाली चली गई है। दाएँ रहने का चौड़ा गढ़ा, बाएँ भी वही—बीच की नाली नाग-नागिन का राजपथ। बाहर-भीतर का रास्ता। बायीं ओर के मुंह को उसने मिट्टी से बन्द कर दिया। उसके बाद दाएँ गढ़े पर मब्बल चलाया। मिट्टी उखड़ गई। मिट्टी के नीचे मिट्टी। उस पर चोट मारकर पिंगला अवाक् रह गई। कोई सुनगुन नहीं।

फिर मब्बल चलाया। कहां? कोई आवाज तो नहीं। उधर चला गया क्या? उसने फिर भी खोदा। चिकने घड़े-सा एक चौड़ा गढ़ा। यही तो अड्डा है। अंडों का ढेर। अब उसने बायीं तरफ मब्बल मारा।

न', फिर गलती हो रही है। अबकी उसने बंद नाली का मुंह खोल दिया। उसके बाद गढ़े में चोट की।

—ठन्-ठन्। ठन्-ठन्। ठन्-ठन्।

साथ ही साथ गर्जन हुआ—गों-गों। उत्तेजना से सँपेरिन का मन नाच उठा।

आ.।—माथे का बाल चेहरे पर आ पड़ा।

मब्बल छोड़कर उसने बिखरे बालों को मजबूती से ?

उसके बाद फिर सब्बल। सब्बल अंदर धँस गया। वह सतर्क होकर बैठ गई—हाँ। अब आ जा, नाग! नागिन! पिंगला तैयार बैठी। स्थिर दृष्टि, तत्पर हाथ—एक घुटने के सहारे वह बैठ गई। बाएँ हाथ से सब्बल को जरा और दबा दिया। दबाना था कि एक विशाल गेहुँअन गरजकर निकल आया। सँपेरिन ने झट उसका टिटुआ दबा लिया।

—आ!

तुरत दूसरा निकला। दो—हाँ, दो थे। नाग और नागिन।

—होशियार, सँपेरिन!—पीछे का वह पागल चिल्ला उठा।

—ठहरो, ठाकुर!—सँपेरिन गरज उठी। दौड़कर वह कमरे से आँगन में आ खड़ी हुई। अजीब हो उठी वह नारी-मूर्ति—दो हाथों में साँप का दो माथा। सादे साँपों ने उसके काले कोमल हाथों को कसकर जकड़ लिया। पीसने लगे। वह काली औरत आँगन में खड़ी पुकार उठी—जय विषहरी!

उसके बाद बोली—अजी पकड़ो। नागों का पेंच खोल दो। सुनते हो!

लेकिन उसके पहले ही उस पगले ने अपने अजीब कौशल से पेंच खोल-कर नागों को खींच लिया और घड़े में उन्हें बन्द कर दिया। पिंगला आँगन में पाँव पसारे बैठकर हाँफने लगी। अवाक् होकर उस पागल का काम देखने लगी। पगला कोई मामूली तो नहीं लगता। उसने हाथ जोड़कर उसी से कहा—मुझे एक लोटा पानी दीजिएगा?

वह पगला ही लोटे में पानी ले आया। बोला—शाबाश सँपेरिन, शाबाश! मगर एक घूँट से ज्यादा पानी मत पीना। मैं तुझे प्रसादी पिलाऊँगा, महादेव की प्रसादी। पिएगी? अरी, मैं नागो ठाकुर हूँ।

नागो ठाकुर! राढ़ देश के नाग के ओझा नागेश्वर ठाकुर! साक्षात् धन्वंतरि! पिंगला उनके चरणों में लोट पड़ी।

उसके माथे पर हाथ फेरकर नागो ठाकुर ने कहा—शाबाश! तू साक्षात नागिनी कन्या है।

भादो, गंगाराम ने भी जमीन तक झुककर उन्हें प्रणाम किया। नागो ठाकुर! अरे बाप रे!

पगला नागो ठाकुर, मरघट-मसान में रहते हैं, वे कहाँ से आ गए!

पिंगला ने अपना जीवन सार्थक समझा, नागो ठाकुर के दर्शन हो गए! शिवजी जैसा रंग, उन्हीं जैसी आँखें। पागल जैसा भाव!

तीन

जय विषहरी। पद्मावती माँ, जय हो तुम्हारी।

जंगल में, पहाड़ में, गरीब के टूटे-फूटे घर में, रात के अँधेरे में गृहस्थों की तुम रक्षा करती हो, मैया। सँपेरों को पेट का अन्न, लाज बचाने का कपड़ा देती हो। नागिनी कन्या के धरम को तुम बचाओ, माँ। वह सँपेरे कुल के धरम को माथे पर रखे—सँपेरिन अविश्वासिनी, सँपेरिन की बेटी छलनामयी होती है कलमुँही। उनका अधरम, उनका पाप सँपेरों के कुल को इस नागिनी कन्या के महातम, उसके पुण्य से स्पर्श नहीं करता।

कन्या का पुण्य बहुत है, महिमा बहुत।

भादो पंचमुख हो उठा। कन्या का बदन छूकर उसने कहा—बिटिया, मेरी आँखें खुल गईं। तुम्हारा बदन छूकर, माँ-विषहरी का नाम लेकर कहता हूँ, हम सबकी आँखें खुल गईं। हाँ, बड़े दिनों के बाद कन्या की ऐसी महिमा देखी।

दस जने की मजलिस में भादो ने उस घटना का जिक्र किया।

कहा—मैंने कन्या का नागिनी रूप अपनी आँखों देखा। छोटा-छोटा अँधेरा कमरा, बाहर लोगों की भीड़—सब देखने आए हैं, सतालो के सँपेरे नाग पकड़ेंगे। घर के अंदर तीन सँपेरे और दरवाजे पर खड़ा वही ठाकुर—सिर पर रूखे काले लम्बे बाल, चेहरे पर मूँछ-दाढ़ी, आँखों में चील की नजर। साक्षात चाँद सौदागर का मित्र शंकर गारुड़ी। गाढ़ देश का नागो ठाकुर—नागेश्वर ठाकुर। उसकी नजर बचाई जा सकती है भला! उसने ठीक ताड़ लिया था कि गंगाराम की कमर में पद्मनाग लिपटा है।

भादो ने कहा—मैं बैठा था। हाथ चलाकर देख रहा था। मेरी कमर में भी साँप था। वह भी ठाकुर की नजर से बचकर कहाँ जाता? उसने

टोका—खबर करो। जैसे जंगल का शेर गरज उठा। लगा, आज अब खैर नहीं है। गया—मान गया, इज्जत गई, दुश्मन की बाँछें खिलीं, संताली के सँपेरों के काले मुँह पर कालिख पुती। ऊपर पुरखे मानो रो पड़े।

भादो को उस प्रलय की रात की बात याद आ गई थी, जिस रात लोहे के कोहबर में नागिन ने लखींदर को डँसा था। उस दिन देवता की छलना से कालनागिन ने सँपेरों को छलकर उनके माथे पर अपराध का बोझा रख दिया था।

भादो ने कहा—ऐन वक्त पर बाघ की गरज के जवाब में जैसे फोंस कर उठी कालनागिन पिंगला। जागरण वाले दिन हिजल बिल में माँ-विषहरी के घाट पर बाघ के सामने फन उठाए जैसे पद्मनागिन को देखा था, ठीक वैसे ही। पलक मारते ही पिंगला ने अपना काला बदन उघाड़कर लाल कपड़े को उतार फेंका। अपलक आँखों ताकती हुई खड़ी हो गई—उत्तेजना से वह धीरे-धीरे हिल रही थी। भादो को लगा, संताली के सँपेरों के गौरव को रखने के ख्याल से कन्या ने कपड़े के साथ-साथ आदमी के शरीर के नकली रूप को भी उतार फेंका और नाग रूप में फन खोले खड़ी हो गई। हूबहू नागलोक की नागिन! उसने उसकी आँखों में आग देखी, निश्वासों में आँधी की आवाज सुनी, उसके नंगे तन में उसने नारी का नहीं, नाग का रूप देखा।

जय विषहरी!

पहले कन्या की, फिर विषहरी की जय-जयकार से उन लोगों ने हिजल के किनारे और संताली के आसपास को गुँजा दिया। कलजुग में जब देवता का महातम कम होता आता है, हिजल के थानवन की रोक से भी जब कलिकाल के घुस आने की राह रोकी नहीं जा पा रही है, ऐसे में इस तरह से कन्या के महातम के प्रकट होने की कहानी सुनकर संताली के लोग आशा और उल्लास से आश्वस्त तथा उल्लसित हो उठे।

भादो ने शपथ खाकर कहा, उसने कन्या के नागिन-रूप को अपनी आँखों देखा।

पिंगला को खुद भी यही लग रहा था। उस घड़ी की उसे साफ याद नहीं। बहुत सोचने के बाद उसे याद आता है, आँखों में आग दहकी थी

निश्वासों से जहर चुआ था; वह नागिन जैसी ही झूमी थी; जी में आया था, नागो ठाकुर पर फन मारने की तरह टूट पड़े। वह भी करती वह—नागो ठाकुर अगर एक कदम भी बढ़ता तो जहर-काँटा लेकर उस पर टूट पड़ती। माँ विषहरी का सुमरन करके जब उसने कपड़े को उतार फेंका, तो उतने-उतने पुरुष उसे पुरुष ही नहीं लगे।

उस दिन सच ही उसमें नागिन का रूप प्रकट हुआ था। भादो ने गलत नहीं देखा। ठीक ही देखा उसने।

किसी दिन कालनागिन ने सताली पहाड़ के विष-बैदों को मोहग्रस्त करके विषहरी का मान रखने के लिए बैदों का अपकार किया था। बैदों ने उसे कन्या मानकर छाती से लगाया था और कन्या ने विश्वासघात किया; बैदों की जाति, कुल, धाम सब गया। उसके बाद युग और युग बीता, नागिन कन्या रूप में विष-बैदों के यहाँ जनमी, विषहरी की पूजा की, अपने जहर में आप जला की, पर शायद सँपेरों का मान चूंकि ऐसे खतरे में कभी नहीं पड़ा, इसलिए प्रकट होकर ऋण चुकाने का उसे कभी अवसर नहीं मिला। अब की मिला। धन्य हुआ जीवन उसका। जय विषहरी! कन्या पर तुम दया रखना।

हिजल के घाट पर पिंगला सुबह-शाम घुटने टेककर माँ को प्रणाम करती। बीच-बीच में उस पर माँ विषहरी आतीं। आँखें सुर्ख हो जातीं, बाल बिखर जाते, सिर हिलाने लगती, बुदबुदाती।

सताली के सँपेरे-सँपेरिनें धूप-गुग्गुल जलाकर दौड़ी आतीं। चिल्लाकर पूछतीं—क्या हुआ मैया, आदेश करो?

—आदेश करो माँ, आदेश करो।

भादो उसके मुँह के सामने बैठकर आदेश सुनने की कोशिश करता।

गंगाराम एकटक देखता रह जाता। आँखों में प्रसन्न दृष्टि। पिंगला की महिमा से जटिल चरित्र का गंगाराम मानो वशीभूत हुआ है। बीच-बीच में पिंगला अचेत हो पड़ती है। वैसे में सरदार सँपेरे के नाते वही उसकी शिथिल पड़ी देह को गोदी में उठाकर उसे उसके घर में सुला देता! देवता के आश्रय में होने की हालत में उसे छूने का अधिकार [illegible] और किसी को नहीं। गंगाराम ही उसकी सेवा करता, [illegible]

बाहर दरवाजे पर बैठे रहते।
पिंगला को होश आता कि वे सब जय-जयकार कर उठते। गढ़े में
ोट खाए साँप की तरह ही वह झट उठ बैठती। कपड़े सम्हाल कर तीखे
वर में कहती—जा-जा, तू बाहर जा। पिंगला गंगाराम को बरदाश्त नहीं
कर सकती। गंगाराम की आँखों में तीखा कुछ है, पिंगला सह नहीं सकती।

ऐसे ही समय में शिवराम कविराज बहुत दिनों के बाद एक दिन
संताली गए थे। धूर्जटी कविराज गुजर चुके थे, शिवराम राढ़ के एक बढ़ते
हुए गाँव में आयुर्वेद-भवन खोलकर बैठे थे। एक संस्कृत पाठशाला भी
चलाते थे।
कहानी कहते-कहते शिवराम ने कहा—जमींदार के यहाँ की डकैती की
कहानी शुरू ही में नहीं कही? उसी गाँव में मैं उस समय इलाज करता था
गुरुजी ने ही मुझे वहाँ परिचित करा दिया था। गुरुजी जब तक जिंदा
तब तक 'सूचिकाभरण' मैं वहीं से लाया करता था। गुरुजी चल बसे
पहली बार मुझे सूचिकाभरण तैयार करना था। जिला मुर्शिदाबाद
हुए भी राढ़ देश—गंगा वहाँ से कुछ दूर है। विष-वैद लोग यहाँ नहीं
उन्हें मेरा पता भी नहीं मालूम। यह इलाका मटेल सँपेरों का है। ये
असली कालनागिन नहीं पहचानते। ये नागिनें साँपों में भी दुर्लभ होती
लिहाजा मैं खुद ही सताली गया। पिंगला को अपनी आँखों देखा।
संताली की हालत।
पिंगला को दुबली देखा। आँखों में अस्वाभाविक चमक।
उस रोज भी उन सबका कोई उत्सव था।
धूप-गुग्गुल, बलिदान और नैवेद्य का समारोह। बाजे बज र
ढोल-ढाक, बीन, बाँसुरी, चिमटा। रह-रहकर जय-ध्वनि गूँज
इस बार की धूम में सब कुछ ही जैसे ज्यादा! संताली के सँपेरे
थे। भादो ने उन्हें प्रणाम करके कहा—कन्या जाग रही है बाब
शायद हम सब के नसीब खुलें। मुझे लगता है, माँ विषहरी
दर्शन देंगी।
उसने फिर चुप-चुप कहा—अब तक दर्शन दिया होता, ि

मेरी ममता ही उतनी गाढ़ी क्यों है, मालूम है ? वे भूतकाल के आदमी हैं। सृष्टि काल से संसार में कितने मन्वंतर हुए, एक से एक विपत्ति का काल आया, पृथ्वी में धर्म पर आफत आयी, मात्स्यन्याय भर गया, आपद्धर्म के चलते विप्लव हुआ, एक मनु का काल बीता, दूसरे मनु नया विधान-नई धर्मवर्तिका लिए आए। ज्ञान-विज्ञान, आचार-व्यवहार, रीति-नीति, बोलचाल, पहनावा-प्रसाधन में कितना परिवर्तन हो गया। लेकिन जो आरण्यक थे, हर बार, हर विप्लव के समय ही वे और भी घने अरण्य में चले गए हैं ! और अपनी आरण्यक प्रकृति को बरकरार रखा। इसीलिए ये भूतकाल के ही रह गए है ! मनु कहते हैं, शास्त्र-पुराण कहते हैं, इनकी जन्मजात यानी धातु और रक्त की प्रकृति ही स्वतंत्र है और वही इसका कारण है। इस धातु और रक्त से बने शरीर में जो आत्मा रहती है, मानवात्मा होते हुए भी उस पतित और दूपित आवास में वास करने के नाते पतित और विकृत होकर इसी धर्म में आत्मप्रकाश करती है। यही विकृति ही उनका धर्म है। और, इसमें सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है, मालूम है ? शास्त्र-पुराण में इसी धर्म का पालन करके उन्हें चरम मुक्ति मिली है, इसके भी नजीर हैं। महाभारत में देखोगे कि धर्मव्याध को अपने आचरण से परम तत्त्व की प्राप्ति हुई थी। एक जिज्ञासु ब्राह्मणकुमार उससे वह तत्त्व जानने के लिए गए तो उसे देखकर दंग रह गए। उस आरण्यक आदमी का जीवन, अँधेरा घर, चारों ओर पड़े मरे जानवर, माँस-मेद-मज्जा की गंध, सूखे चमड़े का आसन—सेज, काला सख्त मुखड़ा, लाल-लाल गोल आँखें, मुंह में शराब की बू—यह सब देखकर उनके मन मे यह प्रश्न जगा कि इसे चरम मुक्ति कैसे मिल सकती है ? व्याध ने उनके मन के भाव को भांप लिया। उसने ब्राह्मणकुमार को सादर बिठलाकर कहा—यही मेरा स्वधर्म है। इसी धर्म के पालन में मैंने सत्य को माथे पर धारण करके परम तत्त्व को जाना है। अगर मैं अपने धर्म को छोड़ देता, तो तुम लोगो की सफाई और सदाचरण के अनुकरण में सदाचरण की परिच्छन्नता की शांति और सुख से ही तृप्त रहता, तत्त्व-प्राप्ति की साधना से बाज आता। इसी आचरण में हमारे जीवन की स्फूर्ति है, इसी में हमारी मुक्ति है।

में थोड़ी तकलीफ भी हो, तो जाड़े में वे खासे आराम का अनुभव करेंगे। बात दरअसल यह है कि वे आए नहीं, आना नहीं चाहा। जिस कारण से भी हो चाहे। हो सकता है, हमारे जीवन की जटिलता से उन्हें डर हो—संस्कार का डर, जटिलता का डर, हम जो आचरण करते हैं, उसका डर। हममें से किन्हीं ने उन्हें पुकारा नहीं, हम दूर रहे हैं, उन्हें दूर रखा है घृणा से। मैंने उनके शरीर और नाड़ी के लक्षण का विचार करके कोई भेद तो नहीं पाया है, धातु और लहू का विश्लेषण करके परीक्षा का उपाय जानता होता, तो सही तथ्य को जान पाता।—इतना कहकर फिर आसमान की तरफ ताकने लगते।

भादो को देखकर उस दिन मुझे आचार्य की ही याद आयी थी। भूत-काल का आदमी, भूतकाल के मानसिक परिवेश के पुनरुज्जीवन में नया बल मिला है, नई स्फूर्ति मिली है—जैसे अंधेरे पाख की रात ने मावस को पा लिया हो! यह स्फूर्ति सारी बस्ती के लोगों को मिली है। संताली गाँव में पैर रखते ही वेशभूषा, आचार-व्यवहार में शिवराम को इसका परिचय मिल गया।

भादो का चमकता हुआ काला शरीर धूसर हो उठा था। आजकल ये तेल लगाते हैं, भादो ने तेल लगाना छोड़ दिया है। रूखे काले बालों में गाँठें पड़ गई हैं, उस पर उसने गमछे का एक टुकड़ा बाँध रखा था। शायद पहले यों गमछा बाँधने का रिवाज था। गले में, हाथ में माला, तावीज और धागे की मात्रा दुगनी बढ़ा ली थी। बदन की बू और तीखी हो उठी थी। शराब पीना बढ़ गया था। बस्ती के सारे लोगों ने गेरुआ रंग से रँगकर कपड़ा पहनना शुरू कर दिया था।

पिंगला मानो तप से दुबली हुई शबरी हो। दुबला शरीर, तेलहीन रूखे बिखरे बालों ने फूलकर उसके सूखे हुए चेहरे को घेर लिया है, आँखों में अस्वाभाविक दमक, सारे अंगों में मानो एक उदासीनता हो।

भादो ने उसे दिखाते हुए कहा—जरा कन्या का रूप देख लीजिए। वही

पिंगला क्या हो गई है !

यह बात उसने चुपचुप कही।

शिवराम एकटक पिंगला को देखते रहे। धूर्जटी कविराज के शिष्य ठहरे, उन्हें यह समझने में देर नहीं लगी कि पिंगला के ये लक्षण किसी दैवी प्रभाव या देव-भाव के नहीं हैं। ये सब वेदक रोग के लक्षण हैं। मूर्छा के लक्षण। उस पर मूर्छा रोग का आक्रमण हुआ है।

उन्हें देखकर पिंगला कुछ प्रसन्न हो उठी। जीवन की चंचलता से वह सचेतन हो उठी मानो। बोली—आइए धन्वंतरि ठाकुर, बैठिए। दो जी, आसन दो।

एक सँपेरे ने एक चौकी डाल दी। शिवराम बैठे।

पिंगला बोली—आप शवला दीदी के छोटे धन्वंतरि है, मेरे धन्वंतरि ठाकुर हुए। कालनागिन के लिए आए हैं आप ?

—हाँ। आए बिना उपाय क्या है ? गुरुजी ने तो देह रखी···

—आ.। हाय-हाय, हमारे लिए तो बाप से भी बढ़कर थे। आ आः···

इसके जवाब में चुप रहने के सिवा और कुछ नहीं किया जा सकता। शिवराम की आँखें गीली हो गई। जी उदास हो गया।

कुछ देर में अपने को सम्हालकर शिवराम ने कहा—अब तक मैं गुरुजी से ही सूचिकाभरण ले जाता था, अब खुद ही बनाऊँगा। इसीलिए आया हूँ। कालनागिन की असली जात तुम्हारे सिवा और किसी से नहीं मिल सकती, इसीलिए आया हूँ।

पिंगला ने एक लम्बी उसाँस लेकर कहा—शायद हो कि अब पाएँ ही नहीं धन्वतरि ठाकुर। असली शायद मिलेगी ही नहीं।

—नहीं मिलेगी ? क्यों ?—हैरान होकर शिवराम ने पूछा।

—विषहरी का संकेत आया है। आदेश अभी नहीं आया है। वह भी आएगा, देरी नहीं है। कालनागिनी को नागलोक लौट जाना होगा। समझ गए ? उसका शाप छूट जाएगा।

बात शिवराम ने ठीक से समझी नहीं। वे ताकते रह गए, अचरज और प्रश्नभरी दृष्टि से पिंगला की ओर देखा।

पिंगला ताड़ गई। उसकी तेज निगाहों वाली आँखें और तेज हो उठीं,

लते अंगारों की भट्ठी को हवा लगी। उसने कहा—आपने सुना नहीं ?
हण चुका दिया है। अब विषहरी का हुक्म आएगा। लगता है, विष-
ने विधना को लेखा लगाकर दिखाया है, उनसे पूछा है, कन्या ने कर्ज
चुका दिया, अब मैं उसे लौट आने का हुक्म दे सकती हूँ या नहीं ?
धाता की राय लिए बिना तो वह हुक्म नहीं देंगी।

शिवराम ने कहा—देखूं, जरा हाथ तो देखूं तेरा।

—हाथ ? क्या देखिएगा ?

—मैं हाथ देखकर हाल बता सकता हूँ न !

—बता सकते हैं न ? तो देखिए।

उसने हथेली पसार दी। हाथ देखने के बहाने उसकी कलाई हाथ में
लेकर शिवराम उसकी नाड़ी देखने लगे। खूब ध्यान से उन्होंने नाड़ी की
गति और उसकी प्रकृति के निर्णय की चेष्टा की।

—क्या देख रहे हैं धन्वंतरि ठाकुर ! मुक्ति मिलेगी अब ?

उन्होंने जवाब नहीं दिया। मौका ही न था। नाड़ी की गति, प्रकृति,
स्थिति—अजीब ! उपवास से कमजोर, लेकिन वायु के प्रकोप से वह पगह
तुड़ाए घोड़े की चाल से भाग रही थी। कभी-कभी डगमग। मुँह की ओ
देखा। आँखों के सफेद हिस्से को घेरकर शिराएँ लाल हो उठी हैं। नाड़ी
उन्होंने मूर्छा रोग की मौजूदगी पायी।

अभागिन पिंगला !—उन्होंने एक लम्बा निश्वास छोड़ा।

—धन्वंतरि ! क्या देखा, कहिये ?—व्यग्र होकर वह शिवरा
ओर ताकने लगी।—इस तरह से निश्वास क्यों फेंका आपने ?

शिवराम सोच रहे थे, अभागिन कभी पागल हो जायगी, उ
नागिनी कन्या का आविर्भाव होगा, देवता के अपवाद से अपनों द्वा
राई हुई इस पगली की दुर्दशा का क्या अन्त रहेगा ? और फिर
तो सहज ही नहीं होगी। यही तो उमर है इसकी ! कितनी होगी
ज्यादा तो पच्चीस ! काफी लम्बा जीवन पड़ा है। खासकर
आरण्यक जीवन !

पिंगला ने फिर पूछा—मुक्ति नहीं मिलेगी ? नहीं लिखा है

शिवराम ने कहा—उसमें देर है, पिंगला।

—देर है ?

—हाँ। —कुछ सोचकर बोले—माँ तो तुझे लिवा जाना चाहती है, मगर लिवा कैसे जाएँगी ! तेरे शरीर मे वायु का प्रकोप जो हुआ है। रोग लेकर कोई देवलोक में जा सकता है ?

पिंगला एकटक कविराज को देखती हुई बैठी रही। मन ही मन वह बातों को मिलाकर देखने लगी। कुछ क्षण के बाद उसकी आँखों से आँसू की धारा बह निकली। उसके बाद 'माँ' कहकर एक करुण पुकार के साथ वह धरती पर लुढ़क पड़ी। एक असह्य पीड़ा का प्रभाव फूट उठने लगा। धरती की माटी मानो उसको खोती जा रही है, दोनों हाथों से वह माटी को कसकर पकड़ना चाहती है, भय के मारे मिट्टी पर मुह रगड़ती है, जैसे धरती की छाती मे, माँ वसुधरा के कलेजे मे मुह छिपाना चाह रही हो।

सँपेरे शोर कर उठे।

—ला, धूप ले आ। बाजा बजा।

शिवराम ने कहा—रुको। रुक जाओ। कन्या को बीमारी हुई है।

भादो तुरत गरम हो उठा—क्या कहा ? जो आप नही जानते, वह बात मत बोलिए, कविराज। खबरदार! उस पर माँ आयी हैं। आप जाइए। अभी कन्या को छुइए मत। जाइए।

गगाराम ने चुप बैठे सब देखा। कविराज से नजर मिलते ही वह जरा हँसा। शिवराम हैरान रह गए, गगाराम सभी सँपेरों से स्वतत्र, अलग है। इन बातो का कोई भी प्रभाव उसे छू नही गया।

शिवराम वहाँ से उठ आए।

शिवराम हिजल बिल के किनारे खडे थे।

भादो ने उन्हे भरोसा दिया। कहा—कन्या कह जरूर रही है कि कालनागिनें नागलोक चली गई—अपनी माँ के घर। मगर यह बढाकर कह रही है। और कहती है, देना चुक गया, माँ का आदेश आएगा, तो हम भी माँ से कह रहे हैं कि हमारी वही पुरानी जात लौटा दो, वही मान दो, लौटा दो हमे हमारा सताली पहाड का वास। विधाता का हिसाब बडा बारीक हिसाब होता है कविराज, विधाता विषहरी को कैसे कहे कि हाँ,

मिट गया ! लेकिन हाँ, यह हो सकता है कि विपहरी ने विधाता
ा की हो।
राम चुपचाप सुनते रहे। इन बातों का क्या उत्तर दें वे ?
ा का आदमी जंगल की भापा समझ सकता है। उनके विश्वास,
कार के बारे में धूर्जटी कविराज के शिष्य को अविश्वास नहीं है।
भ्रम दुनिया में है। पिंगला की हालत के बारे में उन सबको भ्रम
, इसमें उन्हें जरा भी संदेह नहीं। जंगल का आदमी पत्तों की खड़-
ट सुनता है. उनके सिरहन से आँधी-पानी की संभावना समझ लेता
किन पत्तों की आड़ से किसी के बोलने पर वह उसे दैववाणी भी
ही समझ लेता है।

शिवराम ने हृदय में पीड़ा महसूस की। शवला से अंतरंगता के नाते
के बाद की नागिनी कन्या भी उनकी स्नेह-भाजन हो उठी थी। शवला
एक बात उनके मन में अक्षय होकर बैठ गई है। उनसे वहन का नाता
ोड़ते वक्त उसने मनसा की कथा से वनिया की बेटी की कहानी कहते
हुए कहा था, नर-नाग साथ नहीं रहते। नर नाग का मित्र नहीं, नाग नर
का मित्र नहीं। लेकिन वनिया की बेटी ने भाई कहकर नाग के दो बच्चों
को प्यार किया था। नागों ने भी उसे वहन कहा था और सदा उसके सुख-
दुःख में हिस्सा बँटाया था। हँसकर शवला ने कहा था, इस जुग में तुम भाई
हो, मैं वहन। तुम छोटे धन्वतरि, मैं सँपेरे कुल की सर्वनाशी नागिनी
कन्या। कालनागिन कन्या रूप में है, नहीं तो देखते इसके फन की फुफ-
कार ! सुनते इसकी गरज ! हूँ !—उसने कटाक्ष से शिवराम को देखा था।
शिवराम जरा हँसे। अजीव है ये। जगल और नगर की रीत तो एक
नहीं है।

भाई-बहन, बाप-बेटी, कोई भी नाता हो, नर और नारी के संबंध क
वही आदिम व्याख्या है। यहां अपनी सामाजिक शृंखला को मानते हु
भी असंकोच भाव से प्रकाशित होता है। हास-परिहास से, सरस कौतुक
नाता जोड़े हुए भाई के प्रति शवला ने आँख मारी थी—इसमें ता
क्या है ?

पिंगला भी यही कहती। शिवराम भी उसे स्नेह करते हैं। इसी

इस तेजस्वी, आवेगमयी युवती को ऐसी कष्टकर पीड़ा से पीड़ित देख मन ही मन दुखी हुए बिना उनसे न रहा गया। भाद्री ने उनको भरोसा दिया है कि वह उन्हें असली काली नागिन जरूर परख देगा। नहीं तो शिवराम लौट जाते। हंगरमुखी में अपनी नाव बाँधे वे उसी का इंतजार कर रहे थे।

जेठ की शुरुआत। तीसरा पहर। हिजल का काला पानी धीरे-धीरे मानो एक रहस्य से घना होने लगा—काला पानी क्रमशः और काला होने लगा। पश्चिम क्षितिज पर सूरज एक काले मेघ में ढँक गया। पश्चिम में छाया पूरब को भाग रही थी।—हिजल बिल को ढँकती हुई, घासवन की कोमल हरियाली पर गाढापन मलते हुए, गंगा के चौर के बालू की जलन जुड़ाते हुए, गंगा की शांत धारा में नहाकर उस पार खेत और गाँव-वन की शोभा का माथा पार करके भाग रही थी। शिवराम के कल्पना-नेत्र में वह छाया दूर, दूरांतर में फैलने लगी, देश से देशांतर में।

छाया उतरी, परंतु अभी उसमें ठंडक नहीं आयी। धूप का तीखापन जाता रहा था, लेकिन उत्ताप गहरा हो उठा था। माटी के नीचे अब गर्मी असह्य हो उठेगी। हिजल के सजल किनारे अब साँपों से भर उठेंगे। साँप बाहर निकल पड़ेंगे। शिवराम हिजल के जलज फूलों की शोभा को देर तक देखते रहे। चारों ओर हरियाली का घेरा, बीच में काला पानी। कलमी-कुमुद-कमलदाम की हरियाली का समारोह नवीनता के कोमल लावण्य से मरकत जैसा नयनाभिराम लग रहा था। इस समारोह के बीच में हिजल का पानी जैसे चिकना और सुन्दर एक नीलम हो। इसी शोभा में वे तन्मय हो गए थे कि किसी कीड़े के काट खाने से विचलित होकर उन्होंने नजर फेरी। देखा, उनके पैरों के पास ही लाल चींटों की कतार—पास ही के एक गड्ढे से वे खिलबिलाकर निकले आ रहे थे।

हँसकर वे जरा हटकर खड़े हो गए। इनके भी जहर है। मनुष्य का जहर शायद देहकोष से निर्वासित होकर मनोकोष में जा छिपा है। आदमी साँप से भी कुटिल है।

—धन्वंतरि भैया !

चौंककर शिवराम ने पलटकर देखा। कंधे पर अँगोछा रखे घाट पर

पिंगला खड़ी है। बहुत ही थकी-सी हँसी की एक स्निग्ध रेखा से उसका सूखा-सा चेहरा कुछ दमक उठा है। उसने कोमल मीठे गले से कहा—माँ के दरबार की शोभा देख रहे हैं! बातें उसने इस ढंग से कहीं, गोया शिवराम उसके कोई कम उमर के स्नेह-भाजन हों। वे इस मनोहारी साज से मुग्ध हों और इन सारे कुछ की वह अधिकारणी हो; उनको लुभाते, मुग्ध होते देखकर पूछ रही हो जैसे—देख रहे हो यह अनोखी शोभा? तुम्हें अच्छी लगी? क्या लोगे, कहो तो?

शिवराम ने कहा—हाँ। हिजल इस बार बड़े अच्छे साज से सजा है। तुम नहाओगी?

—हाँ, नहाऊँगी। मैं अपने ही विष से जल मरी धन्वंतरि! जितनी जलन बदन में, उतनी ही जलन मन और माथे में। जानते हो, शवला कह रही थी, नागिनी कन्या झूठ है। कन्या भी नागिन होती है कहीं! कहाँ, कुछ समझा तो नहीं। लेकिन···

जरा चुप रहकर उसने गरदन हिलाई। कुछ को अस्वीकार किया। अस्वीकार की शवला की बातें। धीमे से बोली—मैंने जो समझा, जी से समझा। आँखें मूँदते ही मैं देखती हूँ, मेरा आत्माराम फन फैलाए झूम रहा है—झूम रहा है, झूम रहा है। जीभ लपलपा रही है, आँखें धुक-धुक जल रही हैं और वह गरज रहा है।

चिकित्सक की गंभीरता से गंभीर होकर शिवराम ने कहा—तुम्हारी तबीयत खराब है, पिंगला। तुम अपने शरीर का थोड़ा जतन करो। दवा खाओ। दोनों शाम नहाती हो, ठीक ही करती हो, लेकिन यों रूखे न नहा-कर सिर में थोड़ा तेल डाला करो। तुमने अभी कहा न, सिर में, बदन में जलन है। तेल लगाने से जलन जाती रहेगी।

टक लगाकर पिंगला ने शिवराम की तरफ ताका। उसकी आँखें प्रखर हो उठीं। शिवराम थोड़ा शंकित हुए। शायद हो कि अब पगली चीख उठे। लेकिन पिंगला ने वह सब कुछ नहीं किया। अचानक उसने ऊपर की ओर नजर उठाई और घने मेघों को देखने लगी। कुछ सोचने लगी मानो।

काले मेघ जमकर फूल रहे थे। उसी की छाया पिंगला के चेहरे पर

पड़ी। बहुत धीमे बहने लगी बयार। बिल के किनारे की जलज घासों की टेढ़ी भुकने वाली फुनगियाँ हिलने लगी। मंताली चौर के घुटनेभर ऊँचे घासवन में मर्मर होने लगा, भाऊ की डालों में शोर जगा, हिजल के काले पानी में कंपन फैला, पिंगला के तेलविहीन रूखे बाल काँपने लगे, उड़ने लगे। पिंगला एकटक मेघों को देखती रही, धन्वंतरि भैया की बातों को मन में परखती रही। और किसी ने यह बात कही होती, तो वह अपमान मानती, नागिन-सी फुफकार उठती। मगर धन्वंतरि भैया तो ऐसे-वैसे आदमी नहीं। वह तो नब्ज पकड़कर रोग का पता लगा लेते है, शरीर में कहाँ कौन नाग या नागिन पैठकर बैठी है, हाथ चलाकर सँपेरे जैसे साँपों का पता कर लेते हैं, ये वैसे ही नाड़ी थामकर जान जाते हैं। पर उसने गरदन हिलाई।—वह तो नहीं है।

शिवराम के जी में आया कि कहे—अंत तक तुम पागल हो जाओगी, पिंगला। अरी, उससे शोचनीय दशा आदमी की दूसरी नहीं होती। मैं यह नहीं कहता कि तुम लोगों का विश्वास गलत है। लेकिन देवता हो चाहे यक्ष-रक्ष-नाग-किन्नर ही हो, मनुष्य होकर पैदा होने पर वह मनुष्य के सिवा कुछ भी नहीं। तुम नागिनी भी हो, तो भी मनुष्य ही हो। तुम्हारा शरीर मनुष्य का है, तुमको विष के दाँत नहीं, विष होगा तो कलेजे में है। यह सब भूल जाओ। इन्हीं सब चिन्ताओं से तुम पागल हो जाओगी।

लेकिन उससे कहने का भरोसा नहीं हुआ।

पिंगला तब भी गरदन हिला रही थी। गरदन हिलाकर ही बोली—नहीं धन्वंतरि भैया, वह नहीं है। तुमसे भूल हो रही है। मेरे अंदर की नागिन जाग रही है—विष उगल रही है और वही विष फिर निगल रही है। तो मैं तुमसे कहूँ, सुनो। यह बात मैंने किसी से भी नहीं कही है। बहुत गुप्त बात है यह। स्त्री की लाज की बात है। रात को मुझे नींद नहीं आती। सँपेरों के टोले में नींद उतर आती है और मेरे बदन से चंपा की सुगंध निकलती है। उस सुगंध से मैं खुद ही पागल हो जाती हूँ। लगता है, दरवाजा खोलकर चौर के घासवन में भाग जाऊँ, नहीं तो हिजल के पानी में कूद पड़ूँ। और, जी भरकर काले कन्हैया को पुकारूँ। किसन कन्हैया न आया तो आए मेरा नाग-साजन, भूमता हुआ, फन नचाता हुआ

आए !

पिंगला का गला धीमा हो आया, आँखें निष्पलक हो उठीं और उनमें शंकापूर्ण स्वप्न देखने की घबराई हुई नजर फट उठी। बोली—आता है, वह आता है धन्वंतरि भैया ! नाग आता है। तुमसे जब अपने मन की गोपन बात कहने को मैंने मुंह खोला है, तो कुछ नहीं छिपाऊँगी। सुनो।

चार

शिवराम ने पिंगला से सुनी हुई कहानी सुनाई।

फागुन के महीने में जो जमींदार के यहाँ साँप पकड़ा, उसके बाद। चैत का महीना। पिंगला का भादो मामा तो वहाँ से दूसरा ही एक आदमी होकर लौटा। लेकिन गंगाराम वही गंगाराम रहा। बाबुओं ने कन्या को जी खोलकर विदाई दी। दस रुपए नकद, लाल कोर की नई साड़ी। मालकिन ने अपने कानों के करनफूल खोलकर दे दिए।

नागो ठाकुर ने प्रसादी कारण दिया, और दी अष्टधातु की एक अँगूठी। अपनी कानी उँगली से खोलकर पिंगला को देते हुए कहा—ले, नागो ठाकुर के हाथ की अँगूठी। मेरे पास होती, तो मैं तुझे हीरे की अँगूठी देता। यह अँगूठी मैंने कामरूप में माँ कामच्छा के मंदिर में शोध कर बनाई थी। इसे पहने रहने से मन ही मन जो चाहेगी, वही मिलेगा।

राढ़ में उस जमाने में टाकू मंडल और इस जमाने में नागो ठाकुर—ये दोनों बड़े उस्ताद थे। टाकू मंडल कामरूप का डाकिनी-सिद्ध आदमी था। वह अपने लड़के को टुकड़ा-टुकड़ा काटकर टोकरी से ढँक देता और नाम लेकर उसे पुकारता। लड़का टोकरी के अंदर से जिंदा निकल आता राढ़ के जादूगर आज भी जादू दिखाते समय टाकू मंडल की दुहाई देकर यह खेल दिखाते हैं—दुहाई गुरु की, दुहाई टाकू मंडल की।

नागो ठाकुर हाल का उस्ताद है। डाकिनी-मंत्र जानता है, मगर उस मंत्र की उसने साधना नहीं की। उसने साधना भैरवी-मंत्र की की है। लो

यही कहते हैं। लेकिन डाकिनी-विद्या, भूत-विद्या, सांप-विद्या—नागो ठाकुर जानता सभी है। उसे जात नहीं, धर्म नहीं, किसी बात से अरुचि नहीं। सब जात के घर जाता है, सब कुछ खाता है। दुनिया में कुछ भी नहीं मानता, डरता भी नहीं किसी से। खासा लम्बा आदमी, गोरा रंग, लम्बे रूखे बाल, मोटी नाक, बडी-बडी आँखें —ठठाकर हँसता है, उस हँसी से आदमी तो आदमी पेड़-पौधे तक सिहर उठते हैं। गंगाराम डाकिनी-मंत्र जानता है, इसलिए नागो ठाकुर ने उसके साथ एक हाथ खेलना चाहा था। गंगाराम नहीं खेला। बोला—गुरु की मनाही है कि ब्राह्मण के साथ, सन्यासी के साथ मत खेलना।

नागो ठाकुर ने जोरों से हँसकर कहा था—अरे, मेरी कोई जात नहीं। ले चल अपने गाँव, वहीं रहूँगा, तुम लोगों का पकाया खाऊँगा और साधना करूँगा। ऐसी ही एक कन्या देना, उसे भैरवी बनाऊँगा।

चैत आधा जा चुका था।

हिजल के चौर की जो घास जलाई गई थी, उसके कालिमा लिए रंग पर हरियाली की छाप पडी थी। पेड-पेड पर ललाई लिए हरे पत्ते उग आए थे। बिल के पानी पर कमल के पत्ते नजर आने लगे थे। कोयल, पपीहे आदि के गले की उदासी जाती रही, वे मतवाले-से होकर बोलने लगे थे। उधर हिजल के दक्खिन-पच्छिम की बेहार तिल के बैंगनी फूलों से रूप का सरोवर हो उठा था। सँपेरे टोले में लाल-पीले रंग की लहर लहराई थी। शादी-ब्याह के दिन। सभी घर में लडके-लडकियाँ हैं। सबके यहाँ ब्याह की धूम।

हवा में फूलों की गंध। बिल के चारों तरफ अष्टावक्र मुनि-से टेढ़े-बुबड़े पौधों पर सादे फूलों के गुच्छे भर गए थे। सारी बेहार में बबूल की फुनगियों पर टोप-से हरे पत्तों की झलक।

उस रोज लोटन की लडकी और गोकुल का लडका—हीरा और नवीन का ब्याह था। हीरा तीन साल की, नवीन की उम्र दस साल।

...वाएँ हल्दी लगा रही थीं, रंग खेल रही थीं, उलू-लू-लू कर रही थीं। ...ल की बस्ती के बजनिए ढोल बजा रहे थे। मर्द सुरती पीने में मस्त, ...राब की बू ने कौवे-मैनों ने बदूरकर टोले के पेड़ों की डालों को भर दिया ...या। लगभग दोपहर का समय। बस्ती में हलचल-सी हुई।

—नागो ठाकुर आए ! नागो ठाकुर !

पिंगला अपने ओसारे पर अकेली बैठी थी।

वह चौंक उठी। कलेजे के भीतर कैसी तो धड़कन हुई। याद आया नागो ठाकुर का वह मोटा और जोरदार गला, उनकी वह मूर्ति—लम्बा आदमी, गोरा रंग, मोटी नाक, बड़ी-बड़ी आँखें, चौड़ी छाती, गले में रुद्राक्ष की माला और जनेऊ। वही ह-हा-ह-हा हँसी। गगनभेरी चिड़ियों की बोली से आकाश में नगाड़ा बजता है, नागो ठाकुर की हँसी से कलेजे में नगाड़ा बजता है।

नागो ठाकुर आए ! नागो ठाकुर !

जैसा अजीब नागो ठाकुर, वैसा ही अजीब उनका आना। एक ... की पीठ पर सवार होकर बस्ती में दाखिल हुआ। साथ में बथान का ... ग्वाला। ठाकुर के कंधों पर विशाल एक झोला। भैंस पर से उत... ह-हा-ह-हा हँसते हुए बोला—रास्ते में ग्वालों की भैंस मिल गई, उसी ... चढ़कर आ गया। लो भई बाप, अपनी भैंस ले लो।

उसके बाद बोला—बैठूं कहाँ ? बैठने को कुछ दे।

भादो लपककर एक चौकी ले आया—लीजिए बाबा, बैठिए।

नागो ठाकुर बैठा। कहा—भात खाऊँगा। कन्या, तेरे ही हाथ का ...

हाथ का चिमटा उसने माटी में गाड़ दिया। पिंगला आँखें ... अजीब तरह से उसे ताकती रही। उस नजर में जितना आतंक था ... ही आश्चर्य। पहनावे में लाल कपड़ा, गोरा रंग, लम्बा-तगड़ा ... आयत आँखें—नागो ठाकुर जैसे दँतैल हाथी हो। नहीं, जैसे राज... बोलता था और डोलता जाता था, साथ ही साथ डोलती ... की माला। कपाल पर झक-झक सिंदूर का टीका, झकमक ल... उसके भारी गले की आवाज से पिंगला का कलेजा काँप रहा था...

भादो ने कहा—कन्या, परनाम करो ! पिंगला !

—एँ ?—पिंगला ने सवाल किया। भादो की बात उसके कानों में पहुँची ही नहीं। वह अपने मन की गहराई में डूबी हुई थी।

भादो ने फिर कहा—ठाकुर को परनाम करो।

ठाकुर ने अपने दोनों पाँव बढ़ाकर कहा—प्रणाम कर। तेरे ही लिए आया। विषहरी मैया का हुकुम लाया हूँ। तेरे छुटकारे का हुकुम है।

—छुटकारे का हुकुम ?

पिंगला चौंक पड़ी। चौंक पड़े सताली के लोग।

नागो ठाकुर ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए सिर हिलाकर कहा—अजी, नागो ठाकुर साग से मछली ढँकना नहीं जानता। झूठ नहीं बोलता। इस कन्या को देखकर मेरे मन ने कहा, इसके बिना जीवन ही बेकार है। मेरी छाती जलने लगी। लेकिन कन्या जब विषहरी के आदेश से वचनबद्ध होकर सताली में है, तो उसे पाऊँ कैसे ? आखिर मैं माँ के सामने धरना देने के लिए चंपानगर गया। रास्ते में एक इस्लामी सँपेरे और सँपेरिन से मुलाकात हो गई। इस्लामी सँपेरिन हुई तो क्या, साक्षात विषहरी की अंश थी। उसी ने मुझसे कहा, कन्या का देना अब चुक गया है, उसकी अब छुट्टी। यह नाग ले जाओ, यही दिखाना। कहना, यही नाग विषहरी का संदेसा लाया है। कन्या की मुक्ति, छुटकारा···

उस विशाल झोले से नागो ठाकुर ने एक बहुत बड़ा पिटारा निकाला। पहाड़ी अजगर साँप रखने जैसा बड़ा पिटारा। पिटारे को खोल दिया। एक ही क्षण में फोंस करके नाग खड़ा हो गया। नाग नहीं, महानाग। रात जैसा काला। अपना विशाल फन फैलाकर वह खड़ा हो गया—इतना ऊँचा कि झपटे तो मुड़ आदमी की छाती पर पहुँच जाय; आदमी बैठा रहे तो माथे पर पहुँचे। छः हाथ लंबा काला गेहूँअन। काले मटर जैसी पलकहीन आँखें, भयंकर दो चीरी हुई जीभ।

साँप के खड़े होते ही नागो ठाकुर चिल्ला उठा, साँप को ही चिल्लाकर सावधान किया, या कि बहुत ज्यादा उत्तेजना में नाग को लड़ाई के लिए ललकारा। चिल्लाया—ए···इ !

साँप झपटा। साधारण गेहूँअन में इसके झपट्टे में फर्क है—बहुत फर्क। वे गेहूँअन मुँह से झपट्टा मारते हैं, यह छाती से मारता है। ढाई-तीन हाथ

तक खड़ी उसकी देह पछाड़ खाकर गिर रही थी। किसी आदमी पर यों गिरने का मौका मिले तो देह के भार और चोट से वह उसे गिरा देगा। छाती पर वार हो तो आदमी चित्त जा रहेगा। वैसे में यह उसकी छाती पर सवार हो जायेगा, झूमेगा और काटेगा। इस नाग को देखकर संताली के सँपेरे भी जरा देर के लिए घबरा गए।

पिंगला चीखकर दौड़ी—ठाकुर! उसके हाथ भी तैयार। वह नाग का टिटुआ पकड़ लेगी। ठाकुर की छाती पर सारा शरीर लिए झपटने के पहले ही वह उसे पकड़ेगी।

नागो ठाकुर लेकिन राढ़ का नागेश्वर ठाकुर था! बेहद साहस, बहुत ज्यादा ताकत। उसने लोहे के चिमटे को तब तक हाथ में उठा लिया था। उसने साँप का गला दबाकर उसे महज रोक ही नहीं दिया, साँप को उलट कर फेंक दिया। और फेंकने के साथ ही वह ठठाकर हँस पड़ा।

उधर भीड़ ठेलकर गंगाराम सामने आया। आते ही वह ठिठक गया। शंका भरे स्वर में बोल उठा—शंखचूड़! यह तुमने कहाँ पाया, ठाकुर? मैंने देखा है, जिस देश में कमच्छा माई का थान है, यह वहीं का नाग है। बाप रे!

नागो ठाकुर ने कहा--सो मैं नहीं जानता। मैं यह जानता हूँ कि यह नागलोक का नाग है। विषहरी का संदेसा लेकर आया है। नागिनी को छुटकारा मिला, उसने अपना कर्ज चुका दिया है। यह मुझे उस सँपेरिन ने कहा, जो विषहरी की अंश है। वह सिद्ध योगन है। माँ से उसकी बात हुई है। उसके साथ जो सँपेरा था, उसने मुझसे कहा, तुम इसे झूठ मत समझना ठाकुर। यह कोई मामूली औरत नहीं है। गंगा मैया की धारा में बहकर आयी है, मेरी खुशकिस्मती कहो, मेरी नाव में आकर अटकी—मैंने इसे उठाया। सेवा-जतन से इसे होश में लाया। होश में आते ही सबसे पहले इसने क्या कहा, पता है? कहा, विषहरी मैया, यह तुमने क्या किया? तुम्हारे मन में यही था? यह साक्षात नागलोक की कन्या है। माँ विषहरी से इसकी बातें होती हैं।

नागो ठाकुर ने कहा—मेरा घर राढ़ में है, यह सुनकर उसने मुझसे कहा, तुम्हारा घर राढ़ में है, फिर तो तुम हिजल बिल जानते होगे! माँ-

मनसा का जहाँ आसन है, वही हिजल ! कह रहे हो कि मैं विष-विद्या जानता हूँ। कभी गए हो वहाँ ? संताली जानते हो ? वहाँ के विष-वैदों को जानते हो ? मैं तो अवाक् रह गया। पूछा, तुम कैसे जानती हो ? उसकी आँखों से आँसू की धारा बह निकली। बोली—नागलोक की कालनागिन के गर्भ से पैदा होने वाली कन्याओं में से एक-एक जनम में एक-एक को वहाँ ऋण चुकाने के लिए जन्म जो लेना पड़ता है ! एक जनम में मैं भी वहाँ जनमी थी। बड़ा दुःख, बड़ी यातना, बड़ी वंचना, बड़ी पीड़ा पाने के बाद जनम के अंत में माई के थान में गई। कहा, मुझे मुक्ति दो, और दुःख-ताप मुझे मत दो। माँ ने मुझे फिर नरलोक में भेज दिया। कहा, तो तू जाकर वहीं तपस्या कर। मैंने वही तपस्या की, ठाकुर। माँ के विधान को नहीं मान सकी, उसी की सजा मिली कि इस्लामी सँपेरे की नाव पर आ गई। उसी का अन्न खाया। मगर आदमी अच्छा है। बहुत ही भला। इसीलिए तो उसी के साथ गिरस्ती बसाई। गिरस्ती क्या खाक ! माँ-मनसा के थान में घूमा करती हूँ, उनकी पूजा करती हूँ और हुकुम माँगती हूँ। कहती हूँ, मैया मोरी, छुटकारा दो। मेरा देना वसूल करो। मुझसे उसने पूछा, मगर तुम ऐसे फटेहाल बाउल की तरह भटके क्यों फिरते हो, ठाकुर ? ब्राह्मण के लड़के हो। चाहिए क्या तुम्हें ? मैंने उससे कहा, कन्या, तुम्हारी तरह, ठीक तुम्हारी ही जैसी एक कन्या है, वह भी नागलोक की कन्या है, नरलोक में पैदा हुई है, उसके लिए मुझे हर कुछ से अरुचि हो गई है, वह न मिलेगी, तो मैं मर जाऊँगा। उसी के लिए मैं यों भटका फिरता हूँ। मैं भूल ही नहीं पाता हूँ उस काली लड़की की गेहुँअन-सी दो भुजाएँ। आह, वह रूप मैं भूल नहीं पाता ! वह उसी संताली गाँव की नागिनी कन्या है—नाम है पिंगला। एक महीना हो गया, घर से निकला हूँ। चंपानगर जाऊँगा। रांगामाटी, माँ विषहरी के दरबार में धरना दूँगा। या तो मैया मुझे वह कन्या दे, या मेरा जीवन ले ले। ले लें जीवन। वह सँपेरिन पलकहीन आँखों देखती रही—मैंने देखा, उसकी नजर आकाश-वनाम, पेड़-पौधा, नदी-पहाड़ के पार चली जा रही थी। गुरु का नाम लेकर कहता हूँ यह मैंने देखा। नजर चली गई—अँधेरी रात में जैसे चलती है, चली गई। नहीं, रोशनी पहाड़, पेड़-पौधों से बाधा पाती है, वह नजर यह

। वह चलती है—नजर चली। मैं अवाक देखता रहा। वह अचानक
ोल उठी, पिंगला, पिंगला, पिंगला कन्या। संताली गाँव की विषहरी की
ानी, नागिनी कन्या। कालनागिन-सी काली लंबी देह, खिंची हुई आँखें,
ीली नाक, मेघ-काजल पूरी पीठ पर छितराए बाल, उसके मन में बड़ी
ड़ा है, बड़ी जलन है जी की। रोती है बेचारी! रोती है। कलेजे में
ागी हैं चंपा की कलियाँ, पर खिल नहीं पाती। कलेजे की जलन से ही झड़
ड़ती है।

संताली के मारे ही सँपेरे अभिभूत होकर नागो ठाकुर की अलौकिक
कहानी सुन रहे थे। शंका से सन्न हो गए थे वे। बड़े पिटारे के अंदर बीच-
बीच में वह महानाग फुफकार रहा था। और जमी भीड़ के श्वास-निश्वास
की आवाज सुनाई पड़ रही थी। ब्याह के बाजे थम गए थे। भादों की
आँखें बड़ी-बड़ी हो गई थीं, जल रही थीं। गंगाराम की दृष्टि तसवीर-सी
हो गई थी। सँपेरों की स्त्रियाँ अविश्वासी हैं, कलमुही। मुंह में कालिख
पोतकर उन्हें खुशी होती है! सँपेरों के टोलों में गुपा खेल बहुत होते हैं;
उनका कानून बहुत है; कोई स्त्री साँझ के बाद लौटे, तो उसे घर में नहीं
घुसने दिया जाता। मियार दोलने के बाद सँपेरे उसे घर में नहीं आने देते
सँपेरिन का जान-मान जाना है। इन मारे पापों का खंडन एक उसी वि
हरी की कन्या के तप से होता है, उसी के पुण्य से। नागो ठाकुर की वा
में अगर देवी के आदेश की प्रतिध्वनि नहीं होती तो वे लोग बरछे के
से नागो ठाकुर के शरीर को छलनी बना देते। यह भी महा आश्चर्य
नागो ठाकुर सब कुछ जानता है, मगर उसे कोई डर नहीं। डरे भी
यह कुछ उसकी तो नहीं, देवता की बात है। विषहरी की एक कन्
बात है। वह शरीर धरकर नागलोक से आयी है, जीवनभर उ
किया है—जिस तपस्विनी, जोगन कन्या से माँ विषहरी की बातें
उसी की बात वह कह रहा है।

अचरज, अनोखे भावों से पिंगला बुत बन गई। वह अपलक
ठाकुर को देखती रही। बड़ी-बड़ी आँखें, मोटी नाक, गोरा बदन
पर सिंदूर का टीका, माथे पर रूखे-काले-बड़े-बड़े बाल, मूंछ-दाढ़
भारी गले की आवाज गम-गम करती है। कह रहा है, पिंगल

के चपा गाछ मे चंपा की कलियाँ भरी हुई हैं, लेकिन भड जाती हैं, कलेजे की जलन से ही सब भड़ जाती हैं। एक भी कभी नही खिलती।

पिंगला अचानक माटी पर गिर पडी—माटी के खिलौने जैसी।

अपनी गोरी सुडौल वाँहों मे नागो ठाकुर ने उसे उठा लेना चाहा। जिन नागो ठाकुर की आवाज सिंगा बजने जैसी लगती है, उसी की आवाज शहनाई जैसी हो उठी। उसने पुकारा—पिंगला ! पिंगला !

इस बार गगाराम की गरज ने उसकी आवाज को ढँक दिया। वह चिल्लाया—खबरदार! और तुरत वह कूदकर नागो ठाकुर तथा पिंगला के बीच मे जा रहा। नागो ठाकुर के बढाये दोनों हाथों को उसने धर दवाया। आँखें उसकी लहक उठी। गगाराम डोमन करैत है, वह फन नही फैलाता, उसकी आँखें स्थिर और कुटिल हैं। आज लेकिन गगाराम गेहुँअन हो उठा।

उसने कहा—खबरदार ठाकुर ! कन्या का वदन मत छुओ। तुम ब्राह्मण हो, चाहे देवता ही हो, सताली के विष-वैदों की विषहरी-कन्या का वदन छूने का तुम्हे हुकुम नही है।

भादो ने भी गरजकर हुँकारी दी—हूँ। यानी सही है। यही वात उसकी भी है, यही सारे सताली के सँपेरों की है।

भादो के साथ साथ सारे ही सँपेरों ने हामी भरी।

नागो ठाकुर सीधा-तना आदमी। उसकी छाती का किवाड़ पत्थर के बने किवाड़-सा सख्त है। वह और भी सीधा तन गया। बडी-बडी आँखों मे नजर दहकने लगी। वह चीख उठा, जैसे सिंगा बज उठा—विषहरी का हुकुम है, माँ-कामच्छा का आदेश !

गगाराम ने कहा—झूठ !

भादो ने कहा—सबूत क्या है ?

नागो ठाकुर ने हाथ छुडाने की कोशिश करते हुए कहा—हाथ छोड दे।

—नही।

नागो ठाकुर मानो दतैल हाथी हो। एक झटके मे लोहे की जजीर के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। उसके एक झटके से गगाराम के दोनो हाथ मुरड गए और मरोड की पीडा से उसकी मुट्ठी तुरत खुल गई। नागो ठाकुर हा-हा करके हँस पडा। उसे कोई डर नही। उसके चारों तरफ हिजल के घा

और झाऊ वन के चीते-से सँपेरे खड़े थे, उन्हीं के बीच खड़े होकर वह ह-हा-ह-हा हँस पड़ा।

अचानक ही उसकी छाती पर मुगदर की मार जैसा एक मुक्का पड़ा। गंगाराम ने अचक ही मार दिया। चीखकर नागो ठाकुर लड़खड़ाने लगा, लड़खड़ाने-लड़खड़ाने वह कटे पेड़ की नाई गिर पड़ा।

गंगाराम ने कहा—बाँध साले को। बाँधकर रख दे। उसके बाद···

भादो ने डरते हुए कहा—नहीं-नहीं। बराम्हन है। गंगाराम—

—ठेंगा है! इस साले की कोई जात नहीं। साला सँपेरिन के साथ घर बसाएगा, इसकी जात का क्या ठिकाना।

—अजी, सिद्ध-पुरुष की जात नहीं होती।

गंगाराम ह-हा-ह-हा हँस पड़ा। बोला—मैंने बहुतेरे सिद्ध पुरुष देखे हैं जी। सब धोखा है, सब धोखा। वह ही-ही ही-ही हँसने लगा।

पाँच

पिंगला अपनी कहानी कहती जा रही थी। हिजल बिल के विषहरी घाट में बैठे थे दोनों—पिंगला और शिवराम। माथे के ऊपर से जोरों की हवा हू-हू करके बहती जा रही थी, मेघ उड़ते जा रहे थे। रह-रहकर नीली बिजली की साँप-सी आँकी-बाँकी रेखा से घुमड़ते मेघों का पेंच। गाज गरज-गरज उठती थी—कड़कड़, कड़कड़।

पिंगला को उसकी कोई परवाह नहीं। उसे विश्वास था, हिजल के आसपास गाज नहीं गिरती। उसे विश्वास था, माँ के चरणों में प्रार्थना करके जब उसने मंत्र पढ़कर बिना कोई हर्ज पहुँचाए मेघ और आँधी को वहाँ से दूर चले जाने को कहा है, तो उन्हें जाना ही पड़ेगा, जाएँगी ही वे।

शिवराम ने कहा—तुम लोगों ने आँधी को ठीक से देखा है भैया? शायद किताब में पढ़ा होगा। मगर हम सब उस युग के आदमी हैं, हमने यह सब पाठ प्रकृति की लीला से लिया है। उस दिन की आँधी सूखी आँधी

थी और ऊपरी आकाश की थी। बहुत-बहुत ऊँचाई पर उनंचास पवन का ताडव चल रहा था, नीचे सिर्फ उसकी आँच लग रही थी। ऐसी आँधी होती है। उस दिन की आँधी ऐसी ही थी। वह आँधी अगर धरती पर उतर-कर बह जाती, तो हिजल के चौर का झाऊ वन और बबूल का वन माटी पर लेट पडता। हिजल का पानी छलककर चौर पर आ जाता, गगा की गोदी की नावें उड जाती। मताली के सँपेरों का कमाल में छाया हुआ छपार घूमते हुए वैसे ही गायब हो जाता, जैसे आँधी आयी नदी में लंगर टूटी नाव हो जाती है। पिंगला और मैं—नागिनी कन्या और धन्वंतरि भैया आसमान में उड जाते।

हँसकर शिवराम ने कहा—वही यदि होता, तो उडते-उडते पिंगला जरूर खिलखिलाकर हँस पडती। कहती, धन्वतरि भैया, माँ मनसा की व्रत-कथा की याद करो। नागलोक के भाइयों ने बनिए की बेटी से कहा था, देह को ककड़-सा समेट लो, रुई-सी हलकी बन जाओ, हमारे कधे पर सवार हो जाओ, दोनों आँखें बंद कर लो। देखना, पल में तुम्हें नागलोक पहुँचाता हूँ। वैसे ही धन्वतरि भैया, आज मेरे कधे पर भार रखो।

पिंगला का वास्तव बोध उस समय एकबारगी लुप्त हो गया था। मस्तिष्क की वायु ने उसे ढँक लिया था। और उस वायु में मेघ जैसा उमड-घुमड रहा था उसका वह अलौकिक विश्वास। उन्माद रोग का यही लक्षण है। कोई मनोवेदना या अधविश्वास आदमी के देह और मन में निरतर एक घुटन की सृष्टि करती है। मनुष्य जिस भावना को जाहिर नहीं कर पाता, वही रुँधी और जाहिर न होने वाली भावना वायु को कुपित किए देती है। उसके बाद जैसा कि प्रकृति का नियम है, कुपित वायु आँधी-सी बहती है। और फिर वह वेदना या विश्वास मेघ की नाईं मस्तिष्क को आच्छन्न करके दुर्योग ले आता है।

पिंगला ने उस दिन भी ऊपर आकाश में मचलती हुई आँधी की तरफ अँगुली दिखाकर हँसते हुए कहा—देख रहे हो धन्वतरि भैया, माँ की महिमा!

शिवराम ने कहा—मुझे एक गहरी ममता थी, शुरू से ही थी। जो ऐसे ही जगली हैं, जिनसे प्रकृति में मानव प्रकृति के शैशव का शुद्ध स्वाद मिलता है, रूप और गध का परिचय मिलता है, उन पर ऐसी ?

...क है। तुम लोग उनके संसर्ग में गए नहीं हो, इसलिए उस ...ा के गाढ़ेपन को नहीं जानते। मेरा सौभाग्य, मैंने पाया है। उस ...स आकर्षण को दूसरे एक आकर्षण ने मिलकर सबलतर, प्रबलतर ...दिया था। मैं पिंगला के आचरण में रोग के उपसर्ग के प्रकट होने की ...तना देख रहा था। सोच रहा था, रोग की ओट में भी जो विचित्र ...स्यमयी छिपी है, वह पिंगला को कैसे ग्रास करेगी? जानते हो न, रोग ...आड़ में कौन-सी रहस्यमयी रहती है?—मौत। इसके सिवा पिंगला ...ी कहानी अच्छी भी लग रही थी।

इतना ही कहकर पिंगला जरा चुप हो गई थी। अचानक ही छाती पर जोरों का आघात लगने से नागो ठाकुर गिर पड़ा—यह दृश्य शिवराम की आँखों में नाचने लगा। इतने-इतने काले लोगों के बीच लाल कपड़ा पहने वह विशालकाय असम साहसी गोरा आदमी गिर पड़ा लड़खड़ाते हुए।

यह कहकर पिंगला चुप हो गई। उदार आँखों से आनमान के घुमड़ते हुए मेघों को देखने लगी। उसके बाद दूर पर एक गाज के गिरने से सचेतन होकर आकाश की तरफ़ उँगली से दिखाती हुई बोली—देखो धन्वंतरि भैया, माँ की महिमा!

—ठाकुर जायेगा। मेरे छुटकारे का हुक्मनामा वही लाएगा—देवत... के दरबार में लेखा-जोखा के बाद कन्या की मुक्ति की रसीद! इस सँपे... कुल के बंधन से छुटकारे का हुकुम लाने गया है वह। मैंने ही उसे उस वि... हाथ-पाँव का बंधन खोलकर छोड़ दिया, नहीं तो वह पापी सरदार सँ... उसे जिंदा न छोड़ता। खून करके उसकी लाश को हंगरमुखी में बहा दे... ठाकुर के दंतैल हाथी-से गोरे शरीर को मगर-घड़ियाल खा जाते।

सिहर उठी पिंगला।

—किस्मत अच्छी थी, माँ-विषहरी ने भादो मामा को उस ... सुमति दी। उसी ने आकर मुझसे कहा, तुम बताओ कन्या, माँ के ... का ध्यान करके कहो कि बराम्हन का लहू संताली की माटी पर प... नहीं। गंगाराम कह रहा है कि वह उसे मारकर हंगरमुखी में डा... कहता है, छोड़ दोगे तो यह ठाकुर सरबनाश कर छोड़ेगा।

वहीं जो पिंगला बेहोश हुई, सो बड़ी देर तक उसे होश न...

होश जब आया तो वह अपने ओसारे पर पड़ी थी, उसके सिरहाने भादो की बेटी, उसकी ममेरी बहन चीती बैठी थी। घर के सामने, जहाँ उसने नागो ठाकुर और सँपेरों को देखा था, वह जगह सूनी पड़ी थी। वहाँ से दूर, ब्याहवाले घर में लोग-बाग बैठे थे। जमवट कर रहे थे। बजनिए भाग गए थे। नागो ठाकुर की छाती पर मुक्का मारा है, वह जब उठेगा तो सताली पर आफत टूट पड़ेगी। बर्रे, मधुमाछी से संताली का आसमान भर जायगा। या कि सताली के कप्ताल से छाए हुए घर जल उठेंगे। या कि आँधी ही आएगी—जो भी हो, कोई बहुत बड़ी मुसीबत आएगी।

चीती ने पिंगला को सारा ब्योरा बताया।

कहा—हाय-हाय दीदी, आदमी तो नहीं, साच्छात महादेव हो जैसे। पत्थर के किवाड़-सी मजबूत छाती, गोरा रंग, वीर आदमी, धड़ाम से गिर पड़ा।

इसी समय भादो दौड़ा-दौड़ा आया। उसी ने पूछा—बराम्हन का लहू सतालो गाँव में गिरेगा कि नहीं गिरेगा!

पिंगला ने कहा—मेरे क्या हो गया, यह मैं तुमसे नहीं कह सकूँगी, धन्वन्तरि भैया! हाँ, नागो ठाकुर की हाँक सुनकर उस जमीदार बाबू के यहाँ जैसा हुआ था, सँपेरों की मरजादा को जाते देख जैसा हुआ था, ठीक वैसा ही हुआ। जी मेरा व्याकुल हो उठा। मन ही मन कलेजा फाड़कर माँ विषहरी को पुकारा। तुमसे कहूँ क्या भैया, मैंने मानो आँखों से माँ का रूप देखा। आकाश में घटाओं के बीच जैसे बिजली चमक जाती है न, औचक ही देखा और औचक ही वह खो गई। धरती जैसे डोल उठी, सामने हिजल बिल उमड़ उठा। पेड़ डोले, पत्ते डोले।

पिंगला फिर मूर्च्छित हो पड़ी थी। अबकी लेकिन पिछली बार की तरह नहीं। अबकी उस पर विषहरी आयी। मूर्च्छा में ही उसका सिर हिलने लगा, माथे के उन झटकों से सिर के रूखे बाल छितरा गए। बुदबुदा उठी—छोड़ दो, सिद्ध पुरुष को तुम लोग छोड़ दो, वीर पुरुष को छोड़ दो। कन्या नहीं रहेगी, नहीं रहेगी। माँ कह रही है, कन्या नहीं रहेगी।

पिंगला ने कहा, उस अजीब अनोखी घड़ी में उसने माँ विषहरी को आँखों देखा था। औचक ही दरस देकर माँ ने अँगुली से क्या तो दिखा दिया।

पिंगला ने मदमत्त सफेद हाथी-से नागो ठाकुर को पड़े देखा। साँस-निश्वास से छाती पर रुद्राक्ष की माला हिल रही थी, हाथ-पाँव बँधे, पर आँखों में निर्भीक दृष्टि। कानों के पास नागो ठाकुर का सिंगे-सा स्वर गूँज उठा—कन्या नहीं रहेगी। मैंने विषहरी का आदेश सुना। मैं इसे लेने आया हूँ।

इधर भादो चीख उठा—माँ जाग रही हैं। कन्या पर देवी आयी हैं। धूप लाओ, बाजा बजाओ। ला, ले आ। धूप की गंध, धुएँ और ढोल की आवाज से संताली में नया त्योहार ही आ गया उस दिन।

—क्या आदेश है मैया, कहो ?

पिंगला की वही एक रट—सिद्ध पुरुष है, छोड़ दो। कन्या नहीं रहेगी, नहीं रहेगी।

कहते-कहते वह निर्जीव-सी हो पड़ी। निढाल हो गई जैसे। बड़ी देर के बाद जगी। उस समय उसके सामने हिंसक आँखें लिए गंगाराम खड़ा था। वह डोमन-करैत की नजर से उसे ताक रहा था।

कुछ देर में लड़खड़ाती हुई वह उठी। पुकारा—ओ भादो मामा !

—जननी।

—मुझे पकड़ो।

—यह शरीर लिए कहाँ जाओगी ?

—मैं जाऊँगी। जहाँ पर ठाकुर है, मुझे वहाँ ले चलो। मैं विषहरी के आदेश से कह रही हूँ। ले चलो।

पिंगला के शब्दों में आदेश का गजब का स्वर फूट उठा था। उस स्वर को टालने की हिम्मत सँपेरों में हरगिज न थी।

नागो ठाकुर को हाथ-पाँव बाँधकर डाल दिया था।

गजब था नागो ठाकुर। चुपचाप पड़ा था, जैसे आराम से बिस्तर पर सोया हो। पिंगला ने ध्यान-कल्पना में जो देखा था, उससे गजब का मेल था उसका।

पिंगला ने पहले उसे प्रणाम किया, उसके बाद उसके बंधन खोलकर हाथ जोड़ते हुए कहा—अपने घर जाओ, ठाकुर। सँपेरों का अपराध माफ करते जाओ।

नागो ठाकुर उठा। गंभीर स्वर में एक बार उसने पुकारा—परमेश्वरी

मां! उनके बाद बोला—तुम लोगों ने सबूत चाहा है? ठीक है, सबूत मैं ला दूंगा। सुन कन्या, सबूत देकर ही मैं तुझे ले जाऊंगा। तेरे बिना मेरा जीवन ही बेकार है।

—छिः ठाकुर! आप बराम्हन हैं ··

—जात-पांत मैं नहीं मानता। इस साधन-पथ मे जात-पांत नहीं। और होती भी तो तेरे लिए मैं वह जात गँवाता। तेरे लिए, यदि मुझे होता, मैं राजसिंहासन भी दे सकता था। नागो ठाकुर को शर्म नहीं है, वह झूठी बात नहीं बोलता।

बोलते-बोलते नागो ठाकुर जैसे दूसरा ही आदमी हो गया। क्या बताऊँ धन्वतरि, सिंगा जैसे शहनाई हो गया, उसके सुर में मानो एक मधुर गीत बज उठा। उसके आँख-मुँह मे, गोरे रंग मे जैसे अबीर की छटा छा गई।

—हट जा! हट जा! मैं इन दोनो का ही खून करूँगा।

सँपेरों को हटाते हुए गंगाराम बढ आया।

नागो ठाकुर हा-हा करके हँस उठा। अबकी वह गफलत मे न था। लोहे के त्रिशूल को उठाकर बोला—आ जा। खाली हाथ चाहता है, तो वही सही। हो जाय, आज ही हो जाय।

तीखे स्वर मे पिंगला चीख उठी—खबरदार! ठाकुर जो कह रहा है, अपनी बात कह रहा है। मैं नहीं गई हूँ। जब तक माँ का हुकुम नहीं मिलता, मैं नहीं जाती। बराम्हन का रास्ता छोड दे।

गंगाराम नागो ठाकुर के हाथ मे त्रिशूल देखकर, या कि पिंगला के आदेश से, क्या जाने क्यों, ठिठक गया।

नागो ठाकुर सँपेरों की बस्ती से चला गया। जाते समय गंगाराम के सामने खड़ा होकर बोला—जिस दिन सबूत ले आऊँगा, उस दिन इस मुक्के का बदला मैं चुकाऊँगा। अपनी छाती को लोहे से मढवाकर रखना—तेरी छाती पर एक मुक्का जमाऊँगा। एक नहीं, दो। एक मुक्का मूल, एक सूद।—नागो ठाकुर जोर से ठहाका मारकर हँस पडा।

हँसते-हँसते ही चला गया।

सारा सँपेरा टोला ठक् रह गया।

पिंगला बोली—धन्वंतरि भैया, तुमसे मैं कुछ भी नहीं छिपाऊँगी। मेरे प्राणों की बात कलेजे में घुमड़-घुमड़कर, रो-रोकर रह गई। दुःख के भागी किसी अपने से कहे बिना चैन नहीं। तुमसे सारा कुछ कहती हूँ, सुनो। मर्द हो तो क्या, मेरे धरम-भाई हो। लगता है, जाने कितने जनम के अपने से भी अपने हो तुम। तुमसे कहूँ मैं, वह आदमी तो चला गया, लेकिन इस बदनसीब की आँखें आप ही आप उसकी ओर मुड़ीं। वह चला गया, मेरी आँखें लेकिन उस रास्ते से न मुड़ीं। लोगों ने यह-वह कहा। कहा तो क्या करूँ, कहो? धन्वंतरि भैया, सूरजमुखी फूल सूरज भगवान की ओर ताकता रहता है; देवता का रथ पूरब से पच्छिम को चलता है—लेकिन उसकी आँखों की पलकें नहीं गिरतीं, आँखें नहीं मुड़तीं। नागो ठाकुर मेरा सूरज भगवान है—वैसा ही रंग, वैसी ही छटा। वह मेरे बन्धनमोचन का आदेश ले आया। बोला, इस कन्या के बिना जान झूठी है, दुनिया बेकार है; धरती, विद्या, सिद्धि सब बेकार है। उसके लिए मैं जात नहीं मानता, कुल नहीं मानता, स्वर्ग नहीं मानता। इस काली कन्या, कालनागिन के साथ घर बसाएगा, ऐसा आदमी कौन है दुनिया में? कहाँ है? नाग-विद्या में सिद्ध वही नागो ठाकुर है। नागलोक में जाने पर नर जिंदा नहीं लौटता। नाग-लोग की हवा में जहर है, आदमी लुढ़क पड़ता है, नागलोक के डँसने से जान जाती है। लेकिन वीर पुरुष की जान नहीं जाती। अर्जुन ने नागराज की कन्या को गंगा के पानी में देखा था—उसे पाने के लिए उसने हाथ बढ़ाया। कन्या ने हँसकर पानी में गोता लगा लिया। वीर पुरुष ने भी डुबकी लगाई। नागलोक में जा पहुँचा। वहाँ की जहरीली हवा से वह अचेतन नहीं हुआ, उस हवा ने उसके प्राण में मीठा नशा ला दिया। नाग-लोक उस पर टूटा। वीर पुरुष ने लड़ाई करके कन्या को जीत लिया। मेरा नागो ठाकुर वही है। वह चला गया; तुम्हीं कहो, मेरी आँखें उसकी ओर मुड़े बिना कैसे रहें? मैं उसके पथ की ओर ताकती रही। राढ़ का रास्ता माँ गंगा के किनारे से पश्चिम की ओर चला गया है। रास्ते के दोनों

ओर ताड के पेड की कतारें भी गई हैं—आँकी-बाँकी। सूरज देवता डूब रहे थे, उनकी उस लाल छटा ने ताड़ों की फुनगी पर एक छाप छोड़ दी थी, वह छाप चिकने पत्तो पर फिसली पड रही थी। धूल पर उसकी आभा पड रही थी। उधर खेतों के तिल-फूल के बैंगनी रंग पर लाली की आभा पड रही थी। नागो ठाकुर उसी रास्ते मे चला गया। मैं अभागिन सूने पथ की ओर ताकती रह गई। मुझे होश नही था। होश तब आया, जब किसी ने मेरी गरदन पकडकर झटका दिया।

झटका गंगाराम ने दिया। एक घिनौनी हँसी हँसकर उसने कहा—लगता है चपा का फूल फूला ! एँ !

पिंगला ने पूछा—धन्वतरि भैया, चपा के फूल का मतलब जानते हैं या नही !

शिवराम हँसे। धीमे से कहा—जानता हूँ।

शिवराम क्यो न जानें। आखिर वे धूर्जटी कविराज के चेले हैं। गाँव के आदमी हैं वे। *गाँव के आदमी ही नहीं सिर्फ, जो आदमी गाँव की भूमि* को जानता है, नदी को जानता है, लता को जानता है, फल-फूल-फसल को जानता है, कीट-पतग-जीव-जीवन को जानता है, वही आदमी हैं वे। उन्हे मालूम है, नाग के मिलन के लिए अकुलाई हुई नागिन के बदन की गध है चपा की सुगध ! प्रकृति के नियम से अभिसारिका नागिनी का बदन सौरभ से भर उठता है, चपकगधा अपने प्रेम का आमत्रण भेज देती है—अँधेरे लोक मे दिशा-दिशा को।

पिंगला बोली—नही-नही। नही हुआ। तुम नही जानते, धन्वतरि भैया। अभिसारिका नागिनी चपकगधा होती है, यह ठीक है। लेकिन प्रकृति का नियम या क्या कहा न ? उसका मतलब क्या है, वह नही जानती। लेकिन मूल तथ्य यह नही है। अजी, किसन कन्हैया, काले कान्हा। जमना के किनारे बिरिज मे कन्हैया का उदय हुआ था। उसी कन्हैया के लिए। सुनो, गीत सुनो।

अजीब है यह सँपेरिन ! सिर के ऊपर आँधी, हवा की लगातार सन्-सनन्, उसी से जैसे सुर मिलाकर उसने गाना शुरू कर दिया—

वैठ किनारे कालीदह के सजती कौन कुमारी ?
गोरी राधा ? नहीं-नहीं तो किसन कन्हैया की प्यारी !
सजती कौन कुमारी ?

जो सज रही है, उसकी देह का रंग काला है। काले कन्हैया के रंग में
क है। काला कन्हैया भुवन को चमकाता है। उस लड़की के काले रंग
चमक नहीं, चिकनापन है। वह दह के नाग की वेटी है—कालीदह के
िनारे मनोहर श्रृंगार करके कन्हैया की राह देख रही है। उसके अंगों में
ंपा का सिगार।

जूड़े में चंपा का फूल खोंसा है, गले में डाली है चंपा की माला, वाँहों
में चंपा का वाजूवंद, कमर में चंपा की सात लड़ी। दह के किनारे वैठी
कदमतले की तरफ ताकती हुई गुन-गुन गा रही है।

अरे ओ निर्दयी कान्हा रे !
कौन अगन सुलगाई जी में, वेहद ज्वाला रे !
जी का विख जल उस ज्वाला में हुआ अरेरे अमरीत
मेरे मुंह के गरलपात्र से पी जाओ मधु ओ मीत !

धूर्जटी कविराज के श्रीमद् भागवत, महाभारत, हरिवंश में श्रीकृ
के नागदमन की कथा है। पिंगला की वस्ती में सँपेरों की कथा में और
कुछ है। वे कहते हैं, और भी है। कहते हैं, लड़ाई में नाग ने हार नहीं मा
घोर लड़ाई के वाद नाग ने कहा, मैं मर जाऊँगा, पर हार नहीं मान
हाँ, एक शर्त पर हार मान सकता हूँ। वह शर्त है कि तुम्हें मेरा
वनना पड़ेगा। मेरी वेटी से व्याह करना पड़ेगा। यह कहो, तो
मानूं। कुटिल कन्हैया राजी हो गए। कालीदह के नीचे व्याह के व
उठे। नाग ने हार मानकर सिर झुका लिया, हथियार डाल दिए
विष-वुझे हथियार, माथे का मणि लेकर 'आता हूँ' कहकर कन्हैय
सो फिर नहीं लौटे। मथुरा चले गए। वहाँ से द्वारका। वे कहत
से शाम को कालीदह के किनारे एक काली लड़की दिखाई पड़ती
नावे में लाल साड़ी, आँखों में अपलक दृष्टि, देह में लता जैसी

सारे बदन में चंपा के गहने। वह रोती थी। रोज रोती थी। और वहीं गीत गाती थी—

अरे, ओ निर्दयी कान्हा रे !

यह कहानी सँपेरों के गीत में है, उनकी जबान पर किस्सों में है।

गाम को यह कहानी सुनकर, स्मरण करके संताली की नागिनी कन्याएँ सदा निश्वास भरा करती हैं। एकांत में बैठकर गुनगुनाती हुई या निर्जन प्रांतर के पथ पर, छोर पर करुण सुर में वही गीत सदा से गाती आ रही हैं —

जी का विष उस ज्वाला में जल हुआ अरे रे, अमरीत !

कालीदह के किनारे कन्हैया को चाहने वाली विफल अभिसारिका उस नागकन्या के चंपक-आभरण का सौरभ कभी अजीब ढंग से उसकी देह का सौरभ बन गया था। चंपकगंध वाली उस पीड़ा से विकल कुमारी को देखकर दूसरी सुहागिनों ने शायद हँसकर उस पर व्यंग्य किया था। उस व्यंग्य से पीड़ा पर पीड़ा पाकर उस चंपकगंधा नागकुमारी ने शाप दिया था। कहा था, सृष्टि में यह कामना किसे नहीं है ? मेरी वह कामना मेरी देह की गंध में प्रकट हुई है, इसलिए जैसे तुमने मेरी खिल्ली उड़ाई है, वैसे ही मेरे अभिशाप से नागिनी कुल में जिसके अंतर में जब यह कामना जागेगी, तभी उसकी देह से यही गंध निकलेगी। मैं कृष्ण की अभिलाषा रखती हूँ, मेरे तो लाज नहीं है, लेकिन तुम सबको लाज आएगी—सास-ननद-जेठ की दुनिया में, उसके बाहर भी लाज आएगी।

सिवराम ने कहा—अपनी पुराण-कथा उन्होंने खुद रची है। हमारी पुराण-कथा सत्य होते हुए भी, उनकी भी पुराण-कथा सत्य है। लेकिन छोड़िए यह बात। पिंगला की ही कहूँ, सुनिए।

पिंगला कुछ देर चुप हो रही। शायद वह नागकुमारी की पीड़ा को याद करके पीड़ा का अनुभव कर रही थी। शायद हो कि अपनी पीड़ा में वह उसे मिला ले रही थी।

शिवराम वाले—पिंगला की आँखों में मैंने उसी दिन पहली बार आँसू देखे। उसके शीर्ण दो गालों पर आँसू की दो धारा वह आयीं। वे बोले—आज अब रहने दो, बहन। नहाकर घर लौट जाओ। पानी बरसेगा अब।

पिंगला ने आकाश की ओर देखा।

मोटी-मोटी बूंदें टपकने लगीं। मोटी बूंदों की धार लेकिन नहीं, जरा दूर-दूर, जैसा कि बारिश के शुरू में टपकती हैं। हिजल के पानी में आवाज करती हुई वे बूंदें टपककर जैसे लावा भूनने लगीं। जैसे, काले पत्थर के पालिश किए हुए फर्श पर बहुत-सी छेनी-हथौड़ी पड़ रही हों। पिंगला शिवराम की बात का जवाब न देकर मुंह उठाकर उस वृष्टि को मुंह में लेने लगी।

शिवराम उठ खड़े हुए थे। पिंगला ने मुंह झुकाया। बोली—नहीं भैया, बैठो। यह पानी नहीं पड़ेगा। बादल उड़े जा रहे हैं, दो बूंदें बरसाकर भरम बचा गए, मेरी आँखों के पानी को धो गए। बैठो, मेरी बातें सुन जाओ।

—जानते हो, भैया धन्वंतरि, एक के लिए अमरित, दूसरे के लिए विख। गरल पीकर शिव हुए मृत्युंजय और देवता अमर हुए सुधा पीकर। राम-सीता की कहानी में आता है, राम के पिता दशरथ को अंधमुनि ने श्राप दिया कि तुम पुत्रशोक से मरोगे। शाप सुनकर राजा खुशी से नाचने लगे। क्यों? नाच क्यों रहे हो, राजा? राजा ने कहा, मेरे लिए तो यह आशीर्वाद है। मेरे पुत्र नहीं है। पहले पुत्र हो ले, तब तो पुत्रशोक से जान जायगी? कालिया नाग की कन्या ने शाप दिया, वह शाप नागिनों के लिए लाज का कारण बना, लेकिन उसी शाप से नागिनें मोहिनी हुई। उनकी देह की खुशबू से नाग पागल हुए और संताली की नागिनी कन्या के लिए वही हुआ सरबनाश का हेतु, उसकी जान और घर की आग—वह आग लगने पर घर के साथ आप भी जलकर वह भसम हो जाती है। नागिनी कन्या के बदन में चंपा के फूल की गंध उठने पर या तो कन्या आत्मघाती होती है, या कुल को दाग लगाकर, सँपेरे समाज पर पाप का बोझा चढ़ाकर अकूल में वह जाती है। शबला के बारे में तो जानते ही हैं। नागिनी कन्या के शरीर में चंपा की गंध। अभिशाप—इससे बढ़कर दूसरी गाली हो नहीं सकती। सँपेरों की बहू-बेटियों का सारा पाप जुरमाने से माफ हो

जाता है। उनकी बहू-बेटी बाहर कहीं रात बिताकर लौटती है तो सँपेरे लाठी मार-मारकर उनका भुरता निकाल देते हैं लेकिन उन्हें छोड़ते-छाड़ते नहीं। जुरमाना भर देने से सब माफ हो जाता है। यदि कोई गृहस्थ कह दे कि रात वह उसके यहाँ थी, तो जुरमाना भी नहीं लगता। लेकिन नागिनी कन्या की बाबत ऐसा नहीं होता। उसकी सजा है मौत। इसी से उस पापी ने, उस सरदार सँपेरे ने जब कहा कि, 'लगता है, चंपा का फूल फूला! एँ!' तो मेरी एड़ी से चोटी तक बिजली खेल गई।

इसके दूसरे ही क्षण पिंगला का रूप बदल गया था।

अजीब एक परिवर्तन! स्थिर और विस्फारित आँखें, अकंप शरीर, एक ही पल में वह जैसे समाधिस्थ हो गई। बाहरी दुनिया का सब कुछ जैसे खोता जा रहा है, गायब होता जा रहा है। हिजल बिल, सताली बस्ती, सामने के सँपेरे—कोई नहीं, कुछ भी नहीं।

कलेजे में कहीं खिले चंपा का फूल! फूला चंपा फूल! कहाँ, कहाँ?

न। झूठी बात। पिंगला चीख उठी थी। अपने मन का कोना-कोना खोजकर वह अपने को हरगिज कसूरवार नहीं समझ सकी। कहाँ? नागो ठाकुर का वह गोरा वीर का शरीर देखकर उसकी छाती में लग जाने की कामना तो नहीं हुई! वही तो गया नागो ठाकुर, लेकिन संताली का आसन छोड़कर, सताली के सँपेरों का जात-कुल छोड़कर उसके साथ ताड़ के पेड़ों से घिरे पथ पर निरुद्देश्य निकल पड़ने की इच्छा तो मेरी नहीं हुई! वह जिधर से चला गया, उस ओर ताकती रही, यह ठीक है। पर ऐसा जो वीर है, उसकी राह की तरफ कौन नहीं ताकती? सीता सती के स्वयंवर में धनुष तोड़ने की शर्त थी। शिव का धनुष। धनुष तोड़ने के लिए रामचंद्र जी जब सभा में पहुँचे, तो राजभवन की छत पर से सीता जी क्या उनकी ओर ताके हुए नहीं थीं? क्या उन्होंने शिवजी से प्रार्थना नहीं की थी कि हे शिवजी, दया करो। अपने धनुष को तुम पक्षी के पंख की तरह हल्का कर दो, कमान के डंठल जैसा फुलका कर दो, जिससे रामजी के हाथ में वह टूट जाय। मन ही मन यह नहीं कहा कि ऐ मैया मंगल चंडी, रामजी की भुजाओं में वासुकी नाग के हजार फन की ताकत दो, जिस ताकत से वासुकी धरती को अपने सिर पर उठाए हुए है, वही ताकत। और, रामजी के

कलेजे में अनंत नाग का साहस दो, जिस साहस से वह प्रलय के अँधेरे में सृष्टि के डूब जाने पर धुल जाने पर वह अकेले फन खोले खड़ा रहता है काल-समुद्र के बीच में—वही साहस। उससे क्या सीता सती को अपराध लगा था ? उनकी आँखों को, मन को रामजी अच्छे लग गए थे, उन्होंने इसीलिए ये बातें कही थीं। भगवान ने भी कान लगाकर उनकी ये बातें सुनी थीं। धनुष टूटने के पहले तो सीताजी ने माला रामजी के गले में नहीं डाल दी थी। पिंगला ने भी नहीं डाली। उसने तो सिर्फ उसके रास्ते की तरफ ताककर कहा—हे भगवान, नागो ठाकुर की प्रतिज्ञा पूरी करो, वह जिसमें इस अभागिन कैदी के छुटकारे का आदेश लेकर लौट आए। ले आए विधाता की मुहर वाला, माँ विषहरी के हाथ का लिखा मुक्ति-पत्र।

आँख के, मन के अच्छा लग जाने पर कोई वश नहीं। लेकिन उस अच्छा लगने को तो उसने कुल धरम से बड़ा नहीं कर दिया, उसके नियम का उल्लंघन नहीं किया। वह और चीज़ है और मन में चंपा का फूल फूलना और चीज। वह फूल जब फूलता है, कलेजे की गंगा में बाढ़ उमड़ आती है—साफ स्वच्छ स्फटिक जैसा पानी कदोर हो जाता है—कल-कल, छल-छल ध्वनि जगाता है, बाँध नहीं मानता, किनारा नहीं मानता—सब तोड़-ताड़कर वह उमड़ा पानी वह निकलता है। स्वर्ग की कन्या धरती पर आकर सात समंदर के खारे पानी में कूद पड़ती है।

तो ?

नहीं। झूठ बात। वह चीख पड़ी थी—नहीं। नहीं। नहीं।

शिवराम बोले, मैंने मन की आँखों देखा, देखते ही देखते पिंगला का सारा शरीर—सिर से पाँव तक—विक्षुब्ध हो उठा। वैशाखी आँधी से आंदोलित झाऊ गाछ की तरह अस्वीकार के प्रबल झकोरे से हिल उठा। उसी के झोंके से उसके सिर के बाल खुलकर बिखर गये। आँखें प्रखर हो उठीं—उनमें पागल क्रोध की छटा दमक उठी।

पिंगला को उन्माद रोग ने आक्रमण किया।

वह बोली—धन्वंतरि भैया, मुंह से मैं बोली, मन में विषहरी को पुकारा। उनसे कहा, अयि माँ, मैंने अगर तुम्हारे नियम को तोड़ा हो,

अपने स्वभाव-धर्म से उसे काटेगा। खुली छाती पर डँस लेगा।

नागो ठाकुर का नाग—उसके जहर है या निचोड़ लिया गया है, यह नागो ठाकुर ही जानता है।

वह शंखचूड़ झट फन खोलकर खड़ा हो गया।

सामने छाती पसारे बैठी है पिंगला। साँप का फन उसके माथे से भी ऊपर उठ गया है। वह पीछे को झुक जाता है, दोनों जीभ लपलपाती हैं और उसकी आँखें पिंगला के चेहरे पर स्थिर हैं। पीछे की ओर झुकता है, ठीक छाती का निशाना लेकर वह डँसेगा। सँपेरों ने फौरन साँप के मतलब को ताड़ लिया कि वह कन्या से लिपटना नहीं चाहता, उसे डँसना चाहता है। पिंगला की आँखों में विजय की आभा चमक उठी—उनमें पगला आनन्द दमक उठा। वह चिल्लाई—आ जा। नाग ने झपट्टा मारा। झपट्टा मारा कि उस असम साहसी पिंगला के दोनों हाथ उसके फन को लक्ष्य करके ऊपर उठ गए। अचूक निशाना। लोक-सी लेगी। लेकिन उसके पहले ही संताली के विषवैदों के अगुआ उस्ताद भादो की लाठी साँप के गले के ठीक नीचे लगी। वह चोट ऐसी कुशल, ऐसी अचूक थी कि साँप निशाना चूककर पिंगला के बगल में लुढ़क गया। इतना ही नहीं, लुढ़क पड़े साँप पर भादो की लाठी और दबाव से बैठ गई।

सँपेरों ने जय-ध्वनि की।

नुरधुनी ने पिंगला के खिसके आँचल को उठाकर उसके खुले अंग को ढँक दिया और आड़ी नजर से गंगाराम को देखकर बोली—पापी कहीं का!

गंगाराम सँपेरों का सरदार था—संताली का एकच्छत्र मालिक, उनके स्याह-सफेद का अधिकारी। उसे परवाह न थी, वह गरदन हिलाते हुए चला गया।

छः

अपनी कहानी कहते-कहते पिंगला थक-सी गई थी। थोड़ा अवकाश मिल जाने से वह थम गई। दीर्घ निश्वास फेंककर बोली—आ. माँ—

शिवराम ने कहा—कुपित वायु मेघों के पुंज को उड़ाए लिए जाती है। पेड़ों की चोटियों को वह तोड़ती जाती है। उसके बाद उसकी प्रतिक्रिया होती है, थककर वह मंथर हो जाती है। पिंगला की भी उस समय की हालत ठीक ऐसी ही थी। अवसाद में वह टूट-सी पड़ी थी। उसकी उत्तेजना का उपादान चुक गया था।

जरा रुककर, उस दिन के स्मृतिपट की ओर ताक करके, अच्छी तरह से याद करके शिवराम ने कहा—उस दिन विश्व-प्रकृति ने भी जैसे पिंगला की कहानी सुनकर अजीब ढंग से उससे समता रखती हुई एक अनोखी पृष्ठ-भूमि की रचना की थी।

ऊपर आकाश में जो आँधी उठी थी, वह आँधी हिजल बिल पार करके चली गई। चली गई वह गंगा के पश्चिम तट को पीछे छोड़कर पूरब की ओर। काले मेघों का समूह घुमड़ते-घुमड़ते प्रकृति की किसी विचित्र प्रक्रिया से टुकड़े-टुकड़े होकर जटायु जैसा पक्षहीन हो बिखर गया। काले मेघों के पीछे भी सफेद मेघों का एक स्तर था—उसी स्तर पर तैरने लगा। उधर पश्चिम दिगंत से दूसरा एक मेघस्तर उठता आ रहा था। यह स्तर शून्य मंडल से नीचे उतर आया। धूसर मंथर एक मेघस्तर पश्चिम में आकर उत्तर-दक्खिन को फैल रहा था। जैसे जटायु-सम्पाति का न नाम जाना कोई महोदर हो। वह अपने विशाल दोनों डैनों को उत्तर और दक्खिन दिगंत तक फैलाकर वेदना-विकल जी से आँसू बहाता हुआ डैने कटे जटायु की तलाश में चला जा रहा है। डैनों की हवा में शोकाकुल स्नायुमंडली की ध्वनि बज रही है, उसके स्पर्श में शोकार्त्त हृदय का सरल आभास है। सजल, शीतल मंथर हवा में वह धूसर मेघस्तर तैरता जा रहा है। बड़ा ही मीठा रुनझुन बरसाता आ रहा है। वह बारिश कुहासे-सी है।

हिजल में तमाम उस बदले रूप का प्रतिफलन हुआ। कुछ देर पहले आँधी के रुद्र तांडव में जल-थल, घासवन-झाऊवन [illegible]

में, अकाल रात्रि की आसन्नता जैसी जो कुटिल काली छाया उतर आयी थी, जिस प्रचंड आक्षेप से जगी थी, लमहे में वह वदल गई।

शिवराम को माँ मनसा की व्रतकथा याद आ गई।

उस कहानी की वनिया की लड़की दक्खिन दरवाजे को खोलकर भय से वहाँ के जहरीले निश्वास से मूर्छित हो गई। उसने विपहरी का विश्वंभरी रूप देखा—नागों का आसन, नागों का भूपण, विप पिए होने से कुटिल हुई आँखें—नागकेशी, रुद्ररूप—विप का समुद्र उथला पड़ रहा है। वह ढुलक पड़ी। देखते ही देखते माँ के रूप में परिवर्तन आ गया। देवी शांत हो आयीं, अपने नेह-परस से उन्होंने जहरीली हवा की जलन बुझा दी।

हिजल के पानी में लहरें उठी थीं। उन लहरों का रंग विप जैसा नीला था। अव वहाँ लहरें थम गईं। थरथराहट रही; रंग धूसर हो गया, जैसे किसी तपस्वी के विना तेलवाले रूखे केशों की राशि हो, जिसकी शोभा में उदास विपण्णता हो। झाऊ और वासवन की चोटियाँ जव पछाड़ें नहीं खा रही थीं, काँप रही थीं, उदास दीर्घ निश्वास-सी सों-सों आवज-सी हो रही थी।

थकी-थकाई पिंगला घासों पर लेट गई। चेहरे पर वारिश की फुहियाँ पड़ रही थीं। आँखें मूँदकर वह वोली—आह! शरीर की ज्वाला जुड़ाई।

सच ही शरीर मानो जुड़ाता जा रहा था। जेठ के दिनभर की प्रचंड गर्मी के वाद ठंडी हवा और फुहियों की वारिश से शिवराम ने भी आराम से आँखें वन्द कीं। उस वर्पा-सिंचन में जैसे एक माधुरी का स्पर्श हो।

—अव अपनी दुखिया वहन, अभागिन सँपेरिन के गोपन दुःख की सुनो, मेरे धरम भाई—! शवला दीदी ने गंगा के किनारे खड़े हो माँ विपहरी को साक्षी रखकर तुमसे भाई-वहन का नाता जोड़ा है। मुझसे वह कह गई है कि जिस दुःख की वात किसी से नहीं कह सकी, वह उस भाई से कहना। कलेजे के अंगारों को कलेजे में ही रखो तो कलेजा जलता है, और किसी को दो तो वह अंगार तुम्हारे ही घर पहुँचकर तुम्हें जला मारेगा। इस अंगारे को रखने की एक ही जगह है, विपहरी के चरण। सो विपहरी भी निर्दयी वनी

है। दरसन नहीं देती। दूसरी जगह ! मैंने बहुत खोज-ढूँढकर यह जगह निकाली है रे पिंगला, यह मेरा धरम भाई—यह अंगार उसे देने से तेरा जी जुड़ाएगा, कोई नुकसान नहीं होगा। मेरे कलेजे का अंगार तुम लो, मेरे धरम भाई।

पिंगला की आँखें थर-थर काँप उठीं। आँखों के कोने में आँसू छल-छल कर उठे। वह स्तब्ध हो रही। आवेग से बोल नहीं पा रही थी।

शिवराम इन्तजार करने लगे। मन ही मन सिहर उठे। आखिर पिंगला क्या कहेगी ? तो क्या उसने दैहिक-ताड़ना से नागिनी कन्या के धरम को डुबा दिया ?

और तुरत याद आ गया, सबला ने एक दिन कहा था, नागिनी कन्याओं की प्रवृत्ति जब पागल हो उठती है, तो वे गहरी रात में उन्मादिनी की नाईं हिजल के घासवन में घूमती रहती है। कभी बाघ के हाथों जान जाती है उनकी, कभी हरम्मुरी में शिकार की टोह में बैठे मगर उनका पैर पकड़कर खींच लेते हैं—उस गहरी रात में हिजल के किनारे केवल एक आर्त्त पुकार गूँज उठती है। दूसरे दिन से नागिनी कन्या का पता नहीं चलता। और कोई-कोई नागिनी कन्या बाँसुरी की धुन सुनती है। हिजल के दूर खेतों में खेतिहर मड़ैया बनाकर रहते हैं, ग्वाल, ग्वाले गोरू भैंसों का बथान बनाकर रहते हैं—वही सब बाँसुरी बजाते हैं। उसी धुन का पता कर के नागिनी कन्या निकल पड़ती है।

सबला ने कहा था—उससे बढ़कर बुरा और कुछ नहीं होता है, धरम भाई। यही है माँ विषहरी का अभिशाप। उससे या तो जान जाती है, या धरम जाता है, जात-कुल जाता है।

अपने को जब्त करके पिंगला ने आँसू पोंछा। बहुत धीमे से कहा—यही हिजल बिल के सुनसान विषहरी घाट में आषाढ़ पूर्णिमा बरस की उमर नहीं थी, लेकिन लगता है, पिंगला की मधु-खई, बाईं-सवाईं में भी हर था, इसी से उसने धीमे से कहा—लेकिन मेरे भैया, अब भी मेरे मन में कहाँ का फूल फूला।

शिवराम चौंक उठे।

पिंगला ने कहा—मेरे कमरे में आधी रात का [illegible]

घर भर जाने लगा। मैं थर-थर क़ाँपती रहती। जिस बार पहले दिन वह गंध मेरी नाक में आयी,मैं जैसे पागल हो गयी थी। रात ठीक दोपहर हिजल के वन में सियार वोल उठे। संताली के पश्चिम राढ़ के रास्ते के दोनों ओर के ताड़ों पर उल्लू वोले और इस गाछ से उस गाछ पर जा बैठे। संताली के उत्तर वह वहाँ पर है चमगादड़ों वाला वरगद, उस पर रात-दिन चमगादड़ झूलते रहते हैं, चिल्लाते रहते हैं। वे जोर से चिल्लाए, डैने फड़फड़ाकर एक बार आसमान में चक्कर काट गए। घर के अंदर जो वंद साँप थे, वे एक वार तड़पे और फुफकार उठे। मैं मुँहजली, मेरी आँखों में ज्यादा नींद नहीं आती, धरम भाई। वही जो जमींदार के यहाँ से लौटी, मुझमें नागिनी का जागरण हुआ, तभी से मेरी नींद चली गई। उसके वाद आया ठाकुर, वह मुझे छुटकारा दिलाने की कह गया, मैंने तव से नींद को विदा कर दिया। घर में पड़ी-पड़ी पहर गिनती रहती हूँ, कान लगाकर सुनती रहती हूँ कि पाँवों की वह आहट कितनी दूर पर है। उस रोज जगी थी और मन ही मन यही सोच रही थी। रात दोपहर हुई। मन ही मन मैंने विपहरी को प्रणाम किया कि धरम भाई···

पिंगला के होंठ फिर काँपने लगे। करुण और गीली आँखों वह शिवराम को ताकने लगी, जैसे अपना तेज खोकर वह तेजस्विनी युवती मिटी असहाय-सी शिवराम से भरोसे की भीख माँगने लगी, साहस माँगने लगी।

ठीक आधी रात के लगन में नागिनी कन्या अगर जगी हुई हो, तो उसे औंधे पड़कर विपहरी का सुमरन करना चाहिए। वह लगन नागिनी कन्या के कलेजे में निशि का नशा जगा देता है। वह नशे की उस माया से आच्छन्न हो जाती है।— सँपेरों का ऐसा ही विश्वास है।

पिंजरे में वंद वाघ को आधी रात में देखा है? इस लगन में? रात के सन्नाटे पर चोट करती हुई रात की घोषणा दिशा-दिशा में गूँज उठती है। पिंजरे का वाघ चौंककर जाग पड़ता है, गरदन उठाकर रात के अँधेरे की ओर ताकता है। आसमान की ओर ताकता है। उसकी वह

दृष्टि स्थिर होती है, पर उत्तेजना मे अधीर। हर क्षण आँखों की पुतली बड़ी होती और फिर सिमटती रहती है।

निति की माया मे नागिनी कन्या भी ठीक वैसी ही आपे में नहीं रहती। कुल-शासन के नियम की याद दिलाते हुए सताली के सँपेरे उसे बार-बार कह रखते हैं—कन्या, उस लगन मे सावधान रहना। यदि जगी रहो, तो माटी में चिपकी रहना, मन ही मन माँ विषहरीका सुमरन करना। मगर उठना मत, हरगिज नहीं।

उस दिन दोपहर रात हुई। पिंगला की आँखों में नींद कहाँ? उसके मन मे अनन्त चिंता। वह नागिनी कन्या के ऋण की सोचने लगी। लेखा लगाया कि जनम-जनम से सताली के सँपेरे कुल में जन्म लेकर कितनी नागिनी कन्या ने विषहरी की कितनी पूजा चढ़ाई, स्वय आजीवन पति-पुत्र, घर-गिरस्ती से वंचित रहकर, व्रत और तपस्या करके सँपेरो की बहू-बेटियों के सारे स्खलन के पाप को धोया-पोछा, सँपेरो की मान-मर्यादा रखी। फिर भी क्या उसका देना खत्म नहीं हुआ?

नागो ठाकुर देना की उसी वसूली का सवाद लाएगा। वसूल हुए बिना तो छुटकारे का उपाय नहीं।

कहानी मे आता है, नदी के पानी में सोने का चपा फूल बहता जा रहा था। राजा ने प्रतिज्ञा की, जो उस फूल के पेड़ को ला देगा, राजकुमारी को वे उसी के हाथो सौंपेंगे। सतमहले के सबसे ऊपर वाले महल में उन्होंने राजकुमारी को रखा, हर महल मे हजार पहरेदार का पहरा। राजकुमार आते, उनकी राजकुमारी को देखते और वे नदी के किनारे-किनारे निकल पड़ते—कहाँ, कहाँ पर नदी किनारे सोने के चपा फूल का पेड़ है। जाते-जाते, जाते-जाते आखिर वे खो जाते, पीछे की राह पूछ जाती। सोने के फूलो वाला चपा का पेड़ जिसे मिलेगा, उसी को लौटने की राह मिलेगी। पिंगला की कहानी भी तो ठीक वैसी ही है।

ठाकुर को लौटने का रास्ता मिलेगा क्या?

यही सोचते-सोचते आधी रात आ गई। चौंककर पिंगला औंधी लेट गई। मन ही मन विषहरी का स्मरण किया। बोली—मुझे मुक्ति दो।माँ मेरा ऋण वसूल करो।

दीर्घ निश्वास फेंका।

चौंक उठी, अरे! यह गंध कैसी है?

निश्वास छोड़ते ही एक मीठी गंध से उसका कलेजा भर गया।
ाक्षेप से वह साँस नहीं ले सकी, साँस रोके चौंककर उसने फिर
। फूल की गंध! चंपा फूल की गंध! कहाँ से आयी? निश्वास छोड़-
ने साँस खींची। फिर उस मीठी गंध से छाती भर गई।

हड़बड़ाकर वह उठी।

कहाँ से आ रही है यह गंध? तो क्या···? उसने बार-बार अपने बदन
सूँघा। गंध आ रही थी. लेकिन उसकी देह से क्या? नहीं तो!

झटपट उसने रोशनी जलाई। चकमकी रगड़कर फूँक से फूस में
ग सुलगाई। नीम पिसे तेल का दीया जलाकर चारों ओर देखा। धुएँ
वह दरबे-सा घर भर गया. मगर फिर भी गंध आ रही थी।

कहाँ फूला चंपा का फूल?

मंगाली में कहीं तो चंपा का गाछ नहीं है। तो?

झट वह एक पिटारी पर झुकी। उसे सूँघकर देखा। उसमें एक
साँपिन थी। वह साँपिन के बदन से गंध वास नहीं निकलती। और, साँपिन
के मिलन का यह समय भी नहीं था। वह समय बरसात के आरंभ में होता
है। अंबुवाची में वसुमती पुष्पवती होती है, कामरूप पहाड़ पर कामाख्या
देवी बिजुरे वालों बैठती हैं, सात समंदर का पानी लिए आसमान को ढँकते
हुए संवर-पुष्कर मेघों का पुंज आता है, देवी को नहलाता है। नदी-नदी
उसकी लहरें उठती हैं। केवड़े के कोमल पत्तों के घेरे में कली झाँकती
साँपिन के अंग-अंग में आनन्द जगेगा और वही आनन्द सुगन्ध होकर बि
पड़ेगा। नाग उमग उठेंगे।

मगर यह वह समय भी तो नहीं! अभी तो मात्र चैत का महीना
राढ़ के गाँव-गाँव में गाजन[1] के ढाक बज रहे हैं। अभी भी रात के अ
पहर में हवा सर्द हो जाती है, नाग-नागिन की जड़ता अभी भी दूर
हुई होती। रात के अंतिम पहर में अभी भी वे निस्तेज हो पड़ते हैं

---

१. शिव की पूजा का एक त्योहार।

का गाजन होगा, उनके अंग की विभूति का परस पाकर नाग-नागिनों का कलेवर नया होगा। नया साल आएगा, बैसाख का महीना आएगा, सांप-नाथिन को नई जवानी मिलेगी।

तो भी उसने झुककर पिटारे को सूंघा।

कहाँ ? वही कड़वी महक तो आ रही है, जो सदा साँपों के वदन से आती है।

फिर ? कहाँ से आ रही है यह गंध ? दीये की बाती को उकसाकर उसकी लौ को तेज करके अपनी शकातुर दृष्टि फैलाए वह बैठ गई।

अचानक उसे एक बात याद आ गई। आज ही शाम गंगाराम ने उससे कही थी। पिंगला मुह टेढ़ा किए घृणा से उसे देखने लगी थी। गंगाराम ने कहा था—मैं दो दिन था नहीं, इसी बीच यह क्या हो गया ?

दो दिन पहले गंगाराम शहर गया था। कामच्छा माई की डाकिनी से उसने जादू और मोहन-विद्या ही नहीं सीखो, चिकित्सा-विद्या भी जानता है वह। सँपेरों की चिकित्सा-विद्या है, वह विद्या भादो, नटवर, नवीन जानता है। वह चिकित्सा गाँव के आस-पास की जड़ी-बूटियों की है। जीव-जन्तुओं की हड्डी और तेल का इलाज। नागिनी कन्या के पास जड़ी और विषहरी का निर्माल्य होता है, उसी से कवच, ताबीज की चिकित्सा चलती है। गंगाराम की चिकित्सा और तरह की है। वह शहर-बाजार से दवा बनाने की सामग्रियाँ लाता है। धन्वंतरि जैसी वह गोलियाँ और बुकनी देता है। खास कर के ज्वर-बुखार में उसकी दवा खूब लगती है। वही सब सामान-वामान लाने के लिए बीच-बीच में वह शहर जाता है। साथ में सांप का तेल, बाघ की चर्बी, बाघ का पंजरा और नाखून, साही का काँटा ले जाता है, घाव का अचूक मरहम ले जाता है माँ-मनसा का। शहर से चूड़ी, फीता, सूई-धागा, कंघी-कटार, काँच के मोती, ताबीज का खोल—तरह-तरह की चीजें ले आता है। गंगाराम ने गाँव में नया नियम चलाया है। सरदार सँपेरा होते हुए भी बनियौटी शुरू की है।

इसी काम से दो दिन पहले वह शहर गया था। आज ही शाम को लौटा। उस समय सँपेरे विषहरी की वेदी के सामने हाथ जोड़कर खड़े थे। भादो चिमटा बजा रहा था, नटवर बड़ा-सा नगाड़ा। पिंगला आरती

करता। या फिर पिंगला कह सकती है। लबे दस साल से वह उससे लड़ती आ रही है। लेकिन कुछ कर नहीं पायी। अब, जागरण के बाद उसे आशा हुई है। साथ ही टोले में भी कुछ हिम्मत आयी है। उसके जागरण की छुअन से वे लोग भी जैसे जाग गए हैं, भादो के साथ-साथ लोगों ने भी दो-तीन बार गंगाराम को जवाब दिया है। लेकिन गंगाराम बड़ी सख्त बनावट का आदमी है। सँपेरों को उसने केवल शासन की ही डोरी से नहीं बाँधा है, पैसे की भी जजीर से बाँधा है, कर्ज की कौड़ी से खरीदा है। वह रुपया उधार लगाता है। सूद वसूलता है। पिंगला को महादेव सरदार सँपेरे की याद है। बात-बात में वह टिटुआ दबाया करता था। गंगाराम गला नहीं दबाता। वह लोगों की गरदन झुकाकर उस पर कर्ज का पत्थर रख देता है। उससे आदमी नीचे की तरफ के सिवा ऊपर को नहीं ताक सकता। इसी का लाभ उठाकर वह सँपेरों के घर-घर व्यभिचार चलाता रहता है अपना। यह रवैया सँपेरों में सदा से है। सँपेरिनें विश्वास योग्य नहीं होतीं, झूठी होती हैं, मुँहजली और जले नसीब वाली होती हैं—उस पर भी वे होती हैं कलमुही। कुहक काली होती है, बदचलन, बदनीयत। मर्द सँपेरों का भी वही हाल। फिर भी ऐसा कभी नहीं था। सताली के पाप का बोझ सदा नागिनी कन्या के दुःख के दाह में जलकर राख होता रहा है, उसके आँसुओं से सारी कालिमा धुलती रही है। लेकिन गंगाराम के पाप का बोझ पहाड़ हो गया है, इसी से पिंगला के जीवन में इतनी ज्वाला है। इतनी ज्वाला में भी लेकिन पाप का वह पहाड़ जलकर खत्म नहीं होता। इसी से कभी-कभी वह पागल-सी हो जाती है, बेहोश होकर गिर जाती है। उसके कलेजे की नागिन मुह से कहती है, तुम इसका विचार करो माँ, मुक्ति दो। कहती है, मेरी मुक्ति हो चाहे न हो, उस पापी का तुम खातमा करो। जाने कितनी बार उसने मन ही मन सकल्प किया है, खुद भी आखिर तक मरे तो मरे, मगर उस पापी का अत करेगी ही।

वही पापी गंगाराम, उसने क्या उस गंध का पता पाया था? पापी भी हो तो वह सरदार सँपेरा ठहरा। सरदार की गद्दी के गुण के नाते हो सकता है, पाया हो। राजा भोज का आसन था। उस पर जो बैठता, वही राजा जैसा गुणी हो जाता। तिस पर गंगाराम डाकिनी-विद्या जानता है।

उसने जाना है, इस गंध की भनक उसी ने सबसे पहले पायी है। अपने वदन की गंध उसे खुद नहीं मिली, अपने गुण के कारण सरदार सँपेरे को ही मिली।

सारी रात वह दीया-जलाए बैठी रही। सवेरे एक बार फिर से घर के कोने-कोने को ढूँढ डाला। किस चीज की गंध है! कहाँ से आ रही है यह गंध! अंदर गंध है, पर कहाँ से उठ रही है या कहाँ से आ रही है, समझ नहीं सकी। घर से निकलकर वह हिजल में जाकर घुसी। सारा शरीर धोकर लौटी। घर में फिर भी गंध उठ रही थी। हाँ, धीमी हो आयी।

चैन की साँस लेकर वह ओसारे पर लेट गई। सो गई।

फिर!

दूसरे दिन आधी रात को फिर गंध उठी।

पिंगला हड़बड़ाकर उठ बैठी। दीया जलाया। मदिर गंध से घर भर गया था। उसकी साँस मानो रुँध आयी थी : कहाँ खिला चंपा का फूल? उसके कलेजे में? आखिर इस लगन में गंध क्यों उठ रही है?

पगली-सी वह आप ही अपने वदन की गंध की साँस खींचने लगी। कुछ समझ नहीं सकी, पर पछाड़ खाकर जमीन पर औंधी गिरी और देवता को पुकारा।

—मेरे पाप को मिटा दो माँ, कन्या की लाज ढाँको। ढँक दो।

—धन्वंतरि भैया, मन ही मन केवल माँ को ही नहीं, उसे भी पुकारा।

उसका सूखा हुआ चेहरा आँसू से भीग गया। शिवराम की भी आँखों में आँसू आ गए थे। वायु-रोग से पीड़ित इस स्त्री के कष्टों का अंत नहीं, दिमाग से कलेजे तक वह हर पल इसी पीड़ा से पीड़ित हो रही है, धूर्जटी कविराज के चेले को यह अनुमान करने में तकलीफ न हुई और उस पीड़ा की मात्रा का भी वे अनुभव कर रहे थे। उसी अनुभूति से उनकी पलकें गीली हो आयी थीं।

आँसू से सिंचे वेदना से शीर्ण मुखमंडल पर जरा हँसी निखरी। पिंगला बोली—मैं उसे पुकारने लगी, नागों ठाकुर को। वह यदि मेरे छुटकारे का आदेश ले आए तो मैं जी जाऊँ। नहीं तो मरना है। मेरे कलेजे में चपा फूला है, शर्म की यह बात दस के जानने के पहले ही मैं मरूँगी। किंतु मरने के पहले *आग लगा जाऊँगी। अपने बदन में आग लगाकर उसी आग से*···

पिंगला के दाँतों की दोनों परतें मेघ घिरे पिछले पहर से काले मुँह के अदर बिजली-सी झलक पड़ी। शिवराम को शंका हुई कि पिंगला अब चीख उठेगी। लेकिन वह चीखी नहीं। उदास आँखों सामने के मेघ मेदुर *आकाश को देखती रही।* कुछ देर बाद एक लंबा निश्वास छोड़कर वह उठी। कहा—दुखिया बहन की बात सुन ली भैया, यदि यह सुनो कि बहन मर गई तो इस अभागिन के लिए रोना। और यदि छुटकारा मिले···

एक प्रसन्न हँसी से उसका शीर्ण मुखड़ा उद्भासित हो उठा। बोली—मिलूँगी। तुमसे मिलूँगी। छुटकारा मिलने पर तुमसे मिलूँगी। अब तुम अपनी नाव पर जाओ भैया, मैं पानी में उतरूँगी।

अब तक शिवराम अभिभूत की नाईं बैठे थे। एक चिकित्सक के कौतूहल और उस जंगली आदिम एक स्त्री के अंध संस्कार से भरे जीवन की कहानी के वैचित्र्य ने उन्हें प्रायः मुग्ध कर रखा था। खत्म होते ही लंबा निश्वास छोड़कर वे उठ पड़े।

एक दिन, वह दिन दूर नहीं, पिंगला के मस्तिष्क की कुपित वायु अभागिन को पागल बना देगी। हर जगह, हर घड़ी वह चपा की गंध का अनुभव करेगी। शंकित और भीत होकर वह बिलकुल निर्जन में छिपी रहेगी। इस कल्पित गंध को दबाने के लिए दुर्गंध-भरी कीच को चंदन की तरह लगाएगी।

—भैया! ओ धन्वंतरि भैया!—पीछे से पिंगला ने पुकारा। स्वर में उसके उत्तेजना थी, उल्लास था।

शिवराम मुड़े। देखा, पिंगला तेजी से प्राय दौड़ती हुई भागी आ रही है। भँवें सिकोड़े शिवराम खड़े रहे। क्या हुआ? आखिर क्या यह मुझे भी पागल बना छोड़ेगी?

जरा देर में पिंगला फिर जंगल से बाहर निकल आयी। उसके हाथ में एक काला साँप लटक रहा था—वास्तविक लक्षण वाला काला साँप।

—मिल गया, भैया। माँ-विषहरी ने मेरी सुन ली। मिलेगा, और मिलेगा।

पिंगला पानी में उतरी। शिवराम सँपेरे टोले को लौटे।

टोले में उस समय शोरगुल हो रहा था। गंगा में दो सोंस मिले थे। अपने पीले दाँत निपोरकर गंगाराम ने कहा—यात्रा आपकी अच्छी है, कविराज। एक ही बार में सोंस का तेल और काला साँप बहुत मिला।

उनके विदा होते वक्त पिंगला घाट पर खड़ी रही। उसकी आँखों में आँसू टलमल कर रहा था, होंठ काँप रहे थे। और उसी में हँसी का एक टुकड़ा!

शिवराम ने कहा—इस बार लेकिन तुम लोग हमारी तरफ जाना, जैसे गुरुजी के यहाँ जाया करते थे। मुझे विष दे आना।

गंगाराम ने कहा—यह कन्या तो अब जाएगी नहीं धन्वंतरि, इसका तो छुटकारा आ रहा है। वह, उधर राढ़ के पथ से ठाकुर मुक्ति लाने गया है। क्यों री कन्या?

पिंगला पूँछ दबे साँपिन-सी पलटकर खड़ी हो गई।

गंगाराम लेकिन घबराया नहीं। हँसकर बोला—आ रहा है, वह आ रहा है। गले में चंपा फूल की माला पहने आ रहा है। मुझे उसकी गंध मिल रही है।

पिंगला एकटक देखती रही।

शिवराम की नौका मोड़ से घूमी, हंगरमुखी से कुमीरखाली में चली गई। यहाँ ज्यादा गहराई नहीं, नाव सम्हलकर चली। शिवराम नाव की टप्पर पर बैठे थे। पिंगला अब ओझल हो चुकी थी। उन्होंने एक लंबी उसाँस ली। पिंगला से अब भेंट नहीं होगी। कुछ ही महीनों में कुपित वायु वैशाखी अंधड़-सा वेग से एक आलोड़न लाए शायद, उसके जीवन को मुसीबत में डाल दे। अभागिन पागल हो जाएगी, उन्माद!

शिवराम ने गलत नहीं सोचा। पिंगला से उनकी भेंट नहीं हुई। पर

जब कि चिकित्सक का उनका अनुमान गलत निकला। पिंगला पागल नहीं हुई।

सात

—नागिनी कन्या सहज ही पागल नही होती है, धन्वतरि भैया! उसकी जान जब जाने-जाने को होती है, तो वह बासी फूलों की माला की तरह हँसते हुए जान ही दे देती है, नहीं तो बधन तोडकर आग लगाते हुए नाचती-गावती चली जाती है उसकी राह पर, जिसके पाने से, जो पाने से वह जिंदा रह सकती है। अपने मन मे वह पूछती है—रे मन, क्या चाहता है तू, टटोलकर बता। यदि तुझे धरम मे सुख है तो धरम को माथे पर उठाकर मर जा—किसी काल-नाग के मुँह की ओर हाथ बढा दे और फिर भर-पेट शराब पीकर सो जा। और यदि यह न चाहता हो, जीना चाहता हो, धरम-करम, जात-कुल, गाँव-जीवन मे आग लगा-जलाकर तू अपनी राह चल दे।

माँ-विषहरी की किरपा से कन्या सहज ही पागल नही होती।

ये बातें शिवराम से पिंगला ने नही, शबला ने कही थीं। अजीब अचरज की बात, शबला से शिवराम की फिर मुलाकात हुई थी। वह लौट आयी थी। शबला ने कहा था, मैं चली गई थी। महादेव सरदार सँपेरे का सरबनाश करके मैं गंगा के पानी मे कूद पडी थी। मरी तो मर जाऊँगी, जी गई तो जी गई—जी गई तो जी का सारा प्यार उँडेलकर घर बसाऊँगी, मन के अरमान मिटाऊँगी। घर के दो ओर चपा के दो पेड लगा, गले मे माला पहन, अपने मन के मीत को माला पहनाकर जिऊँगी—जी भर-कर जीऊँगी। सो मैं मरी नही, बच गई। आँखें खोलकर देखो, तुम्हारी धरम-बहन, सँपेरिन, जले भाग वाली। अभागिन, कलमुँही, बेहया शबला तुम्हारे सामने खड़ी है, दुश्मन की हड्डियों के बने दाँत से हँसते-हँसते लोट-पोट हो रही है। भूतनी नहीं, जीती-जागती शबला। देखो। छूने से अगर

नहाना पड़ जाय तो कोई जरूरत नहीं, नहीं तो मेरा हाथ छूकर देखो, मैं वही शबला हूँ। धन्वंतरि भैया, सँपेरिन के मन में वायु जब अंधड़ उठाती है तो वह मन के घर के दरवाजे को तोड़ देती है।

शबला हँस पड़ी। खिलखिला कर हँस पड़ी। उस हँसी से लोगों के अचरज का ठिकाना नहीं रहता, सोचता है, बेहया बनकर ऐसी हँसी कोई कैसे हँसता है। वही हँसी हँसकर शबला बोली—क्या कहा मैंने ? मन के दरवाजे को तोड़ देती है ? हाय रे नसीब, सँपेरों के मन के घर में दरवाजा ! दरवाजा नहीं जी, टट्टर। किसी तरह से टिकाकर जी के दुःख को ढँकना, बस ! अंधड़ आने पर वह रहता है भला ? उड़ जाता है। अंदर की घुटन बाहर निकलकर अकास-बतास में बिखर जाती है। वायु से सँपेरिन की बेटी पागल नहीं होती, धन्वंतरि भैया, मैं पागल नहीं हुई। पिंगला भी पागल नहीं हुई। माँ-बिषहरी की दया।

चारेक महीने बाद। कातिक की शुरुआत। शिवराम से शबला की भेंट हुई। शिवराम के नये पते पर, आयुर्वेद-भवन के सामने चिमटा बजाकर हाँक लगाती हुई खड़ी हो गई।

—जय माँ-बिषहरी, जय धन्वंतरि ! तुम्हारे हाथों पत्थर की खरल में बिख अमरित हो। दूधों नहाओ, पूतों फलो। जजमान का कल्याण करें महादेव।

शिवराम जानते थे, सँपेरे उनके यहाँ फिर आएँगे। पता वे दे आए थे। स्त्री का स्वर सुनकर उन्होंने समझा, पिंगला है। कुछ चकित हुए थे, पिंगला पागल नहीं हुई ? कैसे चंगी हुई ? देवता की दया ? बिषहरी की कृपा से उनकी पूजने वाली की पीड़ा जाती रही ? रसायन की कृपा जैसे दो और दो जोड़ने से चार जैसा निश्चित है, देह के अंदर रोग की प्रक्रिया भी वैसी ही सुनिश्चित है। इसलिए रोग में रसायन के प्रयोग से दो ताकतों में द्वंद्व होता है, कभी दवा जीतती है, कभी रोग जीतता है। दवा का प्रयोग किए बिना रोग की गति नहीं रुकती, नहीं रुक सकती। इस सत्य को वे मानते

हैं। आयुर्वेद पाँचवाँ वेद है। वेद मिथ्या नहीं। लेकिन उसके बाद भी कुछ है—अदृश्य शक्ति, देव की इच्छा, देवता की कृपा। दैव बल से बड़ा बल नहीं। आचार्य धूर्जटी के शिष्य होने के नाते वे इस पर अविश्वास कर सकते हैं? रहस्य को पाने की प्रसन्न हँसी से उनका मुख उज्ज्वल हो उठा। विस्मय जाता रहा। वे बाहर निकले। बाहर निकलकर लेकिन काठ के मारे से रह गए।

उनके सामने पिंगला नहीं, शबला खड़ी थी।

पिंगला लंबी है, शबला बालिका जैसी, ऊँचाई में कुछ छोटी। आज भी वह पंद्रह-सोलह साल की लड़की-सी लग रही थी।

पिंगला के बाल लंबे हैं, शबला के बाल कुछ घुंघराले हैं और भर पीठ हैं। शबला की आँखें आयत और बड़ी—पिंगला की छोटी नहीं, मगर खिंची हुई, लंबी।

शबला को पिंगला समझने की भूल नहीं हो सकती।

शबला के पीछे मताली के कई कम उम्र वाले सँपेरे थे, वयस्कों में से नटवर और नवीन।

शिवराम कुछ समझ नहीं पा रहे थे। शबला?

शबला ने झुककर प्रणाम किया—पाँयँ लागी, धन्वतरि भैया! तुम्हारे अँगने में हम सबका जनम-जनम पेट भरता रहे, तुम्हारी खरल में तुम्हारी विद्या में हमारे नाग का विख अमरित हो, जय-जयकार हो तुम्हारी।

प्रणाम करके घुटने गाड़े हुई हालत में ही बोली—मुझे पहचान नहीं पा रहे हो, भैया?

इतनी देर के बाद विस्मय और स्नेह भरे कंठ से शिवराम बोले—शबला!

—हाँ जी। शबला।

—और लोग? पिंगला? गंगाराम? भादो?—ये सब? पिंगला पागल हो गई है न?

शबला उनकी ओर ताकने लगी। शिवराम ने यह समझा कि शबला पूछ रही है, यह कैसे जाना? शिवराम ने उद्दाम हँसी हँसकर कहा—उसके शरीर में वायुरोग का लक्षण देख आया था। उसने खुद से ही मानसिक और

...क-पीड़न की ज्यादती कर ली थी। स्वाभाविक तौर से वायु-कुपित
...ा। मैंने उसे दवा खाने को कहा था। लेकिन...
...—वायुरोग ? वायु का प्रकोप ?
...शबला हँसी। बोली—सँपेरिन सहज ही पागल नहीं होती, धन्वंतरि
...ा ! पिंगला के मन में जो आँधी उठी, उस आँधी से संताली में प्रलय
...गया। संताली में मन्वंतर हो गया। नागिनी कन्या को मुक्ति मिल गई।

...एक अजाब और आश्चर्यजनक घटना।
शबला कहती गई, शिवराम सुनते गए।
सुनते-सुनते उन्हें आचार्य धूर्जटी कविराज की बात याद आयी। तुलसी
का पत्ता तोड़ते हुए एक दिन उन्होंने कहा था, तुलसी की गंध तृप्ति देती है,
पर वह फूलों की गंध जैसी मीठी नहीं। स्वाद में भी कड़वी। उसमें मुझे
मानो जंगली जीवन की गंध मिलती है। तुलसी की जन्म-कहानी जानते
हो न ? समुद्र के नीचे या उसके किनारे जो दैत्य रहते थे, उन सब के
राजा जलधर या शंखचूड़ अपनी पत्नी तुलसी की तपस्या से अजेय था...
यह तो तुम्हें मालूम ही है। धोखे से विष्णु ने उसकी तपस्या भंग कर दी...
पति को अमरता नहीं मिली। जलंधर मारा गया। लेकिन तुलसी मान...
का महाकल्याण लिए, विष्णु के सिर पर चढ़ने का अधिकार पाकर पुनर्...
लाभ से सार्थक हुई। उस गंध में मुझे समुद्र तट की उस दैत्य-नारी के ज...
की बू मिलती है।
पिंगला भी क्या नए जनम में कोई नयी विषनागिनी लता बनेगी...

महादेव सँपेरे की छाती में विष-काँटा घोंपकर भोर की धुँधली उ...
कार जोत में नंगी शबला उमड़ी गंगा की गोद में कूद पड़ी थी। उ...
चुकाया था। वह प्रायः पागल हो गई थी।
जंगली आदिम नारी-जीवन; चारों ओर अपने समाज...
उद्दाम लीला; उसके प्रभाव और स्वाभाविक प्रवृत्ति से उसके...

लालसा जगी थी, उद्दाम हो उठी थी—इस बात को शवला ने छिपाया नहीं, अस्वीकार नहीं किया। बहुत दिन पहले प्रथम परिचय में भाई-बहन का नाता जोड़कर भी उसने भाई से असामाजिक, अवैध दवा माँगी थी। वह मनानघाती होने को भी तैयार थी—यह कहने में भी उसने शर्म नहीं महसूस की। उसने यह कबूल किया था कि उसने एक वीर्यवान तरुण सँपेरे को प्यार किया है, लेकिन उस वक्त तक उसे छूने में उसे डर लगता था—नहीं छू सकी थी। महादेव सँपेरे ने चालाकी से उस तरुण को साँप से कटवाकर मार डाला था। उसके बाद ही वह उन्मत्त हो गई।

शवला बोली—मेरी आँखें खोली से ढँकी थी, धरम भाई। जी की जलन में उसे उतार दिया, खींचकर फाड़ फेंका। मेरी निगाहों में सब आया—रात को मैंने रात देखी, दिन को दिन। सरदार सँपेरे की हरकत देखकर मेरा जी जल गया। शायद हो कि उसका भी कोई कसूर न हो। क्या करे वह? सँपेरों के दो देवता—एक शिवजी, दूसरी विषहरी माई। शिवजी धरमभरस्ट होकर अपनी ही बेटी के रूप पर मोहित हुए। सँपेरों का नसीब!

शिवराम थोड़ा मुरझाए-से हँसकर बोले—उन सबका देवता बनना कोई मामूली बात नहीं है। शिवजी ही उन सबके देवता हो सकते हैं। उन सबों की पूजा स्वीकार करने के लिए देवता ने हँसते हुए उच्छृंखलता के अपवाद को स्वीकारा, बर्बर नशेबाज का रूप धारण किया, और भी बहुत कुछ किया। अपने समाजपति के श्रेष्ठ शक्तिमान के जीवन से प्रतिफलित हुए रुद्र देवता। लगामविहीन जीवन स्वेच्छाचार से जो करता है, उसके देवता भी वही करते हैं। वे कहते हैं, देवता करते हैं, उसी का प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है! कोई उपाय नहीं, छुटकारा नहीं। जी-जान से कोशिश तो शायद करते हैं, पर फिर भी मन की गहराई में स्वेच्छाचार की भावना, टेढ़ी राह से प्रकट होती है।

शवला ने महादेव सरदार सँपेरे में भी उस उद्दाम भ्रष्ट जीवन की वैसी लालसा का आभास पाया था। वह कहता, सरदार सँपेरे के सिर पर शिवजी ही अपने भ्रष्ट जीवन की कामना की अतृप्ति थोप गये हैं। सब-सब—सभी सरदार सँपेरों में ही वह प्रकट होती है। सँपेरे उसे पकड़ नहीं पाते, देख नहीं पाते; जो एक उसे देख भी पाते हैं, तो उस पर ध्यान नहीं

ला पर महादेव की भी नजर गड़ी थी। आँखों से दिखाई नहीं
र शवला ने मन ही मन महसूस किया था।
कन नागिनी कन्या होते हुए भी शवला को नागों का शृंगार, गरल-
प, विश्वंभरी मूर्ति धारण करने की शक्ति नहीं थी। इसीलिए उस
ह रात के अंतिम पहर में जीवन की ज्वाला से उन्मादिनी-सी ही
। चलने वाले सरीसृप की नाई उसकी नाव पर जा चढ़ी थी। पानी
गकर कपड़ा भारी हो गया था, हर कदम पर आवाज करता था,
ने में तकलीफ भी हो रही थी। इसीलिए कपड़े उसने उतार फेंके। वह
के पास जा खड़ी हुई।

शिवराम सब कुछ जानते थे। उन्होंने सुना था। हैरान नहीं हुए थे।
वह आग उन्होंने शवला की आँखों में देखी थी। उसका जो उत्ताप उन्होंने
अनुभव किया था, उसके अनुसार शवला के लिए कुछ असंभव नहीं था।
वे सब कुछ सुनने को तैयार थे। उन्होंने कहा—वह सब मैं जानता हूँ, शवला।
—जानते हो ?—मस्त निगाहों उन्हें देखते हुए शवला ने कहा—क्या
जानते हो तुम ? यही कि मैं उसकी छाती पर जा पड़ी थी, उसने मुझे दधि-
मुखी समझा था...

होंठ टेढ़ा करके एक अजीब हँसी हँसी शवला—मेरी उमर उस सम
एक बीस चार थी और दधिमुखी दो बीस पार कर चुकी थी। हूँ:, उ
मुझे दधिमुखी समझा !

—मैं उस समय संताली पहाड़ की कालनागिन-सी खूँखार हो रही
आँखों में आग, निश्वासों में जहर, सामने जो घास आ जाती, वह भी
कर काली पड़ जाती। और उधर मेघों के घटाटोप में विपहरी जा
थीं—आँखों में पलक नहीं गिरती, हाथ में दंड, इधर घूम रहा है हि
लाठी लिए चाँद सौदागर—उसकी आँखों में दिया नहीं, नागिन
में जहर की ज्वाला, विपहरी ने उसे जहर का पारावार पिलाया
दशा उस समय ठीक ऐसी ही हो रही थी। ज्ञान नहीं, होश नहीं

डर नहीं, धरम का भय नहीं—कलेजे में सात चिता की आग जल रही है, अंग-अंग में मरण-ज्वर का ताप। भोर हो रही थी। चारों ओर मोहमयी जोत, उस जोत में सब कुछ जादू-सा लग रहा था। पेड़-पौधा, बस्ती-नाव—अपनी आँखों मैंने यह भी न देखा, मैं सिर्फ अँधेरा देख रही थी। सात-समुंदर के पारावार की तरह मेरी आँखों के आगे अपार अँधेरा लहरा रहा था। मैं उसमें कूद पड़ूँगी, खो जाऊँगी। मुझे उस समय डर किसका था? काहे का डर? मैं नर्क में जाऊँगी और उसे साथ नहीं ले जाऊँगी? उसकी छाती पर अपने को लुढ़का दिया और फिर पापी के कलेजे में जहर-काँटा घोंप दिया—लोहे की कील-सूई-सी पतली नोक, भीतर पोली, जिसमें जहर भरा होता है। उस जहर की कोई दवा नहीं।

वहाँ से भागकर वह भादों की दोनों किनारों से छलकी गंगा की गोद में कूद पड़ी थी। कलकल शब्द, बेहद तेज बहाव, बीच-बीच में साँस रुँध जाने से छाती फटी जाती थी, वरना तो वह बहती जा रही थी, जैसे झूले पर झूलती जा रही हो। आकाश नहीं, माटी नहीं, चाँद-सूरज नहीं, हवा नहीं। शबला ने कहा—बस लगा कि मैं खो गई। सब पुँछ गया। लगा, बड़ी ऊँची डाल से गिर पड़ी हूँ—गिर रही हूँ, गिर रही हूँ। उसके बाद वह भी नहीं। मगर खो नहीं गई। होश जब आया, तो देखती क्या हूँ कि मैं एक नाव पर लेटी हूँ।

—वह नाव एक मुसलमान मल्लाह की थी। इस्लामी सँपेरा। वह सँपेरिन कन्या को देखते ही पहचान गया। निशानी मेरे पास थी। शबला हँसी।

उस दिन उसने बिखरे बालों का कसकर जूड़ा बाँधा था। जूड़े में वह जहर-काँटा बाँध लेना पड़ा था और उस जूड़े में उसने पद्म-गेहुँअन के एक बच्चे को लपेट लिया था। जरूरत पर उससे भी काम लेने का इरादा था। —मैंने जब सुना भैया कि वह इस्लामी सँपेरा है, तो मैं हँसी। समझ गई कि माँ-विषहरी ने मुझे सजा दी। भादों की दोनों किनारों से छलककर

ली गंगा के लाल पानी की परत-परत में भव-यंत्रणा से छुटकारा का
हापापी की हड्डी के टुकड़े को चील-कौवे चोंच से उठा ले जाते हैं,
दि किसी तरह से माँ गंगा के पानी में गिर पड़े, तो रथ आकर उसे
ही राह से स्वर्ग को डंका बजाकर ले जाता है। अपने करम-दोष के
। और क्या कहूँ ? अपार गंगा में कूद पड़ी, हवा के लिए छाती फट
, चेतना जाती रही और पुँछ गई, जुड़ा गई जी की ज्वाला—भूल गई
मानुष जीवन की सारी बातें। तुमसे कहूँ क्या भैया, जूड़े में नाग का जो
च्चा लिपटा था, जो नाग कि छः महीने माटी के नीचे रहता है, वह नाग
भी मर गया। लेकिन मेरी मौत नहीं हुई। मुझे यह समझना बाकी न रहा,
विषहरी मुझे लौटा रही हैं; जात लेकर, कुल लेकर मुझे इस्लामी सँपेर
के यहाँ दुःख भोगने के लिए लौटा दे रही हैं।

हठात् शबला का गला दृढ़ हो गया। वह ऊपर की ओर मुँह उठाकर
अपनी देवी विषहरी को लक्ष्य करके बोली—सो तुम भेजो। एक दिन तुमने
खुद ही चाँद सौदागर से टंटा मोल लिया था, उस टंटे में नागों को अपनी
जान देनी पड़ी। तुम खुद तो अपनी वेदी पर विराजमान रहीं और काल
नागिनी को भेजा सोने के लखींदर को डँसने के लिए। कौन-सा पाप, कौन
सा कसूर लखींदर और बिहुला ने किया था ? विष-वैदों के मुखिया
छलना पड़ा। तुम्हें तो पूजा मिली, बेचारी कालनागिन को सँपेरे कुल
जन्म लेकर झेलना पड़ रहा है; मुझे फिर तुमने दुःख भोगने को नरक
में एक विधर्मी के यहाँ भेज दिया। ठीक है, दुःख के बदले मैं सुख ही मान
जाय धरम। पति बनाऊँगी, घर-द्वार बनाऊँगी, हँसूँगी-नाचूँगी-गा
बेटा-बेटी से अपनी गिरस्ती सजाऊँगी, उसके बाद मरूँगी। उस समय
जाना होगा, तो जाऊँगी। यमदंड की चोट से प्राण-पुतली, यदि अँगु
प्राण-पुतली आकुल-व्याकुल हो, तो भी तुम्हें नहीं पुकारूँगी।

लेकिन वह नहीं कर सकी। विषहरी ने, उस इस्लामी सँपेरे
करने दिया। उस सँपेरे को ही मैंने अपना पति बनाया था। इस्ल
तो क्या हुआ, सँपेरे की देवी तो आखिर विषहरी ही है! उसने
भुलाया ! संताली के मूल सँपेरों में से जो लोग संताली छोड़
गंगा में चलते हुए बीच ही में रह गए थे, पद्मावती के चौर से

ही तो इस्लामी सँपेरे हुए ! भूले तो कैसे भूले ? उसने कहा, कन्या, घर
माने से पहले माँ को प्रसन्न करो। नही तो माँ के कोप से चाँद सौदागर
की गत होगी। आँधी में नाव डूबेगी, नाग के डसने से बच्चों की जान
जाएगी; सुख की उम्मीद से घर बसाओगी, दुःख की आग में वह घर जल-
कर राख हो जायगा। [माँ को प्रसन्न करो। नागिनी कन्या के नसीब की
सोचो, अपनी पहली संतान को उसे'''

शबला सिहर उठी।

ऐसा कहा जाता है, नागिनी कन्या यदि भ्रष्ट होकर भाग निकले, वह
अगर घर-गिरस्ती बसाए, वह अगर अपना जात-धरम छोड़ दे, तो उसके
सन्तान पर माँ-विषहरी का शाप लगेगा। संतान के गोद में आते ही उसका
नागिन वाला स्वभाव जग पड़ता है। *नागिन जैसे अपने बच्चे को खा जाती
है*, नागिनी कन्या उसी तरह अपने बच्चे को मार डालती है।

अपने को जब्त करके शबला उदास आँखों आसमान की तरफ देखने
लगी। जरा देर में एक लम्बा निश्वास छोड़कर उसने कहा—आखिर घर
नहीं बसाया जा सका। जमीन मिली, बाँस-फूस-रस्सी का भी इन्तजाम मन
ही मन किया, पूँजी की भी कमी नहीं थी, मगर न हो सका। पश्चिम
आकाश की तरफ ताककर काले बादल की याद आ गई, बिजली की चमक
याद आ गई, उसकी कड़-कड़ गरज दिमाग में गूँज उठी। घर नहीं बसा।
रास्ते-रास्ते घूमने लगी। जोगन बनी, एक सताली को छोड़कर जहाँ-जहाँ
मनसा मैया की वेदी थी, जा-जाकर धरना देने लगी। सिरफ अपने ही लिए
नहीं मेरे भैया, जोगन बनी जब तप करने लगी, तो नागिनी कन्या का भी
छुटकारा *माँगा। कहा, ऐ माँ, केवल मुझको नहीं, कन्या को तुम इस बंधन*
से छुटकारा दो, छुटकारा दो। कामरूप गई। बड़ी मैया, माँ कामख्या से
कहा, माँ, मुझे छुटकारा दो, कन्या को मुक्ति दो, माँ।—रास्ते में ठाकुर से
भेंट हो गई।

—किससे ?

—नागो ठाकुर से जी। सिर पर रूखे बाल, बड़ी-बड़ी आँखें, आँखों
में पागल जैसी नजर; सोने के पत्तर से मढ़े लोहे के किवाड़-सी यह चौड़ी
छाती, छाती पर रुद्राक्ष की माला, दंतैल हाथी जैसी चाल। ठाकुर को

लगा, जैसे महादेव हों। मैंने बुलाकर उनसे पूछा, बताओ ठाकुर, न हो ? ठाकुर ने कहा, मेरा नाम नागो ठाकुर है, मैं माँ-कामच्छा, पहरी के आदेश के लिए जा रहा हूँ।

शिवराम ने आश्चर्य से कहा—वह जोगन तुम्हीं हो ?

—हाँ, यहदईमारी शवला ही वह जोगन है।

शवलानेकहा—धन्वंतरि भैया, ठाकुर की बात सुनकर पिंगला के भाग्य र मुझे ईर्ष्या हो रही थी। हाय रे हाय, राजकुमारी को ऐसा नसीब नहीं होता, मंदभागिनी सँपेरिन को जैसा है !

शिवराम बोले—सच ही ईर्ष्या की बात है।

—ऐसे वीर जैसा गोरा-गोरा आदमी, गेरुआधारी संन्यासी, वह उस सँपेरिन युवती के लिए जात-धरम, संन्यास, इहकाल-परकाल सबको जलांजलि देकर जंगल-पहाड़ के बीहड़ पथ से जा रहा है, उस सँपेरिन को पाए बिना उसकी जिंदगी बेकार है—उस बंदी सँपेरिन का छुटकारा ही उसका तप है—नारी-जीवन का इससे बढ़कर अच्छ भाग्य और क्या होता है ? यह देखकर किस नारी को अरमान नहीं होत काश, मेरे लिए इस तरह कोई भटकता !

किसी बड़ी और चौड़ी नदी, शायद ब्रह्मपुत्र के किनारे, घने जंगल शवला से नागो ठाकुर की मुलाकात हुई थी। वीर नागो ठाकुर अपनी में अकेला ही चला जा रहा था। कभी-कभी बोल उठता था—शंक त्रिपहरी !

हाथ में त्रिशूल। कभी-कभी बच्चे की नाईं जंगल की गहरी निर्ज हाँक मारकरप्रतिध्वनिजगाताहुआ कौतुकका अनुभवकरता था—

चारों ओर से प्रतिध्वनि उठती—ए...प् ! ए...प्... ! ए.

वह प्रतिध्वनि मिट नहीं पाती कि फिर पुकार उठता—ए..

आश्चर्य-विमुग्ध होकर शवला ने उस नए संन्यासी से परिच नागो ठाकुर की बातें सुनकर उसके कलेजे के अंदर कैसा तो संताली की याद आ गई। पिंगला की याद आ गई। हिजल गई।

उसकी उत्तेजना की सीमा न रही। उस उत्तेजना में उस

नागो ठाकुर को धिक्कारा—कैसे मर्द हो तुम ? एक लड़की तुम्हें भा गई, उसके लिए तुम्हें दुनिया सूनी दिखाई देने लगी और तुम उसे छीनकर नहीं ले सकते ? ऐसे बहादुर-सी शकल है, ऐसा साहस, बाघ से नहीं डरते, साँप से नहीं डरते; पहाड़ की बाधा नहीं समझते, नदी नहीं समझते और कुछ सँपेरों से लड़कर कन्या को छीन नहीं सकते हो ?

नागो ठाकुर ने कहा था—जरूर सकता हूँ। नागो ठाकुर ऐसा न कर सके, वह भी संभव है भला ! नागो ठाकुर के नाम मात्र से माटी फोड़कर राह में उसके चेलों की जमात जाग पड़ती है। ओझा, गुणी, उस्ताद, जादूगर ही नहीं है नागो ठाकुर, वह कुश्तीबाज भी है, लठैत भी है। मैं सब कर सकता हूँ। लेकिन सब कर सकता हूँ मैं, इसीलिए ऐसा नहीं करूँगा। उसे छीनकर ले आऊँ तो वह डकैती की चीज होगी। उसे छुटकारा दिला-कर जीतना होगा। पिंगला—लम्बी, काली युवती—खिंची हुई-सी आँखों में आषाढ़ के काले मेघ, कभी बिजली की कौंध, कभी साँझ के अँधेरे-सी छाया—पीठ पर रूखे काले बालों का फैलाव—वह मुसकराती हुई शर्म से नज़र नीची किए धीरे-धीरे आकर मेरा हाथ पकड़ेगी—तब तो उसे पाऊँगा मैं !

—आः ! धन्वतरि भैया, जी मेरा जुड़ा गया। लगा कि जी की परत-परत में दस-बीस इंद्रधनुष उग आये हैं।

मैंने उस दिन जी भरकर माँ को पुकारा। ऐसा लगा कि पिंगला ने जब इस तरह से सँपेरे-कुल का मान रखा है और नागो ठाकुर जैसा जोगी जब उसके छुटकारे की तलाश में निकला है, तो छुटकारा मिलेगा ही। उस दिन रात को मैंने सपना देखा। सपने में पिंगला को देखा। उसके हाथ में पदुम का फूल, जो फूल माँ विषहरी का था। हँसकर उसने मुझ से कहा, माँ ने मुझे मुक्ति दे दी, नागिनी कन्या को छुटकारा मिल गया, शबला दीदी ! मैं हड़बड़ाकर उठ बैठी। रात का अंतिम पहर—सन् सन्न, झींगुर की झीं-झीं से लग रहा था कि जगत में गीत गूँज रहा है, मेरा सँपेरा नींद में निढाल था; नागो ठाकुर एक पत्थर पर चित्त पड़ा था, उसके दोनों हाथ छाती पर रखे थे, नाक बज रही थी, जैसे सिंगा बजता है। जग रहा था सिर्फ सिरहाने के पास पिटारे में एक नाग, महानाग—

शंखचूड़। वह नागो ठाकुर की नाक के बजने से होड़ लेता हुआ गरज रहा था। वही साँप केवल मेरे सपने का साक्षी था। मैंने ठाकुर को जगाकर ब्योरा बताया। कहा, संताली जाकर तुम कहना कि नागिनी कन्या की मुक्ति हो गई, उसका देना चुक गया—यह नाग उसका साक्षी है।

मगर संताली के सँपेरों ने वह बात न मानी। गंगाराम शैतान का ही स्वरूप है, उसने नागो ठाकुर की छाती पर मुक्का मार दिया। नाग ने गवाही नहीं दी। आखिर नागो ठाकुर ने खुद तो सपना देखा नहीं था, इसीलिए वह माँ के आदेश के लिए चला आया। उसने पिंगला से कहा, मैं इस बात का सबूत ले आऊँगा कि तुम्हें मुक्ति मिल गई।

कन्या बोली—

शिवराम वैद उस बात को जानते हैं। ताड़ की कतारों से दोनों ओर घिरे राढ़ के आँके-बाँके रास्ते की ओर पिंगला ताकती रही। नागो ठाकुर आएगा—भैंसे या बैल, किसी पर सवार होकर। कब, किस दिन ?

राढ़ में एक और चंपानगर है, मालूम है ? है, है। बिहुला नदी के किनारे चंपानगर में बिपहरी की वेदी। नागपंचमी के दिन बिपहरी की पूजा होती है। गाँव की बहुएँ आज भी उस दिन ससुराल में नहीं रहतीं, उस दिन उन सबको मैके भेजने की व्यवस्था की जाती है। चंपानगर की बहुएँ बिहुला की सुहाग-रात की बात याद करके चंपानगर से चली जाती हैं। मैके जाकर मनसा देवी का उपवास रखती हैं, चंपानगर में मनसा देवी के दरबार में पूजा भेजती हैं।

नागो ठाकुर उसी चंपानगर को गया था। नागपंचमी करीब थी। उस दिन वहाँ देश-देश से साँपों के गुणी आते हैं।

नागो ठाकुर ने वहाँ धरना दिया। मन ही मन बोला—माँ, जो आदेश तुमने जोगन को दिया, वही आदेश मुझे दो। आदेश मिले बिना मैं यहाँ से नहीं उठने का, अन्न-पानी नहीं लेने का।

वहीं फिर शबला से उसकी भेंट हुई। शबला भी वहीं अपना व्रत समाप्त करेगी। मुक्ति मिली। दो ही तीर्थ परिक्रमा को बच रहे थे। बिहुला नदी के किनारे का चंपानगर और हिजल में बिपहरी मैया का पानी

पद्म का महल—जहाँ चाँद सौदागर की सात सामान भरी नावें छिपाई हुई थीं।

सताली के विष-वैद चंपानगर नहीं जाते। सो वह बिहुला नदी वाला चंपानगर हो कि रांगामाटी का चंपानगर। मूल सताली की कोई निशानी साबित नहीं रही—क्या देखने जाएँ? और, कौन-सा मुँह लेकर जाएँ? लेकिन शबला गई। उसे मुक्ति मिल गई। वह तो अब सताली की सँपेरिन रह नहीं गई थी!

नागो ठाकुर का वह वीर जैसा रूप उपवास से मुरझा आया था। लेकिन दोनों आँखें स्फटिक-सी चमकीली हो गई थीं। वह अपनी छाती पर हाथ रखे पत्थर पर सिर टेके स्थिर आँखों आसमान की ओर ताक रहा था। एक विशाल बरगद के नीचे लेटकर उसने धरना दे रखा था।

उसे देखकर शबला ने चकित होकर कहा—अरे ठाकुर!

ठाकुर चौंक उठा—जोगन!

—कहाँ है? पिंगला कहाँ है? बहन पिंगला, भागवती पिंगला?

—पिंगला को अभी तक पा नहीं सका हूँ। सबूत चाहिए।

—सबूत?

—हाँ, सबूत। सबूत लेकर जाऊँगा, गंगाराम की छाती पर मुक्का जमाऊँगा, उसके बाद'''। नागो ठाकुर हँसा। बोला—उसके बाद नागो ठाकुर और पिंगला—भैरव और भैरवी—घर बसाऊँगा, नया आश्रम।

—और नाग? नाग ने गवाही नहीं दी?

—नहीं।

—उसे तुमने कौन-सी सजा दी?—शबला की आँखें दहक उठीं।

—उसे मैं संताली में छोड़ आया। उसे सजा देनी चाहिए थी। उसका टेंटुआ पकड़कर सिर जुदा कर देना चाहिए था। लेकिन मेरी भूल, याद ही नहीं आया।

—पिंगला ने क्या कहा?

—वह मेरा इंतजार करेगी। उसने कहा, तुम मेरे छुटकारे का सबूत लेकर आओ। मैं तुम्हारी राह देखती रहूँगी।

—कर क्या रहे हो, ठाकुर? यह कर क्या रहे हो तुम? संताली की

या ने कहा कि वह तुम्हारी राह देखती रहेगी और तुम उसे
आए ? हाय रे, हाय अभागिन कन्या !
क्यों ? कहा क्या चाहती हो तुम ?
—वे लोग उसे जिंदा नहीं रहने देंगे।
—नहीं, नहीं। तुम्हें पता नहीं। वे दिन अब नहीं रहे। पिंगला को
देवी की तरह देखते हैं।
—मुझे पता नहीं और तुम्हें पता है, ठाकुर ? मैं आखिर कौन हूँ,
तूम है ? मैं हूँ पापिन नागिनी कन्या।

शवला दौड़कर विपहरी थान में गई और औंधी पड़ गई। कहा,
आदेश दो मैया, ठाकुर को आदेश दो। कन्या को तुम वचा लो। पिंगला
को वचा लो।

नागो ठाकुर जानता क्या है, जो पिंगला जानती है। देवी का आदेश
होने के वावजूद संताली सँपेरे क्या कन्या को छोड़ना चाहेंगे ? उनके जीवन
के सारे अनाचार, पाप, उच्छृंखलता में उस तपस्विनी कन्या का पुण्य ही
उनका सहारा है। वे वेफिक्र, वेखटके उसी अक्षय सत्य के भरोसे अनाचार
किए चलते हैं। वे भला उसे छुटकारा दे सकते हैं ? दे उसे देवी की तर
मानते हैं ? मानते हों शायद। शायद हो कि पिंगला को वह भक्ति मिल
हो। लेकिन जो देवी उन्हें छोड़कर चली जाएगी, या कि छोड़कर च
जाना चाहती है, उसे तो वे बाँधेंगे, मंदिर का दरवाजा वन्द करके जाने
राह रोक देंगे। नागो ठाकुर जानता क्या है ?

देवी विपहरी, आदेश दो, माँ।

आज वहुत दिनों के वाद शवला को लगा, वह वही नागिनी क
सामने विपहरी है, धरती डोल रही है; विपहरी के घट से साँपों
फन गायव होकर देवी के चेहरे पर जाग उठे हैं; हवा भारी
रही है, चारों ओर धुंधला हो रहा है, अपने को खोती जा रही है
पर देवी आ रही है। वह चीखने लगी, मेरी नागिनी कन्या को
छुटकारा दिला, छुड़ा। शवला थर-थर काँपने लगी। मूर्छित
पड़ी। उसका गिरना था कि नागो ठाकुर उछलकर खड़ा हो
छोड़कर—आदेश उसे मिल गया ! यही तो !

आखिर नागो ठाकुर समारोह के साथ संताली चला।

साथ में बीस जवान, हाथों में लाठी और भाले। खुद वह घोड़े पर सवार। साथ में एक बैलगाडी। चारेक बजनिए, उनके कंधे पर ढोल और तुरही। नागो ठाकुर के सिर पर रेशमी पाग, गले में फूल की माला। साथ में जो चेले-चपाटी थे, वे रास्ते के पेड़ों से तोड़-तोड़कर रोज ताजे फूलों की माला उसे पहनाते। शवला भी संग चल रही थी। नागो ठाकुर से वह मजाक कर रही थी। पिंगला की बहन जो ठहरी, उसकी साली!

नागो ठाकुर ब्याह करने जा रहा था। धूमधाम न होगी भला!

नाग पंचमी करीब थी।

नाग पंचमी की पूजा करने के बाद, तुरंत ही संताली के सँपेरे नावें लेकर निकल पड़ेंगे। देश-देशांतर में घूमते रहेंगे। साँप का जहर, साँस का तेल, बाघ की चर्बी, साहिल के काँटे—लोगे, लोगे जी!

उनके निकलने से पहले ही पहुँचना होगा, पहले ही।

जन्माष्टमी कब की जा चुकी। अमावस्या बीती। आसमान में दूज का चाँद निकला। चारों ओर धानों के लहराते खेत। आसमान में मेघों के टुकड़े तिरते चल रहे थे। रास्ते में जब-तब यह बारात रुकती। नागो ठाकुर पुकार उठता—अबे, रुक जा। मादो में ब्याह है, नागो ठाकुर का ब्याह। दखिनी नाग-कन्या के उद्धार के लिए भैरव जा रहा है। यह क्या कोई मामूली ब्याह है! ले-ले, खा-पी सब।

गाड़ी से चावल-दाल, सूखी लकड़ियाँ उतरतीं। बोतल की बोतल शराब। भैरव के संगी दैत्य-दानव, पी? बजा बाजा। नाच, सब नाच।

कल नाग पंचमी है।

चौथ के सवेरे, धान भरे खेतों के किनारे, ताड़ की कतारों की फाँक से संताली बस्ती नजर आयी। आसमान में वह, वहाँ, हजारों हजार चिड़ियाँ। गगनभेरी पंछी, बड़ी-बड़ी बतखें अभी नहीं आयी हैं। वह रहा झाऊवन। उसकी गोद में संताली का घासवन हवा में हिल रहा है। हरियाली के समुद्र में लहरें उठ रही हों मानो। मैदान में टेढ़े-मेढ़े बबूलों पर पीले फूल फूले हैं। कहीं-कहीं पटुए की खेती की है किसानों ने। पीले फूलों ने हरे खेतों को जगमगा दिया है।

रे आसमान के पीले तारों के फूल खिले हैं।
—नगाड़ा पीट, फूँक सिंगा।
नगाड़े वज उठे। अजीव सुर में सिंगे चीख उठे।
—अवे ओ, लगा हाँक, हाँक लगा।
वीस-पचीस जवान चीख उठे—आ···वा···वा···वा !
—जय, वावा ठाकुर की जय !
वारात संताली वस्ती के किनारे पहुँची। राह यहाँ सँकरी थी
लेकिन शवला के आचरण का ठिकाना नहीं था।
आज चौथ है, कल पंचमी। विपहरी की पूजा। मगर वाजे कहाँ वज
रहे हैं ? चिमटे के कड़े, वीन ? कहाँ वज रहे हैं यह सव ?
नगाड़े की चोट सुनकर सँपेरे चकित हो घर से वाहर निकल आए।
मगर उनमें उल्लास कहाँ ?
नागो ठाकुर ने आवाज दी—पिंगला। मैं आ गया। हुकुम ले आय
हूँ—ले आया हूँ सवूत। अवे ओ जवानो, सवूत पेश करो।
वीस-वीस जवान कलेजे के जोर से गरजे—आ···वा···वा···वा
वह हुंकार दिगदिगंत में, गंगातट के दूर-दूर तक फैले खेतों में
गई—हिजल विल में लहरें उठीं, पंछियों की टोली कलरव करके ह
हजार डैनों की आवाज उठाती हुई ऊपर उड़ गई।
सँपेरों की टोली सामने आयी। सवसे आगे था भादो। सवके
चिमटा। नागो ठाकुर उछलकर घोड़े से उतरा। वोला—मैं सवूत ले
हूँ। कहाँ है, पिंगला कहाँ है ?
भादो के होंठ काँपने लगे—नहीं है। पिंगला नहीं है।
—पिंगला नहीं है ?
—नहीं। वह चली गई। तुम कालनाग ले आए थे। सहज
पहले, नागपक्ष के पहले दिन वह उसी के विख से चली गई। प्रतिप
वह शीर्ण तपस्विनी-सी आकर खड़ी हुई। वोली, सभी सँपेरों क
सँपेरे आए। जाने कन्या क्या आदेश देगी ? तपस्विनी जैसी
में उन लोगों ने साक्षात नागिनी-कन्या के दर्शन पाए थे।
कन्या वोली—सरदार सँपेरा कहाँ है ?

उठ रही थी। पिंगला पीड़ा-कातर स्वर में प्रार्थना कर रही थी—माँ, मुझे छुटकारा दे, छुटकारा !

भादो ने लात मारकर दरवाजे को तोड़ दिया। पिंगला फर्श पर पड़ी थी और नाग बार-बार उसकी छाती पर चोट कर रहा था। पिंगला ने कहा, होशियारी से भादो मामा, साँप के जहर के दाँत तोड़े नहीं हैं।

गंगाराम पीछे हट आया। चिमटे से साँप की गरदन दबाकर भादो उसे बाहर निकाल लाया। पिंगला हँसी।

खौफनाक भादो—उसने चिमटे से ही साँप का काम तमाम कर दिया। पिंगला भी चली गई। जाते-जाते वह कह गई—ठाकुर ने गलत नहीं सुना था, गलत नहीं कहा था, मुक्ति का हुकुम आया था। यह नाग ही वह हुक्मनामा था।

फिर ? फिर क्या ? संताली बस्ती दिन में ही अँधेरी···

नागपक्ष में बस्ती में उदासी···

नई नागिनी-कन्या का आविर्भाव नहीं हुआ। साक्षात् देवी-सी पिंगला नहीं रही। इसी से चिमटा नहीं बज रहा है, नगाड़ा नहीं बज रहा है, बीन नहीं बज रही है। आकाश-बातास में हाय-हाय की ध्वनि गूंज रही है।

झाऊ के जंगल की हवा को सुनो, हिजल बिल की कल-कल ध्वनि सुनो—हाय, हाय !

अचानक ही नागो ठाकुर दानव जैसा चीत्कार कर उठा—आ···!

दोनों हाथों वह छाती पीटने लगा।

एक छोटा-सा लड़का दौड़ा आया—अरे, सरदार सँपेरा दौड़ रहा है। घर की तरफ भागा जा रहा है।

—ऍं! भागा ?—छाती पीटना छोड़कर नागो ठाकुर दाँत पीसकर खड़ा हो गया। उसके बाद चीखा—मेरा मुक्का !

नागो ठाकुर दौड़ा। पीछे-पीछे कई चेले दौड़े।

गंगाराम बेतहाशा दौड़ रहा था, जान लिये भाग रहा था।

उसके पीछे पागल-सा दौड़ रहा था नागो ठाकुर, हाथ बढ़ाए, चीखते हुए। हंगरमुखी नाले के किनारे भयंकर आवाज के साथ नागो ठाकुर गंगाराम पर कूद पड़ा। दोनों एक-दूसरे को जकड़े नरम माटी पर गिर पड़े।

गंगाराम धूर्त था, चालाक। लेकिन नागो ठाकुर था पागल हुआ शेर। दो-एक बार दोनों ऊपर-नीचे होते रहे। आखिर नागो ठाकुर उसकी छाती पर सवार हो गया और कसकर एक मुक्का जमाया। गंगाराम के मुँह से चीख निकली और बोली बन्द हो गई।

मगर इतने पर भी नागो ठाकुर ने पिंड नहीं छोड़ा। छाती पर एक मुक्का और जमाया। उसके बाद घसीटकर उसे बस्ती की कचहरी चौक में ले आया। गंगाराम के मुँह में लहू उबल रहा था। होंठों के किनारे से बलबला-कर लहू निकल रहा था। उसे सबके सामने पटककर नागो ठाकुर रोने लगा।

तमाम दिन रोता रहा। बच्चे-सा रोता रहा।

साँझ के बाद शराब पीकर वह चीखने लगा। गंगा के किनारे-किनारे चक्कर काटने लगा। कन्या! पिगला!

शबला अब रो पड़ी। बोली—गाँव के कुछ लोगों ने गंगाराम को दफ़ना दिया। नागो ठाकुर ने मुक्का क्या मारा था, उफ़! उसका कलेजा शायद फट गया था। जैसा पाप, वैसी सजा! उसने अन्त समय में नागो से कहा था, मुझे उचित ही सजा मिली, भाई। पिगला के मरने के बाद से मुझे यही डर लग रहा था। मरते वक्त तुझे मैं अपने पाप की कहानी कह जाऊँ।— पिगला को उसने वश में करना चाहा था। महापाप की ख्वाहिश से उसे अपने जादू के जाल में फँसाना चाहा था।

गंगाराम करैत साँप-सा चालाक था। जादूगर और डाकिनी-सिद्ध गंगाराम की कुटिल बुद्धि कल्पनातीत थी। शिवराम कविराज सुनकर ही तो अवाक रह गया। मैं कविराज ठहरा, पिगला के शरीर से चम्पा फूल की महक उठने की बात सुनकर मैंने सोचा था, यह उसके बाप [illegible] का भ्रम है, मानसिक विश्वास का विकार है। लेकिन नहीं। गंगाराम ने जादू-विद्या सीखी थी। और उसकी बुद्धि बड़ी तीखी थी। स्वभाव से वह व्यभिचारी था। पिगला पर उसकी पाप की नजर थी। किसी भी प्रकार से उसे अपने वश में जब नहीं ला पाया, तो उसने एक बड़ा घिनौना उपाय निकाला। उसने पिगला के मन में एक विश्वास जमाया कि उसके शरीर से चम्पा की महक निकलती।

र पागल-सी हो पिंगला किसी दिन रात को निकल पड़ेगी, या कि
चाहेगी। वह भागना चाहती तो वही उसे भगा ले जाता। दवा
ी सामग्रियाँ लाने के लिए वह मुर्शिदाबाद जाया करता था। वहाँ
चंपा का खुशबूदार अर्क ले आया था। रोज ही आधी रात को जा-
ह पिंगला के घर के पास वह अर्क छिड़क देता। अजीब हँसी हँसकर
हिलाते हुए शबला ने कहा—हाय रे!
पिंगला के मन को समझने की शक्ति गंगाराम में न थी। मजाल क्या
। शबला गरदन डुलाकर बोली—और उसीको क्या दोष दूँ, धरम भाई?
दैत्य की बेटी, जलंधर की पत्नी को छलने में देवता को भी भ्रम हुआ
। गंगाराम का क्या कसूर!

मरते वक्त गंगाराम ने सारा दोष कबूल किया था। अन्त में उसने कहा
था—नागो ठाकुर ठीक ही समाचार लाया था, कन्या ने ठीक ही किया
था। हम लोगों के पाप से नाराज होकर विषहरी ने कन्या को छुटकारा दे
दिया। और, पिंगला जिस ढंग से गई, उसके बाद भी क्या कन्या आएगी?
नहीं आएगी कन्या, कन्या नहीं आएगी।

शबला ने कहा—सबसे बड़ा दुःख, भैया···

सबसे बड़ा दुःख यह कि नागो ठाकुर के चेले-चाटियों ने पीकर आधी
रात को संताली में आग लगा दी, बड़ा जुल्म ढाया, मनसा का घट छीन लिया
भादो, लोटन—ये सब कुछ लोग संताली छोड़कर जाने किस जंग